सोमसी

अक्तूबर—दिसम्बर, 1983

स्व० लाल चन्द प्रार्थी स्मृति ग्रंक

हिमाचल कला, संस्कृति और भाषा अकादमी शिमला

भूतपूर्व प्रधान मन्त्री पं. जवाहर लाल नेहरू के
साथ स्व. लाल चन्द प्रार्थी
कुल्लू के नर्तकदल सहित

सोमसी

हिमाचल कला–संस्कृति–भाषा अकादमी
की त्रैमासिक पत्रिका

वर्ष ६	अक्तूबर-दिसम्बर, १९८३	अंक ४
मुख्य सम्पादक, वीर भद्र सिंह अध्यक्ष अकादमी, सम्पादक मौलूराम ठाकुर उप सम्पादक सरोज सांख्यान	३६	जनवरी, अप्रैल, जुलाई तथा अक्तूबर में प्रकाश्य लेखक के विचारों तथा दिए गए तथ्यों से सम्पादक की सहमति आवश्यक नहीं ।

वार्षिक चन्दा १२ रूपये

एक प्रति ३ रूपये

प्राप्ति स्थान :

हिमाचल कला–संस्कृति–भाषा अकादमी

क्लिफ-एन-एस्टेट, शिमला-१७१००१

विषयानुक्रमणिका

क्र. सं.	लेख	लेखक	पृष्ठ
१.	श्री लाल चन्द प्रार्थी-एक बहुपक्षीय व्यक्तित्व	डॉ. पद्म चन्द काश्यप	१
२.	प्रार्थी जी की कुछ यादें	श्री बिहारी लाल बहार कुल्लवी	४
३.	राज ऋषि लाल चन्द प्रार्थी	श्री चन्द्रमणि वशिष्ठ	१३
४.	स्वर्गीय श्री लाल चन्द प्रार्थी कुछ जीवन झांकियां	श्री चन्द्र शेखर बेबस	१५
५.	लाल चन्द प्रार्थी : एक राजनीतिज्ञ : एक कलाकार	श्री हरिराम जसटा	२०
६.	स्वर्गीय श्री लाल चन्द प्रार्थी 'चांद कुल्लवी' एक संस्मरण	श्री सत्य प्रकाश ठाकुर	२४
७.	'चांद,' जो कभी न होगा मांद	श्री मनोहर सागर पालमपुरी	२७
८.	लाल चन्द प्रार्थी 'चांद कुल्लवी'	श्री खेमराज गुप्त 'सागर'	३१
९.	लाल चंद—दुखा सुखा रा माणहू	प्रो० चन्द्रवर्कर	३५
१०.	प्रार्थी जी—साहित्यकार और कलाकार के रुप में	श्री मौलूराम ठाकुर	४०
११.	श्री लाल चन्द प्रार्थी 'चांद कुल्लवी'	श्री विष्णु शर्मा	५०
१२.	श्री प्रार्थी सच्चे अर्थों में पहाड़ी थे	डॉ. प्रत्युष गुलेरी	५४
१३.	तुम ही सो गए दास्तां कहते कहते	श्री प्रेम पखरोलवी	५६
१४.	कौन-कौन से स्वर्गीय श्री लाल चन्द प्रार्थी का एक संस्मरण	श्री चन्द्रकान्त	६४
१५.	कितनी जल्दी मुलाकातें यादें बन गई	श्री काहन सिंह जमाल	६८
१६.	एक संक्षिप्त परिचय चांद कुल्लवी और उनकी शायरी	श्री धर्मपाल आक़िल	७३
१७.	श्रद्धांजली	श्री रमाचरण पराशर	७६
१८.	पीले पत्ते और पतझड़	श्री सुदर्शन वशिष्ठ	७८
१९.	पैदा कहां है ऐसे—'चांद' कुल्लवी से एक अन्तरंग बातचीत	श्री प्रेम कुमार 'नज़र'	८३

क्र. सं.	लेख	लेखक	पृष्ठ
२०.	बहुमुखी प्रतिभा के स्वामी-लाल चन्द प्रार्थी	श्री मंगल चन्द ठाकुर	९१
२१.	लाल चन्द प्रार्थी-क्या थे-क्या नहीं थे	श्री चेत राम वर्मा	९८
२२.	शेरे कुल्लू श्री लाल चन्द प्रार्थी	श्री नरेन्द्र कुमार	१०२
२३.	अज़ीम शायर, अज़ीम इनसान	श्री शबाब ललित	१०५
२४.	लाल चन्द प्रार्थी-एक जीवन्त व्यक्तित्व	डॉ. बंशी राम शर्मा	११२
२५.	कलाकारों को तलाशता कलापारखी	श्री ओम सुजानपुरी	११७
२६.	गुलहाए अकीदत	कंवर अभय राज सिंह 'शाद'	११८
२७.	कौखे राहुआ प्रार्थी महारा	श्री इन्द्र देव शर्मा शास्त्री	११९
२८.	पुस्तकसमीक्षा-अगर शामिल न हो किस्सा हमारा	श्री तुलसी रमण	१२४
२९.	पुस्तक-समीक्षा	श्री बलजिन्नाथ पण्डित	१२६
३०.	हिमाचली सुरम्य धरती की गुण-मूर्ति, स्वर्गीय श्री लाल चन्द प्रार्थी-कुछ संस्मरण	श्री सुरेंद्र नाथ वर्मा	१२८
३१	स्व. श्री लाल चन्द प्रार्थी मेरी नज़र में	प्रो. नारायण चन्द पराशर	१३२
३२.	हिमाचल प्रदेश के धन्वन्तरि स्व. लाल चन्द प्रार्थी	श्री घनी शर्मा	१३५
३३.	संस्मरण-मूर्तिकार की दृष्टि में प्रार्थी जी	प्रो. एम. सी. सक्सेना	१३७
३४.	प्रार्थी जी बहुमुखी प्रतिभा के स्वामी थे	श्री ईश्वर दत्त बाली	१४०
३५.	श्री लाल चन्द प्रार्थी जी	श्री लोकनाथ मिश्रा	१४२
३६.	एक सुपना-एक सच्चाई	श्री लाल चन्द प्रार्थी	१४५

लेखकों से निवेदन

हिमाचल संस्कृति, भाषा एवम् कला सम्बन्धी विषयों पर सोमसी में प्रकाशनार्थ रचनाएं निम्न पते पर भेजें।

सम्पादक 'सोमसी'
हिमाचल कला, संस्कृति
और भाषा अकादमी,
क्लिफ एण्ड एस्टेट,
शिमला-१७१००१

मुख्य मन्त्री,
हिमाचल प्रदेश,
शिमला-१७१००२

संदेश

मुझे यह जानकर अत्यधिक प्रसन्नता हुई कि "सोमसी" का एक विशेषांक स्वर्गीय श्री लाल चन्द प्रार्थी जी की स्मृति में प्रकाशित किया जा रहा है।

राज्य पुनर्गठन के फलस्वरुप जहां पंजाब के पहाड़ी क्षेत्र हिमाचल में सम्मिलित हुए, वहीं प्रदेश के साहित्यिक एवं सांस्कृतिक परिवेश का भी विस्तार हुआ और इसी प्रक्रिया में हमें प्रार्थी जी जैसा व्यक्तित्व मिला।

प्रार्थी जी देश भक्त, लोक संगीत प्रेमी, लेखक तथा कवि थे। उन्होंने हिमाचल के सांस्कृतिक जीवन में नयी प्रेरणा जगाई तथा पहाड़ी-भाषा और साहित्य के लिए अनथक कार्य किया। वह हिमाचल मन्त्रिमन्डल के सदस्य के रूप में जितने लोकप्रिय थे, साहित्यिक क्षेत्र में उससे कम लोकप्रिय नहीं थे।

प्रदेश में भाषा विभाग की तथा फिर अकादमी की स्थापना में उनकी सूझबूझ और लग्न पृष्ठभूमि में रही है और यह उचित ही है कि अकादमी द्वारा प्रकाशित पत्रिका "सोमसी" का विशेषांक उनकी स्मृति में निकाला जा रहा है।

विशेषांक के लिए मेरी हार्दिक शुभ कामनाएं हैं।

हस्ता/- वीरभद्र सिंह
मुख्य मन्त्री
हिमाचल प्रदेश

ग़ज़ल

-- लालचन्द प्रार्थी, 'चांद' कुल्लवो

ख़ुशी की बात मुकद्दर से दूर है बाबा,
कहीं निज़ाम में कोई फतूर है बाबा।
भरी बहार में बैठे हैं हम अलम-ब-किनार,
तू ही बता कि यह किस का कसूर है बाबा।

शिकस्ता जाम लिए यूं खड़ा हूं मैहशर में,
कि लोग देखें यह मये का गरूर है बाबा।
घटायें पी के भी सहरा की प्यास रखता हूं,
न जाने तशनगी में क्या सरूर है बाबा।

जो सो रहा है लिपट कर अनाके दामन से,
जगा के देख यह मेरा शऊर है बाबा।
तेरी निगाह में जलवा जो एक देख लिया,
मेरे लिए वही इसरारे तूर है बाबा।

मये-निशात में देखा है झूम कर बरसों,
मये अलम में भी देखो सरूर है बाबा।
तेरी पकड़ भी तखैउल के बस का रोग नहीं,
तुझे समझना तॅसव्वर से दूर है बाबा।

तेरा तनूह, तेरा हुसन, तेरा अकसे जमील,
ढला हुआ कोई साँचे में नूर है बाबा।
कभी तो कोई इसे जोड़ पायेगा शायर,
अभी तो शीशा ये दिल चूर-चूर है बाबा।

नमूदे नौ हैं तेरे ही तसव्वराते हसीं,
तेरा ख्याल विनाये शऊर है बाबा।
मेरा बजूद तेरे शौक का नतीजा है,
इसी लिये तो यह साये से दूर है बाबा।
छुपा-छुपा के मैं रखूं इसे कहाँ-ऐ! 'चाँद',
मनाहे जिन्दगी पेशे हजूर है बाबा।

मुख्य मन्त्री,
हिमाचल प्रदेश,
शिमला-१७१००२

संदेश

मुझे यह जानकर अत्यधिक प्रसन्नता हुई कि "सोमसी" का एक विशेषांक स्वर्गीय श्री लाल चन्द प्रार्थी जी की स्मृति में प्रकाशित किया जा रहा है।

राज्य पुनर्गठन के फलस्वरुप जहां पंजाब के पहाड़ी क्षेत्र हिमाचल में सम्मिलित हुए, वहीं प्रदेश के साहित्यिक एवं सांस्कृतिक परिवेश का भी विस्तार हुआ और इसी प्रक्रिया में हमें प्रार्थी जी जैसा व्यक्तित्व मिला।

प्रार्थी जी देश भक्त, लोक संगीत प्रेमी, लेखक तथा कवि थे। उन्होंने हिमाचल के सांस्कृतिक जीवन में नयी प्रेरणा जगाई तथा पहाड़ी-भाषा और साहित्य के लिए अनथक कार्य किया। वह हिमाचल मात्रिमन्डल के सदस्य के रूप में जितने लोकप्रिय थे, साहित्यिक क्षेत्र में उससे कम लोकप्रिय नहीं थे।

प्रदेश में भाषा विभाग की तथा फिर अकादमी की स्थापना में उनकी सूझबूझ और लग्न पृष्ठभूमि में रही है और यह उचित ही है कि अकादमी द्वारा प्रकाशित पत्रिका "सोमसी" का विशेषाँक उनकी स्मृति में निकाला जा रहा है।

विशेषाँक के लिए मेरी हार्दिक शुभ कामनाएं हैं।

हस्ता/- वीरभद्र सिंह
मुख्य मन्त्री
हिमाचल प्रदेश

ग़ज़ल

-- लालचन्द प्रार्थी, 'चांद' कुल्लवी

ख़ुशी की बात मुक़द्दर से दूर है बाबा,
कहीं निज़ाम में कोई फ़तूर है बाबा ।
भरी बहार में बैठे हैं हम अलम-ब-किनार,
तू ही बता कि यह किस का कसूर है बाबा ।

शिकस्ता जाम लिए यूं खड़ा हूं महशर में,
कि लोग देखें यह मये का गरूर है बाबा ।
घटायें पी के भी सहरा की प्यास रखता हूं,
न जाने तशनगी में क्या सरूर है बाबा ।

जो सो रहा है लिपट कर अनाके दामन से,
जगा के देख यह मेरा शऊर है बाबा ।
तेरी निगाह में जलवा जो एक देख लिया,
मेरे लिए वही इसरारे तूर है बाबा ।

मये-निशात में देखा है झूम कर बरसों,
मये अलम में भी देखो सरूर है बाबा ।
तेरी पकड़ भी तखैउल के बस का रोग नहा,
तुझे समझना तॅसव्वर से दूर है बाबा ।

तेरा तनूह, तेरा हुसन, तेरा अकसे जमील,
ढला हुआ कोई सांचे में नूर है बाबा ।
कभी तो कोई इसे जोड़ पायेगा शायर,
अभी तो शीशा ये दिल चूर-चूर है बाबा ।

नमूदे नौ हैं तेरे ही तसव्वराते हसीं,
तेरा ख्याल विनाये शऊर है बाबा ।
मेरा वजूद तेरे शौक का नतीजा है,
इसी लिये तो यह साये से दूर है बाबा ।

छुपा-छुपा के मैं रखूं इसे कहाँ-ऐ! 'चाँद',
मनाहे जिन्दगी पेशे हजूर है बाबा ।

मन्त्री
हिमाचल प्रदेश
शिमला-१७१००२

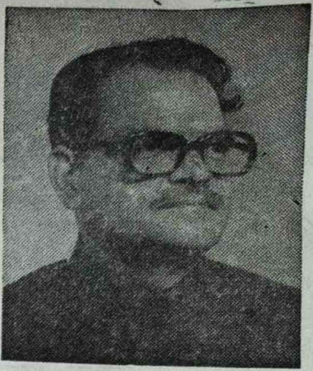

संदेश

हिमाचल प्रदेश के भूतपूर्व मन्त्री तथा पर्वतीय संस्कृत के प्रेमी स्वर्गीय लालचन्द प्रार्थी जी की पुनीत स्मृति में "सोमसी" का विशेषांक निकालने का हिमाचल कला, संस्कृति एवं भाषा अकादमी का निश्चय श्लाघनीय है। प्रार्थी जी इस संस्था के प्रथम अध्यक्ष ही नहीं बल्कि इसके सूत्रधार थे।

प्रार्थी जी की प्रतिभा-बहुमुखी थी। वह स्वतन्त्रता-सेनानी, लोकप्रिय नेता, पत्रकार, प्रभावी वक्ता, कलाप्रेमी और शायर थे। उन्होंने प्रदेश के साहित्यकारों-कलाकारों के साथ उठ-बैठ कर, उनमें घुलमिल कर उनमें सृजनरत रहने की प्रेरणा दी और पहाड़ी-भाषा के विकास में उनका सहयोग सुनिश्चित बनाया।

मुझे उनके सानिध्य में रहने का अवसर मिला है। उनका आत्मीयता-पूर्ण व्यवहार तो कोई भी नहीं भुला सकता। विशेषांक के माध्यम से उनके व्यक्तित्व के विभिन्न आयाम प्रकाश में आ सकेंगे।

मैं इस आयोजन के लिए अकादमी को अपनी शुभकामनाएं भेजता हूं।

हस्ता/- सुखराम
लोक निर्माण मन्त्री
हिमाचल प्रदेश

ग़ज़ल

-- लालचन्द प्रार्थी, 'चांद' कुल्लवी

मरकज़े रंजो अलम हो जैसे,
ज़िन्दगी विरसये ग़म हो जैसे ।
याद आती है तो सहमी-सहमी,
यह कोई दिल का भ्रम हो जैसे ।

दीद का हुसने तकल्लुभ तौबा,
इक लवे गोया गर्म हो जैसे ।
खन्दा ज़ॅन दिल हैं ग़मे हासिल पर,
ज़िन्दगी हासिले ग़म हो जैसे ।

बूंद शबनम की गुले नरगिस पर,
हसरते दीरा-ए-नम हो जैसे ।
तेरे अबरू की यह टेढ़ी सी लकीर,
मेरी तकद्दीर का खम हो जैसे ।

यूं गर मरते हैं रैहे उलफत से,
रैह गुज़र राहे-अदम हो जैसे ।
यूं लगे है तेरे कूचे का ख्याल,
वादिये दैरो हरम हो जैसे ।

हम ने पूजा है तुम्हें बे मतलब,
कोई पत्थर का सनम हो जैसे ।
'चांद' को प्यार ने यूं देख लिया,
सौ उमीदों का जन्म हो जैसे ।

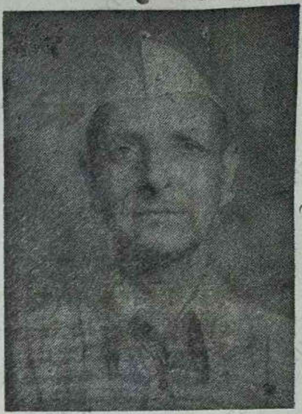

मन्त्री
हिमाचल प्रदेश,
शिमला-१७१००२

संदेश

हिमाचल कला, संस्कृति और भाषा अकादमी स्वर्गीय लाल चन्द प्रार्थी जी की पुण्य स्मृति में "सोमसी" पत्रिका का विशेषांक प्रकाशित करने जा रही है, यह जान कर मुझे अत्यधिक प्रसन्नता हुई है।

हिमाचल प्रदेश में साहित्यिक एवं सांस्कृतिक गतिविधियों को दिशा देने में प्रार्थी जी की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। वह स्वयं कवि, लेखक एवं पत्रकार होने के अतिरिक्त कला और संगीत के जीवन्त सम्पोषक भी थे।

प्रदेश का बुद्धिजीवी वर्ग उनकी रसिकता तथा उनके संवेदनशील कलाकार मन की खूबियों को सदा स्मरण करता रहेगा।

मुझे विश्वास है कि प्रस्तावित विशेषांक प्रार्थी जी के व्यक्तित्व तथा कृतित्व के प्रति आत्मीय श्रद्धांजली के रूप में तो संग्रहणीय होगा ही, नयी पीढ़ी के लिए उत्प्रेरक भी होगा।

मेरी हार्दिक शुभ कामनाएं ग्रहण करें।

हस्ता/- सन्त राम
ग्रामीण विकास मन्त्री
हिमाचल प्रदेश

चंदे री जिंदड़ी

-- श्री लाल चन्द प्रार्थी

फ़कै री जिंदड़ी, काया नमाणी,
मौरना, जोणा सा केथ पराणी ।

झूरी की बैठी जै धाउड़ी बौता,
लानी नीं, लाई ता पूंघा पजानी ।

झूरी रा जैलभ ओगी री लूपी,
झूरी रा भेटिणा अम्बर पाणी ।

देऊ ता देउसी, महाणू री बोलो,
बूझूई नहीसी फियाड़ी नजाणो ।

छाती री जौलनी, दाह, दुआसी,
हौछी न पाणी सा तेरी नशाणी ।

बाहम्नूं झूरी रा माण्हू सा जेंढ़ा,
फिरदा घौरठ, ढूणदा पाणी ।

विधिरा लिखा लपोचोदा नांई,
अकल बाणा सा सींधी सियाणी ।

भूरी सा ईशर केरी जै जाणी,
शोभ सा पौतरू पांघला पाणी ।

भोलें संसारा न केतरै जीणा,
जोंआ न केतरं जान बचाणी ।

मुछिणा कैबकी लोहुऐ माटा,
विपता एण्डी बी एजिआ जाणी ।

पौतर डुबणे तौरनो शीला,
जुगा रा घरम देउऐ री बाणी ।
चन्दैरी जिदड़ी भूल भलेखा,
सुपना चुटना रात भयाणी ।

मन्त्री
हिमाचल प्रदेश,
शिमला-१७१००२

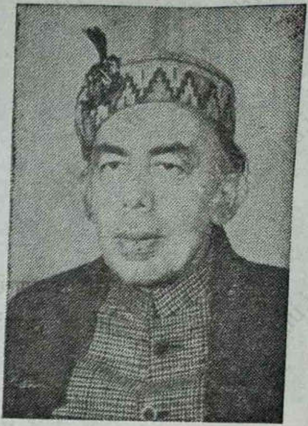

संदेश

श्री लाल चन्द प्रार्थी 'चांद कुलवी' हिमाचल प्रदेश के उन राजनीतियों में से एक थे जिन्होंने प्रदेश के प्रशासन एवं जन-जीवन पर गहरी छाप छोड़ी है। प्रार्थी जी न केवल सफल राजनीतिज्ञ ही थे, बल्कि कुशल प्रशासक, उच्च कोटि के साहित्यकार, कलाकार एवं शायर भी थे। लोक कलाओं के प्रति उनकी पूर्ण प्रतिबद्धता थी। लोक संस्कृति एवं लोक मानस से जुड़े रहना उन्हें बहुत पसन्द था। एक मन्त्री और हिमाचल कला, संस्कृति एवं भाषा अकादमी के अध्यक्ष के रूप में उन्होंने प्रदेश की लोक संस्कृति को कई नये आयाम प्रदान किये हैं। उनका उर्दू कलाम सारे देश के उर्दू प्रेमियों द्वारा सराहा गया है। प्रार्थी जी बेहद खुशमिज़ाज इन्सान थे। जिस भी महफिल या बज्म में वे शामिल होते उसी की रौनक बन जाते थे।

हस्ता/-गुमान सिंह चौहान
कृषि मन्त्री
हिमाचल प्रदेश

tharahkardu.in

कविता

--लाल चन्द प्रार्थी 'चांद'

हिमत केरिया आपणे देशा री, बिगड़ी दशा सुआरनी आसा ।
हौखुड़ मीटिया, टुम्बले पौड़िया, बेशिया गप्पा नी मारनी आसा ।

तालै वालै सेभ जाचा बे नेणिये, घौरा नी फेरिया आणदे कोई,
बौता कबौता रे फेर फियाड़ने, जीतीदी बाज़ी नी हारनी आसा ।

जुगे रे बेइरी मितर बोणिया, लुटदे रौहे, लपोचदे लागै,
एबे नी सोइंदा बौलद बेचिया, एतरी गल बचारनी आसा ।

बूझिया आसा बे माड़े नमाड़े, टोपी नी शिरा न टीकणे धीनी,
देउआ सी देबी रे गाभरू, आबरू एंडे नी एबे पतारनी आसा ।

सुख नी बोलिया उथड़े हौंढणा, दुख नी बोलिया रोणा कलाणा,
जेतरी आपणे पाले न चादर, तैतरी जौंघा पसारनी आसा ।

हिमाचल प्रदेश

मन्त्री
हिमाचल प्रदेश
शिमला-१७१००२

संदेश

स्वर्गीय श्री लाल चन्द प्रार्थी प्रदेश के एक लोकप्रिय नेता ही नहीं थे, एक यशस्वी साहित्यकार भी थे। पहाड़ी भाषा के उत्थान तथा लोक-साहित्य को प्रोत्साहित करने में उनका बड़ा योगदान रहा है।

मेरी ओर से उन्हें श्रद्धांजलि।

हस्ता/- शिव कुमार उपमन्यु
राजस्व मन्त्री हि०प्र०

नार कि कटार थिया

-- लाल चन्द प्रार्थी 'चांद'

मनू री मनाली देखो, थीपू लौंगा वाली देखो ।
ठोडी तिल्ले आली देखी, बधिया शंगार थिया ।।

गोखड़ू कनबीचे कण्ठी कांगणु सजाई केरी ।
फूलदार पट्टू बान्हीं, गले चन्दरहार थिया ।।

चाल टेढ़ी मेढ़ी जे जलेबी जाण पाकुली ।
थम्मी जाओ जबे लग्गे बूटड़ी दयार थिया ।।

इंहां मटकोए मचकोए मड़ी मूहें फेरी ।
झण-झण जाय जिहां बज्जदी सतार थिया ।।

एकी एकी हाखड़ू रा मुल्ल लख लख हुंगा ।
दाड़ूआ रे दाणें साहीं दंदा री कतार थिया ।।

लौंग लशकारे मारे हथा रे इशारे सारे ।
इंहां लगे जिहां कोई बिजली री तार थिया ।।

खाखड़ू गुलाबी होठ पतले उनाबी बांके ।
हेरने रा रग ढंग तीर तलुआर थिया ।।

होश मैं गुआई बैठा रोश करा कुदे कन्ने ।
बोलूआं मैं बिजली, पर लोक बोलां नार थिया ।।

एह गई ओह गई बढदी ई चली गई ।
समझे नी आई 'चन्दा' नार कि कटार थिया ।।

मन्त्री
हिमाचल प्रदेश
शिमला-१७१००२

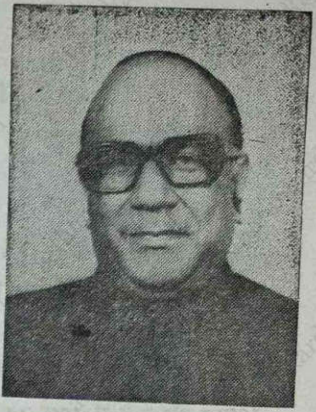

संदेश

मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई कि हिमाचल अकादमी द्वारा अपनी पत्रिका "सोमसी" का स्व. लालचन्द प्रार्थी की स्मृति में विशेषांक प्रकाशित किया जा रहा है। स्व. प्रार्थी जी प्रदेश की भाषा, संस्कृति तथा आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति के संरक्षण एवं विकास के लिए आजीवन जूझते रहे। उन्होंने इन कार्यों को एक तरह से अपने जीवन का ध्येय बना लिया था। पहाड़ी भाषा और संस्कृति के आधार पर प्रदेश के गठन के मूल चिन्तन में प्रार्थी जी हमेशा पक्षधर रहे। राजनीति में रह कर भी उन्होंने अपने ध्येय को निरन्तर पाला-पोषा और प्रदेश के संस्कृति प्रेमियों को साथ ले कर अपनी भाषा, कला और संस्कृति के संरक्षण व विकास का एक आन्दोलन छेड़ रखा था। इस कार्य में उन्हें सफलता भी मिली और जो कार्य वे अधूरा छोड़ गए हैं उसे समय के साथ आगे बढ़ाना होगा।

सोमसी का यह बिशेषांक उनके कार्यों और शायर मिज़ाज व्यक्तित्व का सही मूल्यांकन कर सकेगा और स्मृति कायम करेगा, ऐसी मेरी कामना है।

हस्ता/- सत महाजन
परिवहन मन्त्री हि०प्र०

ग़ज़ल

-- लाल चन्द प्रार्थी 'चांद' कुल्लवी

ज़ख़्मे एहसास तलबगारे मद्दावा तो नहीं,
यह ख़लिश वह है जिसे शौक़े तमाशा तो नहीं ?

कौन से रंजो-अलम ढूंढते फिरते हैं मुझे ?
अपने ग़म ख़ाने का देखूं कोई दर वा तो नहीं ?

राह रवे राहे मुहब्बत यह पता कर लेता,
कोई सच्च-मुच ही तड़पता है दिखावा तो नहीं ?

रू बरू हो के भी यह जीस्त से दूरी कैसी ?
इस तफ़ावुत का सबब सांस का परदा तो नहीं ?

इक नशतर सा जो चुभता हर इक सांस के साथ,
कोई ज़िर्राह रगे जां में समाया तो नहीं ?

यह न हो शहरे ख़मोशां में बदल जाये जहां।
जो उबलता है ख्यालात में लावा तो नहीं ?

दामने सिदको वफ़ा पर है लहु के छींटें,
डर रहा हूं यह कहीं फ़ितनाये फ़रदा तो नहीं ?

शौक़ की मंज़िले मक़सूद है मगमूम हनूज़,
शिद्दते शौक़ कहीं मैहवे तमाशा तो नहीं ?

क्यों मुझे जलवा गहे नाज़ से रखा महरूम,
मेरी फ़ितरित में कोई फ़रफ़े तमन्ना तो नहीं।

ले के आया हूं नई जीस्त कह मालूम करूं,
मौत ने अपना कोई सिलसिला बदला तो नहीं ?

तेरी हैरत की जबीं पर यह पसीना कैसा ?
अजनबी कोई तेरे ख़्वाब में आया तो नहीं ?

'चाँद' के रगे ग़ज़ल में तेरी ख़ुशबु-ए-ख़्याल,
सोचता हूं यह कोई दर्दे सराया तो नहीं ?

कविता का दौर

प्रार्थी जी मन्त्री के रूप में
निरीक्षण करते हुए

सम्पादकीय

सोमसीं पत्रिका का यह अंक स्वर्गीय लालचन्द प्रार्थी चांद कुल्लवी को समर्पित है। संलग्न रचनाओं में विभिन्न विद्वान लेखकों ने उन्हें, कवि, शायर, लेखक, कलाकार, चित्रकार, मूर्तिकार, नर्तक, गायक, वैद्य कविराज, समाज सेवक, देशभक्त, लोक नेता, राजनीतिज्ञ, मन्त्री, राजर्षि आदि अनेक नामों से सम्बोधित किया है और श्रद्धाँजली भेंट की है। एक व्यक्ति को इस कदर अनेक विशेषयों से सम्मानित करना प्रार्थी जी के महान व्यक्तित्व और बहुमुखी प्रतिभा के स्वामी होने का परिचायक है। हर व्यक्ति ने उन्हें जिस नज़र से देखा है उसी गुण से उन्हें विभूषित पाया है। यह उनके चरित्र की विशिष्टता है।

प्रार्थी जी मार्च, 1916 में पैदा हुए थे और गत वर्ष 11 दिसम्बर, 1982 को वे स्वर्ग सिधारे। 66 वर्ष की आयु कोई बहुत लम्बी आयु नहीं होती। कम उम्र में ही वे इस दुनिया को छोड़कर चले गए। लेकिन इस छोटी सी आयु में वे जो कुछ कर गए हैं उससे उनका नाम हमेशा जीवित रहेगा। जब तक पहाड़ी संस्कृति और लोक भाषा जीवित रहेगी तब तक प्रार्थी जी का नाम भावी-पीढ़ी की ज़बान पर अनायास आता रहेगा।

प्रार्थी जी ने अपना जीवन समाज सेवक के रूप में आरम्भ किया था। कुल्लू वादी के प्रसिद्ध गांव और पुरानी राजधानी नगर में जन्म लेकर 1931 में 15 वर्ष की आयु में उन्होंने सारे कुल्लू क्षेत्र के एक मात्र हाई स्कूल कुल्लू से मैट्रिक पास किया। इस तरह प्रार्थी जी कुल्लू क्षेत्र में प्रथम मैट्रिक पास करने वालों में से एक हैं क्योंकि कुल्लू का स्कूल 1928 में ही हाई स्कूल बना था। मैट्रिक पास करने के बाद वे तुरन्त लाहौर चले गए थे और वहां उन्होंने एस० डी० आयर्वैदिक कालेज से 1934 में आयुर्वैदिक चिकित्सा पद्धति में स्नातक की उपाधि प्राप्त की थी। यह प्रार्थी जी का भारतीय प्राचीन संस्कृति और मर्यादा के प्रति अथाह प्रेम और लगाव का ही परिणाम है कि उस समय कुल्लू से लाहौर जाकर शैक्षणिक उच्च शिक्षा ग्रहण करने की अपेक्षा उन्होंने चिकित्सा प्रणाली को महत्व दिया और आयुर्वैदिक चिकित्सा में प्रवीणता प्राप्त की।

उन्होंने आयुर्वैदिक चिकित्सा की केवल उपाधि प्राप्त नहीं की थी बल्कि इसे अपने जीवन का अंग भी बनाया था। लगभग दस वर्षों तक वे नियमित रूप से आयुर्वैदिक चिकित्सा में कार्य करते रहे। तभी उन्हें एक सरकारी नौकरी भी मिली और लगभग चार वर्षों तक पंचायत अधिकारी के रूप में कार्य करते रहे। परन्तु उन्हें सरकारी सेवा में

अधिक रूचि न थी और पंचायत अधिकारी की नौकरी छोड़कर 1943-46 में वे धर्मशाला के निकट एक टी-एस्टेट में जनरल मैनेजर के रूप में भी कार्य करते रहे।

परन्तु किसी तरह की नौकरी उन्हें कभी पसन्द न आई। मूल रूप में समाज-सेवा उनका धर्म था और साहित्य के लिए वे समर्पित थे। अपने गांव में "सेवा सदन" संस्था के नाम से प्रौढ़ शिक्षा से कार्य आरम्भ करते हुए प्रार्थी जी ने "देवभूमि" पाक्षिक "कुल्लू वैली" मासिक, "कांगड़ा समाचार" और देहात सुधार आदि अनेक पत्रिकाओं का सम्पादन भी किया, 1952 में वे पहली बार पंजाब विधान सभा के कुल्लू चुनाव क्षेत्र से विधायक के रूप में निर्वाचित हुए और फिर 1962 से 1977 तक लगातार अपने क्षेत्र से विधायक के रूप में विजयी होते रहे।

जनवरी, 1967 से 1977 तक प्रार्थी जी हिमाचल प्रदेश मन्त्री मण्डल के लगातार कैबिनेट मंत्री रहे। इस दौरान यद्यपि वे वन, स्वास्थ्य, उद्योग, आबकारी तथा कराधान, आवास, भाषा एवं संस्कृति अनेक विभागों के मंत्री रहे परन्तु वे उन्मुक्त कण्ठ से प्रायः कहा करते थे कि भाषा एवं संस्कृति तथा आयुर्वेदिक चिकित्सा ही उनकी रूचि के विभाग हैं। इसमें संदेह भी नहीं कि इन दोनों विभागों के गठन का श्रेय उन्हीं को जाता है।

मन्त्री के रुप में अत्यन्त व्यस्तता का समय बिताते हुए भी वे अपनी साहित्यिक अभिरूचि को निरन्तर गति देते रहे। इस बीच उनकी अनेक गज़लें, पहाड़ी कवितायें विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रही हैं। उनकी पुस्तक "कुलूत देश की कहानी" इस क्षेत्र में अध्ययन करने वालों के लिए हमेशा आधार सामग्री प्रदान करती रहेगी। ऐसे साहित्यकार, समाज-सेवी और राज-नीतिज्ञ को श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए हम सब को गर्व होता है। अन्तिम दिनों में वे "कुलूत देश की कहानी—दूसरा भाग" "पहाड़ी हिन्दी शब्दकोष", "हिमाचल गौरव", "लोकाक्ति—संग्रह" तथा "काव्य संग्रह" उर्दू, गज़लें और कवितायें पुस्तकों पर कार्य कर रहे थे। उनके प्रति श्रद्धांजलि यही होगी कि उनके अधूरे छोड़े ग्रंथों का प्रकाशन सम्पन्न किया जाए।

सोमसी के स्व. लाल चन्द प्रार्थी की स्मृति को समर्पित इस अंक में हमने उनके व्यक्तित्व एवं कृतित्व को लेकर विविध सामग्री जुटाने का प्रयास किया है। विशेष रूप से उनके सम्पर्क में रहे विद्वान लेखकों को इसमें शामिल करने की कोशिश रही है। जाहिर है उस बहुमुखी प्रतिभा से सम्पन्न 'चान्द' की सभी रश्मियों को समेट पाना संभव नहीं हो पाया। बावजूद इसके जो सामग्री हम दे पाए हैं वह उस आलोक पुंज की स्मृति को कायम करने और पाठकों को उससे परिचित कराने में जिस कदर सहायक सिद्ध होगी उसी में हमारी सफलता रहेगी।

—एम० आर० ठाकुर

श्री लाल चन्द प्रार्थी-एक बहुपक्षीय व्यक्तित्व

–डॉ० पद्म चन्द्र काश्यप

पंजाब विधान सभा का कक्ष। बजट पर बहस हो रही थी। विरोधी दल के नेता ने बजट प्रस्तावों की कड़ी आलोचना की थी—साथ में सदन के नेता, मुख्यमंत्री प्रतापसिंह कैरों पर व्यक्तिगत आरोप भी लगाए थे। सदन उद्वेलित था, वातावरण तनावपूर्ण। कैरों समर्थक प्रयत्न कर रहे थे कि अध्यक्ष उनकी तरफ देखें और वे आरोपों का उत्तर दे सकें। अध्यक्ष की नज़रें अग्रिम बैंचों पर थी कि तभी एक आवाज गूंजी :

रोशनी लूट ली उभरे हुए मीनारों ने।
पस्त ज़र्रों के मुकद्दर में वही रात रही॥

सदन हैरान, यह शे'र शायरो वाला कौन, नजरें मुड़ी, बैंचों की तीसरो पंक्ति में एक व्यक्ति खड़ा हुआ। लम्बा सा कद, सिर पर सजे संवारे लटीय बाल, अधपकी लहराती हुई दाढ़ी, चौड़ा माथा, तेज गहरी आंखें, तीखी नाक। दाढ़ी मूंछ के बीच होंठों की पतली सी लकीर। चेहरे पर हल्की सी मुस्कान, जिस से कुछ चुहल का, कुछ चुस्की भाव टपके।

"स्पीकर साहिब! आप का शुक्रिया। मैं तो समझा था सिर्फ महारथी ही बुलवाए जाएंगे। तहे दिल से मशकूर हूं, मुझ पर भी नजरें करम पड़ी।" इसी हल्के फुलके अंदाज में वह बोलता गया। सदन का रक्त चाप नीचे आने लगा। कभी शुक्रनीति, कभी चाणक्य नीति, हितोपदेश, वेद, ज़ोक ग़ालिब, इकबाल, जवाहर लाल नेहरू, महात्मा गांधी, सभी से उद्धारण देते हुए धारा प्रवाह बोलता गया, बजट के प्रस्तावों का समर्थन किया, विरोधी आरोपों का खण्डन कर, विरोधी पक्ष के नेता की वाक् पटुता की प्रशंसा की और फिर एक झटके से अपने इलाके की बात करने लगा। स्वर में आवेग न रहा, आक्रोश न रहा केवल एक निराशा सी। "स्पीकर साहिब। मेरा इलाका सब से पिछड़ा है। वह केवल शोषित हो रहा है। राजनीतिक रूप से, आर्थिक तौर पर और सामाजिक क्षेत्र में, मेरे लोगों को शायद मनुष्य ही नहीं समझा जाता।" स्वर में असहनीय वेदना। एक हल्का सा कंपन। बहस का जवाब देते हुए कैरों ने ने घोषणा की कि पंजाब के पहाड़ी क्षेत्रों-कांगड़ा, कुल्लू, लाहुल-स्पिति के लिए एक पृथक हिल डवेल्पमेंट कमिश्नर नियुक्त किया

जा रहा है, जो पहाड़ी इलाकों के विकास के लिए जिम्मेदार होगा और बजट में से एक विशेष राशि इस पर खर्च की जाएगी। जोरदार तरीके से पहाड़ी इलाकों की समस्याओं पर ध्यान आकर्षित करने के लिए उन्होंने उस सदस्य को धन्यवाद दिया और वह सदस्य था, लाल चन्द प्रार्थी, "कुल्लू का नुमांइंदा।"

प्रेस गैलरी में बैठा मैं आह्लादित था। मुझे गर्व था अपने प्रतिनिधि पर, अपने पहाड़िये पर। मैं लांउज में आया, अपना परिचय दिया। दोनों गले मिले। यह मेरी उन से पहली मुलाकात थी। मालूम हुआ वह "झेचा" है और मैं "सराजी"। तब से उन की मृत्युपर्यन्त हम दोनों में आपस में सम्बोधन के ये दो शब्द ही प्रयुक्त होते रहे, क्योंकि इन में एक अनूठी आत्मीयता थी, अपनापन था, प्यार था।

कुल्लू इलाके का रहते हुए भी मैंने तब तक न कुल्लू देखा था और न कांगड़ा। मेरी शिक्षा दीक्षा जिला से बाहर ही हुई। प्रार्थी जी ने कुल्लू आने का निमंत्रण दिया और मैं उन के साथ कुल्लू, कटराई और नग्गर ठहरा। दोनों मिल कर इलाके की समस्याओं पर विचार करते, अपनी दशा का लेखा जोखा करते और हमें क्या करना चाहिए, इस पर गंभीरता से सोचते। ज्यों ज्यों मैं उन के संसर्ग में आता गया, मैं उनकी सोच उन के स्वप्न, उन की विद्वता से अधिकाधिक प्रभावित होता गया। वह सहृदय व्यक्ति था।

प्रार्थी जी का एक ही स्वप्न था, एक ही लक्ष्य था। किस प्रकार पहाड़ी क्षेत्र का विकास हो, किस प्रकार हम लोगों में आत्म सम्मान जागे और हम देश के अन्य लोगों से बराबरी कर सकें। वह तड़प उठते थे, जब हमारे पहाड़ीपन, पिछड़ेपन का मजाक उड़ाया जाता था, या हम पर हमारी सामाजिक व्यवस्था पर छींटे कसे जाते थे। चण्डीगढ़ में हम लोग कई बार रात के दूसरे तीसरे पहर तक सड़कों पर चहल कदमी करते और अपनी कसक, अपनी चुभन को दूर करने का उपाय खोजते।

इस में कोई सन्देह नहीं कि राज्य के समुन्नत क्षेत्रों के प्रतिनिधियों का बड़े भाइयों जैसा वर्ताव उन्हें असहीय था। इस की एक झलक उन के "कुलूत देश की कहानी" में मिलती है, जहां वह कहते है :

एक दिन भी चैन से गुजरा न ज़ेरे आफताब।
जिन्दगी भर हम जफाए आसमां देखा किए ॥

लेकिन उन्होंने कभी मन नहीं हारा, वह कहा करते थे :

घबरा न अन्धेरे में शबे ग़म के मुसाफिर।
तेरे लिए बेताब है आगोश सहर का ॥

सोमसी

कहना न होगा प्रार्थी जी ऊंचे पाये के शायर थे और उन का तखल्लुस था "चांद कुल्लवी"। उन्होंने उर्दू में शायरी की, हिन्दी में की, पहाड़ी में की। कई बार लगता था, वह आशु कवि हैं। कवि सम्मेलनों में मंच पर बैठे बैठे वह मौके के मुताबिक कविता लिखते थे। उनकी कविताओं में आध्याप्मिकता का पुट भी रहता था। कल्पना विविध रंग के इन्द्र धनुष बुनती थी और एक ऐसा चित्र खींचती जी हृदय को एक दम खींच लेती।

प्रार्थी जी का हृदय कवि का था, कोमल था, कल्पनाशील था, भावुक था, अतः यह स्वाभाविक था कि उन की गद्य रचना में भी एक लयात्मकता आ जाए। "कुलूत देश की कहानी" इसका प्रमाण है। यह ग्रन्थ गद्यात्मक होते भी काव्यमय है। इस में लेखक के विचारों की गहनता, उनका प्रकांड पांडित्य, उनकी ऐतिहासिक बुद्धि एक ऐसे संसार की रचना करता है जो इतिहास होते हुए भी आधुनिक है। हिमाचली लेखकों द्वारा शायद यह पहली इतिहास-संस्कृति सम्बन्धी पुस्तक है, जिस में लेखक की अपनी दृष्टि है, अपना मत है अपनी स्थापनाएं है। यदि अन्य लेखकों और स्रोतों का सहारा लिया गया तो केवल अपने मत की पुष्टि के लिए। विशेष बात यह कि इस वृहद् ग्रन्थ में में नई शैली उभर कर-सामने आयी है। इतिहास कथा माध्यम से कहा गया या कथा इतिहास बन गई, कहना कठिन है। इस से भी अधिक प्राथो जी ने जिन संभावनाओं की ओर इशारा किया है वे सच होती दीख रही हैं। लेखक भाषाविद् था, इस पुस्तक से सिद्ध हो जाता है, एक देश भक्त था जिसे अपनी मिट्टी से बेहद प्यार था, जो कह सकता था :

पत्थर की मूरती में समझा है तू खुदा है।
खा़के बतन का मुझ को हर ज़र्रा देवता है।।

वह कला प्रेमी, नृत्य और संगीत का दीवाना था। लोक संस्कृति के उत्थान एवं स्वीकृति के लिए उस ने भगीरथ प्रयत्न किए। प्रशिक्षण से उस वैद्य ने सब चीजों में सौन्दर्य देखा। न जाने वह वैद्यराज कैसे और क्यों बना! शायद इसलिए कि उसे अपने शरीर की देखभाल करनी थी।

वृहद् हिमाचल के निर्माण में, उसे एक निजी व्यक्तित्व देने में, उसकी कला को बढ़ावा देने में प्रार्थी जी का बड़ा हाथ है। राजनीति में लिप्त रहते हुए भी वे निर्लिप्त थे। लम्बे समय तक तक मंत्री का कार्यभार संभालते हुए भी वह साधारण हिमाचली से कभी नहीं कटे। हिमाचल के दूसरे स्वप्न दृष्टा, डॉ. यशवन्त सिंह परमार, के साथ मिल कर उन्होंने हिमाचली बुद्धिजीवियों, का मार्ग दर्शन किया, लेखकों कलाविदों को प्रोत्साहित किया और प्रदेश मे नवजागरण का सूत्रपात किया।

क्या ऐसे बहुमुखी प्रतिभा वाले 'झेचा" को कभी भुलाया जा सकता ?

प्रार्थी जी की कुछ यादें

-बिहारी लाल बहार कुल्लवी

लम्बी तकरीर :

नवम्बर 1966 में विशाल हिमाचल बना और कुल्लू, कांगड़ा, ऊना, नालागढ़ और शिमला के इलाके पजाब से कटकर इस से मिल गये। हिमाचल में इन नये इलाकों की आशाएं मिनिस्टरी से नुमायंदगी की तरफ लगी। कुछ इन्तजार के बाद 7 जनवरी 1967 को डॉ. परमार ने बक्शी प्रताप सिंह और श्री लाल चन्द प्रार्थी को बज़ारत में शामिल किया। प्रार्थी साहब की ज़िन्दगी में वह वक्त आया जिसे लोक सेवा के लिए ईश्वर की देन कहें तो बजा होगा। मैं उस वक्त पंजाब सचिवालय से हिमाचल सचिवालय में बतौर निजी सहायक तबदील हो चुका था और प्रार्थी जो ने मुझे पी. ए. के तौर पर चुना। कुल्लू के दौरा का एक तफसीली प्रोग्राम तय हुआ और झोड़ी से मनाली तक खुशआमदेद में लोग ने पलकें बिछाई। तमाम कुल्लू खुशी के नशे में झूम उठा।

गणतन्त्र दिवस 26 जनवरी के लिए कुल्लू में झंडा लहराने की जिम्मेदारी प्रार्थी जी की रखी गई। लम्बे दौरों और मनाली में सख्त सर्दी की वजह से उन्हें शदीद दमा की शिकायत फिर से शुरू हो गई। और डाक्टरों ने उन्हें मुकम्मल आराम के लिए कहा। वह कुल्लू सर्कट हाऊस के लाग हट्स में ठहर गये। श्री अभय राज सिंह शाद उन दिनों कुल्लू के डिप्टी कमीशनर थे। और डॉ. प्रेम सिवल सर्जन। 25 जनवरी को दोनों प्रार्थी जी को देखने आये और यह फैसला हुआ की अगर प्रार्थी जी की तबीयत बहाल न हुई तो डिप्टी कमीशनर ही झंडा लहरायेंगे। रात को तबीयत में कुछ इफाका न हुआ। चिन्तामणी गनमैन और मैं दवाई वक्त वक्त पर देते रहे। आखिर 26 जनवरी की सुबह आ गई। शाद साहब का टेलीफोन सात बजे ही आ गया। उन्होंने पूछा की क्या इरादे हैं! प्रार्थी जी से पता किया उन्होंने कहा की वह मानसिक शक्ति की मदद से तकलीफ पर काबू पा लेंगे क्योंकि हर हाल में झंडा उन्हें ही लहराना है। आठ बज गये। डी. सी. साहब और हमारी सबकी बैचेनी बढ़ने लगी क्योंकि झंडा लहराने का वक्त मुकर्र था और बदला नहीं जा सकता था। डॉ. प्रेम ने फतवा दिया की प्रार्थी जो किसी हालत में नहीं जा सकते। डी. सी. साहब मुझे से यह वायदा लेकर चले गये की अगर प्रार्थी जी पौने दस बजे तक कार में सवार न हो तो मैं उन्हे फौरन पता दूं ताकि वह खुद ही झंडा

लहरा सके। हमें खुद वहम था कोई चमत्कार ही अब प्रार्थी जी से झंडा लहरवा सकता हैं। नौ बजे प्रार्थी जी ने चिन्तामणी को कहा "गुस्लखाना में पानी रखो और मेरी शेरवानी और पाजामा लाओ।" वह साढ़े नौ बजे तक तैयार थे। मैंने डी. सी. साहिब को फोन किया। वह और सिवल सर्जन पौने दस बजे उन्हें लेने आ गये। डॉ. साहिब ने इसरार किया कि प्रार्थी जी गारद की जीप में निरीक्षण करें और सिर्फ झंडा लहरायें। कोई तकरीर न करें। शहर में अफवाह गर्म थी कि प्रार्थी जी शदीद बीमार हैं और झंडा न लहरा सकेंगे। जब दस बजे प्रार्थी जी की कार जाये मीटिंग पर पहुंची तो वहां हाजरी बहुत ज्यादा थी और मौसम काफी खराब। प्रार्थी जी ने जीप पर गारद का मुआइना किया सलामी ली और फौरन माइक पर चले गये। लोग बाग, डिप्टी कमीशनर, सिवल सर्जन सब हैरान कि अब क्या करेंगे ! डॉ. साहिब ने पर्ची भेजी की सिर्फ दो या तीन मिनट तकरीर करें। मगर प्रार्थी जी की तबीयत में वलबले थे। वह विशाल हिमाचल में बतौर मन्त्री पहली बार जनता को 26 जनवरी का पैगाम दे रहे थे। यह वही कटागली शाड़ था जहां सन 1946 में उन्होंने अंग्रेज एसिस्टेंट कमीशनर मि. हारकूट को ललकारा था और वह वही जगह थी जहां उन्होंने बरसों बतौर कांग्रेस प्रैसीडेंट के झंडा लहराया था और मोहरन का एक यादगारी वृक्ष भी रोपा था। जो जवान हो कर सायाफिगन था। ऐसी हालत में उनके जज़बात के तूफान को उनकी जिसमानी कमजोरी क्या रोकती ! यह वह लम्हा था जब कुवते खुद इरादी ने बीमारी पर, रूह ने जिस्म पर फतह पाई। प्रार्थी जी ने हिमाचल का इतिहास शुरु कर रखा था। वह पृथ्वी की प्रलय, मनु की कश्ती, मनाली और हिमाचल में मानव के पूर्नजन्म पर स्पीच तो क्या इस विषय पर अपना शोध पत्र ही तो पेश कर रहे थे। बीस मिनट गुजर गये अब डॉ. प्रेम ज्यादा परेशान नजर आ रहे थे। उन्होंने फिर पर्ची भेजी जो प्रार्थी जी ने एक तरफ रख दी। अब वह हिमाचल का आज़ादी में हिस्सा, लोगों की कुर्बानियां, महात्मा गांधी, भक्त सिंह, पं० जवाहर लाल पर बोल रहे थे। चालीस मिनट गुजर गये। डॉ. प्रेम को पसीने आ रहे थे और कह रहे थे कि अब स्पीच बन्द होनी चाहिए। प्रार्थी जी को खतरा हो सकता है। फिर पर्ची भेजी गई मगर कोई असर नहीं। स्पीच अब हिमाचल के मौजूदा दौर पर थी। वह डॉ. परमार की उपलब्धियों और हिमाचल के प्रदेश बनने की बरकतों पर बोल रहे थे। एक घन्टे से ज्यादा गुजर गया और प्रार्थी जी ने अपनी स्पीच इन्दिरा गांधी जिन्दाबाद, डॉ. परमार जिन्दाबाद और जय हिन्द के फलिक शिगाफ नारों से बन्द की। प्रार्थी जी को बधाई देने वालो का तांता बध गया। इस वक्त सब से ज्यादा तसल्ली डॉ. प्रेम को थी। एक घन्टा धुआंधार तकरीर के बाद प्रार्थी जी पहले से अशाश विशाश नज़र आ रहे थे उन्होंने कहा कि डॉ. साहिब वह लम्बी तकरीर के बाद अपने आपको बेहतर महसूस कर रहे हैं। इसका डाक्टरी डिक्शनरी में कोई जवाब नहीं था।

नोक झोंक

प्रार्थी जी की ज़ुबान में रस था। वह सितम जरीफी की हद तक हाजिर जवाब थे। मौका, बे मौका फिलबदीह शायरी भी कर सकते थे। महफिलें, बज़्में, दफतरी बैठकें यहां तक की विधान सभा का चैम्बर भो उनकी जिन्द दिली से कहकहा ज़ार बन जाया करते थे। डॉ. परमार के ज़माने का ज़िक्र है एसैम्बली चल रही थी कांग्रेस पार्टी ताज़ा ताज़ा फिर से सत्ता में आई थी। प्रार्थी जी कैबनिट मिनिस्टर थे। उन्ही दिनों श्रीमती इन्दिरा गांधी प्रधानमन्त्री मशोबरा 'रिट्रीट' बंगला में आराम फरमा रही थी अपोजीशिन के एक सरकरदा मेम्बर ने दौराने स्पीच चोट की "तुम्हारी प्रधानमंत्री तो रिट्रीट में चली गई है।" प्रार्थी जी ने तुरन्त शायरी में जवाब दिया :

जो ठन्डे हो कर कर लेटे हैं,
वह हीट की बातें करते हैं।
डिफीट के जख्म तो सहला न सकें,
रिट्रीट की बाते करतें है ॥

इसी तरह एक बार उनकी लम्बी दाड़ी पर चोट की गई उन्होंने तुरन्त जवाब दिया

दिदाओ दिल को नूर बख़्शा है
जिन्दगी को सरूर बख्शा है !
नाज़ है मुझको अपनी दाढ़ी पर
जिसने मुझ को शऊर बख्शा है ॥

ग़रीब की मदद

प्रार्थी जी की माली हालत इस बात के बावजूद कमज़ोर रही की वह अपने पिता के इकलौते लड़के थे। घर बार जमीन जगह, और बाग बगीचा उन्हें विरासत में मिले थे। इसकी वजह उनके दिल की उदारता भी रही होगी। उन्होंने चन्डीगढ़ का अपना एम. एल. ए. फ्लैट एक वकील दोस्त को बगैर किराये की अदायगी के दे दिया था। और बाद में तकरीबन 3000/- रुपया अपनी जेब से भरा। उनकी दरियादिली के बारे में उनका विजारत का एक वाक्य इस तरह है। जौंडू चरमकार सचिवालय के बाहर जूते गांठने का काम करता था। मुश्किल से कुछ रुपये कमाता और अपने बच्चों का पेट पालता। उसकी लड़की जवान हुई, विवाह रख दिया। इस उम्मीद पर की कुछ कमा लूंगा और कुछ समान उधार ले लूंगा। खर्च अंदाज़ से बहुत बढ़ गया। बारात के दिन करीब आ गये।

जौंड़ू एक दुकान से दूसरी दुकान दौड़ता। दफ्तरों में चक्कर काटता कहीं से कुछ मदद या उधार मिल जाये। कोई कामयाबी नहीं मिली। आखिर उसे किसी ने बताया कि सचिवालय में एक रीशदराज़ फकीर शक्ल वजीर है। उसके पास जाओ शायद कुछ मदद हो जाए। जौंड़ू ढूंढ़ता हुआ मेरे पास आया और अपनी मुश्किल बयान की। मैंने उसे समझाया इस मामले में वज़ीर क्या मदद कर सकते हैं। किसी धार्मिक संस्था में जाओ या किसी अमीर के आगे रोओ उसने मिन्नत की मुझे पेश कर दो मैं उसे प्रार्थी जी के कमरे में ले गया और उसका मुद्दा ब्यान किया। जौंड़ू की आँखो में आँसू थे। वह हाथ जोड़ कर फरयाद कर रहा था। "मालका परसों जनेत आई जानी वीह पच्ची माहणू हण मिझो वाल ताँ दाल रोटी भी नहीं" प्रार्थी जी पर उसकी गुरबत और मुश्किल का असर मुझे उनकी गम्भीर मुद्रा में नज़र आ रहा था। आखिर वह बोले भई इसकी मदद तो ज़रूर करनी है। क्या हम यह रकम अपनी इच्छुक निधि से नहीं दे सकते। मैंने बताया कि रुलज़ में ऐसा प्रोविज़न नहीं है। उन्होंने कहा की जौंड़ू की बारात की सेवा तो जरूर होगी 500/- रूपये इच्छुक निधि में से दे दिये जायें। अगर उज़र हुआ तो मेरी तन्खाह में से कटवा देना। जौंड़ू को पैसे मिल गये और उसकी लड़की की शादी अच्छी तरह से हो गई। कुछ अरसा बाद मैंने स्वामी विवेकानन्द के लेखों में पढ़ा 'ईश्वर कहाँ ढूंढते हो क्या यह गरीब लाचार और लताड़े हुए लोग ईश्वर का रूप नहीं है मैं ऐसे ईश्वर और धर्म में आस्था नहीं रखता जो किसी बेवा के आंसू न पूंछ सके और किसी यतीम के मुंह में रोटी का टुकड़ा न दे सकें"।

आशिक डाक्टर

प्रार्थी जी स्वस्थ मंत्री थे। एक दिन एक साहिब दफ्तर में तशरीफ लाऐ। भारी भरकम डील डौल उमर पैन्तीस के करीब गैवराडीन की बरीचीस पहने हुऐ कहा कि वह डाक्टर है। और प्रार्थी जी को मिलेंगे ! मैंने कहा कि क्या कोई सर्विस के मुतलिक अर्ज दस्त है ! और क्या डारेक्टर की मंजूरी ले लो है ? कहा कि मनिस्टर साहब को अपनी बारात का दावतनामा देने आये हैं। मैंने अन्दर भेज दिया। थोड़ी देर में मुझे बुला भेजा गया प्रार्थी जी कहने लगे कि डॉ. साहब बम्बई जरीया एक मशहूर एक्ट्रैस को बियाहने जा रहे हैं और हमें भी साथ ले जाना चाहते हैं क्या यह जशन बम्बई की जगह बरेली ठीक न होगा। मैं समझ गया कि यह साहब खपती है और मन्त्री जी का इशारा बरेली के पागल खाने से है। उस सख्श को वापिस लाया और समझाया कि यह क्या पागलपन है। मगर वह साहिब अपनी हठ पर कायम रहे और इस सिलसिला में एक हाथ से लिखी हुई चिट्ठी भी पेश की। कुछ अरसा बाद सिवल सर्जन से पता लगा कि वाक्य ही वह साहब डाक्टर हैं और उनके सर पर बम्बई की एक एक्ट्रैस से शादी का जनन सवार है और तमाम अस्पताल उस एक्ट्रैस के चित्रों से भर दिया गया है। उन्हें तबदील कर दिया गया। मगर वह अपनी हठ पर वहां से न गये और नतीजे के तौर

पर नौकरी से ही निकाल दिये गये। वह मजनू बन गये और बहुत अरसा बाद एक दिन फिर दफ्तर में नमुदार हुऐ दाढ़ी बड़ी हुई, आँखो से दहशत टपकती थी। विरजिस फट गई थी। कहने लगे कि बहुत तंग हूं बुरा हाल हो गया है। इश्क सिर से निकल गया है। नौकरी बहाल की जाये। मैंने उसे फिर पेश किया। प्रार्थी जी को उस की हालतेज़ार पर रहम आया और कहा अरे भाई मजनूओं की यही हालत होती है। वह बड़े दिलदार आदमी होते हैं। अगर यही लग्न काम में लगाये तो बेड़ा पार हो जाएं। डारेक्टर को बुला कर कहा इसे फिर काम पर रख लो। इस पोस्ट पर तो उसे न रखा जा सका पर आरा जयत्रि नौकरी पर जो खाली पड़ी है उसे फिर लगा दिया गया।

वलानोशी

प्रार्थी जी को अपनी कमजोरियों के एतराफ से कभी आर न था। वह जवानी में वलानोश रहे थे। एक दफा मनाली में रात के वक्त कुछ नौजवान पी कर उन्हें मिलने चले गये। वह भांप गये और पूछा किस कदर मैनोशी की है। उन्होंने कहा तीन आदमी और सिर्फ एक अधिया। फरमाने लगे लानत है तुम्हारी जवानी पर। हम तो अकेले ही एक बोतल पचाने की ताकत रखते थे।

महन्त नरसिंह दयाल का शिकवा प्रार्थी जी के नाम

प्रार्थी जी का हलकऐ दोस्तां बहुत वसीह था। उनके मिलने वालों में बैजनाथ के महन्त नरसिंह दयाल भी थे। यह जहां दीदा आलम फाजल बुजुर्ग थे। प्रार्थी जी इनका बहुत एतराम करते और वसा औकात इन्हें दौरा में भी साथ रखते थे। महन्त जी भी प्रार्थी जी से वालेहाना महुब्बत करते थे और इन दोनों में दोस्ताना नोक झोंक, शेरो शायरी और खुशगपियां हुआ करती थी। एक बार महन्त जो प्रार्थी जी की सरकारी कोठी बेनमोर नं० ४ शिमला में प्रार्थी जी से मिलने और ठहरने के लिए तशरीफ लाए। प्रर्थी जी दूसरी ममरुफियतों की वजह से उन्हें तव्जा न दे पाये! यह बात महन्त जी के दिल पर ना गवार गुजरी और वह सुबह तीन बजे ही कोठी से चले गये। जाने से पहले उन्होंने एक मनजूम शिकवा प्रार्थी जी के लिए लिखा और अपनी चारपाई पर छोड़ गये। —

मेरे प्यारे मूनिस, मेरे प्यारे भाई — मेरे गम गुसारो मेरे खैर खाही
मैं था पक्का साथी, मैं था हम निवाला — मैं था हम लंगोटी, मैं था हम प्याला
वलूंदी में, पस्ती मे उफ्ताओं खेजां — रहा हम रकाबी में, वे साज़ो सामां
क्यामत कभी थी ज़रा सो जुदाई — हूँ मह रूमे नामा कुज्जा रूख नुभाई

मैं सादिक हूँ मुखलिस हूँ खादिम रहा हूँ
मैं हर रंजो राहत में शामिल रहा हूँ
मेरे साथ यह वे रूखी यह वेबफाई
सितम है,सितम है, दुहाई दुहाई
यह सब जाहो हशमत तुम ही को मुवारक
यह सब कार कोठी तुम्हीं को मुवारक
मैं खा नंगा भूखा या प्यासा रहूँगा
मैं जैसा था बैसा हूँ वैसा रहूँगा
नकरदा गुनाहा की खता वखश डालो
लवे गौर हूँ अल विदाई दुआ लो
तेरी उमर दाईम अमर जावदां हो
अलालत जईकी रजुऐ दुश्मना हो

नर सिंह दयाल 3.1.76 व वक्त 3 बजे सुबह

प्रार्थी जी को जबाब में एक प्यारभरा खत अपनी पोज़ीशन साफ करने के लिए लिखना पड़ा। जिसकी नकल मौजूद नहीं।

आखरी मुवारकबाद

प्रार्थी जी का दौरे वज़ारत अप्रैल सन १९७७ में खत्म हुआ। अपनी तमामतर अहलियातों के बावजूद न सिर्फ अगले जनता दौर में बल्कि कांग्रेसी दौर में भी उनकी खिदमत का फायदा न उठाया गया। इससे वह कुछ दिल बरदाशता हो गये। सन १९८२ के आगज में मैंने उन्हें एक मुवारिकवादी कार्ड भेजा और यह शेर लिखा:-

"महसूस हो रहा है कि सदियां गुज़र गई
क्या रात थी वह, रात अभी कल की बात है"।

प्रार्थी जी ने वापिसी मुबारकबाद भेजी और यह शेर जबाव में लिखा :—

"मुझे चमन की समत न ले जाओ दोस्तो
हर शाख पूछती है बहारें कहां गई"

मातमो खत

आखिर वह शखस जिसने तालिनेवालगां जंगे आज़ादो कांग्रेस संस्था, विधान सभा और कुर्सीए विज़ारत से हिमाचल प्रदेश की वेशवहा खिदमत की, अदब के मैदान में नई वुलन्दीया पैदा की और हिमाचलवासियों के सोये हुऐ ज़हनों को वेदार किया और उन्हें आत्म सम्मान हासिल करने में मदद दी, बिमारी से जुझता हुआ ११ दिसम्बर १९८२ को हम से जुदा हो गया उनके पसमांदगान को तो लातदाद हमर्ददी के मातमी पैगाम आये ही मगर कुछ मातमी दोस्तों ने आपस में भी चिट्ठीयों

का तबादला किया , जिसमें उन्हें श्रंद्धांजली देकर अपने दर्द के करब को अयां किया। एक खत जो मुझे श्री गुरू दत्त धर्मपुर से आया उन्हीं के शब्दों में ज़ैल में दरज करता हूं। इसमें अदब का भयार और दर्द का कर्ब बदरजा उत्तम मौजूद है।

"इण्डिया बलगेरिया फ्रेण्डशीप एसोसिएशन
हिमाचल प्रदेश

गुरुदत्त
प्रेज़ीडेंट

धर्मपुर
जिला सोलन
25 जनवरी 1983

उभरे रहे ख्याल में माजी के हादसो।
शायद रहे न याद मुझे रकतगां की बात

मोहतरिम बहार साहिब
आदाबो खुलूस

खत लिखते वक्त फेज का एक शेयर जवान पर आ रहा है

कफस उदास है यारो, सबा से कुछ तो कहो।
कहीं तो बहरे खुदा आज जिकरे यार चले।।

आज जिक्र उस मोहरिम दोस्त का कर रहा हूं जिससे मेरी पहली मुलाकात दिसम्बर १९५१ के आखिर में वादिए कुल्लू में हुई ये ज़माना उनके शबाब का था। मैं उन दिनों अपने सरकारी काम के अलावा चुनाव में दिलचस्पी लेने के लिए गया था। १९५२ के अगाज़ में जब पहले चुनाव की सरगर्मियां तेज हुईं तो प्रार्थी जी से मुखतालिक मकामात पर मुलाकातें हुईं। उन दिनों भगवत गुरू मेरे वाहिद सियासी दोस्त थे।

प्रार्थी जी कामयाब हुए तो चन्डीगढ़ चले आए और हमारी मुलाकातों में लम्बा तातुल पैदा होने लगा लेकिन इस दौरान में जब कभी भी मिले तो ऐसे जैसे कल की बात हो मिलने के सलीके में वही खन्दा पेशानी वही खलूस और गर्म जज़बात महसूस किए जो उनसे आखरी मुलाकातों में थे। खन्दा पेशानी से खैर मकदम उनकी सीरत का हिस्सा बन चुका था। उन दिनों कम शेयर कहते थे लेकिन उमर के साथ शाऊर की पुख्तगी भी बढ़ती गई।

सोमसी

सन् 1966 के आखिर में वह हिमाचल प्रदेश में एक वज़ीर की हैसियत से दाखिल हुए। 1967 में वज़ीरे माल के तौर पर उनके साथ मुसलसल मुलाकातों का सिलसिला जारी हो गया और ये राबता पूरी एक दहाई यानि 1977 तक बदस्तूर कायम रहा। ये खुशगवार मुलाकातें कभी शिमला में कभी चण्डीगढ़ की महफिल में और दिल्ली की दिलकश मुलाकात में होतीं। ये ज़माना उनकी सियासी शानो शौकत और हमागीर शोहरत का ज़ामिन था। इस ज़माने में उनका हलकाए अरबाबे ज़ौक बहुत वसीह हो चुका था और सियासी शऊर व पुख्तगी सारे हिमाचल प्रदेश में अपना लोहा मनवा चुकी थी लेकिन "हर कमाले राज़ वाले" उनकी तेज़ी से बिगड़ती हुई सेहत के साथ उनके सियासी ज़वाल ने भी साथ कदम रखा।

1977 में कांग्रेस की सियासी पसपाई के बाद हमारी मुलाकातों में फिर तवालत पैदा हुई। लेकिन जब कभी दो चार रोज़ की मुलाकात रही तो बहुत खुशगवार और मानीखेज़। 1979 की गर्मियों की शाम में मैं उनसे मिलने की खातिर नग्गर गया मुल्क की सियासत का तजकरा शुरू हुआ तो कहने लगे एक शेयर सुनो :—

जिन्होंने आशियां लूटे थे दिल कलियों का तोड़ा था।
सितम है फिर उन्हीं हाथों में गुलशन का नज़ाम आया॥

मैंने हालात के मुताबिक शेयर की बहुत दाद दी। 1982 तक हमारी मुलाकातों का अकसर मौज़ूह सियासत ही रहा। 24 अगस्त 1982 को मैं कुल्लू पहुंचा, 25 सुबह गाड़ी लेकर उनसे मिलने नग्गर गया, मालूम हुआ सेहत की खराबी की वजह से कुल्लू सिविल अस्पताल में हैं। कुछ देर के लिए मैं कासल रेस्ट हाऊस में चाय पीने के लिए चला गया। ये जगह मेरी बहुत पुरानी और रंगीन यादों का मदफन है, शाम को अस्पताल पहुंचा मुलाकात हुई देखते ही गालिब का ये शेर पढ़ा :—

करता हूँ हसरते दिल का शमार याद।
मुझसे मेरे गुनाह का हिसाब ऐ खुदा न मांग॥

मैंने अज़राहे मज़ाक कहा अभी रूज़े हिसाब कहां गुनाहों के लिए उमरे दराज़ पड़ी है पूछने पर मालूम हुआ तीन चार अमराज़ में मुबतला है और खूनी बबासीर का शदीद हमला है के रूकने में नहीं आ रहा।

खामोशी के आलम में मैं गौर से उन्हें देखता रहा और बार बार ये शेयर मेरे ज़हन में घूमता रहा

ये कौन शख्स है और किस जनून में है ।
के जख्म जख्म है फिर भी मगर सकून में है ।।

26 अगस्त को मेरी उनसे फिर तवील मुलाकात हुई, और कुछ अहम सियासी बातें तय हुईं। सितम्बर में उन्होंने मुझे दशहरा पर कुल्लू आने की दावत दी लेकिन मैं किसी कारण से न जा सका ख्याल था मार्च में उनसे मुलाकात होगी लेकिन

ए वसा आरज़ू के खाक शुद्ध

12 दिसम्बर सन् 82 को जब मैं धर्मपुर से हैदराबाद जाने के लिए रवाना हुआ तो कालका पहुंच कर मेरे एक दोस्त जो हैदराबाद से मुझे चुनाव के सिलसिले में लेने आए थे ने हिन्दी का अखबार खरीदा जिसमें यह अलमनाक खबर थी कि प्रार्थी जी खुदा को प्यारे हो गए। बहुत देर तक मैं जहनी परेशानी में मुवतला रहा, एक मंजे हुए सियासी रहनुमां, मुखलिस दोस्त अदव और फन को तखलीक करने वाले एक इन्सान के जुदा हो जाने से मुझे बेहद दुःख हुआ।

मुखतलिक अमराज़ के उन पर पहले भी कई शदीद हमले हुए लेकिन उनकी कुवतेइ-रादी हर बार उन्हें पसपा कर देती और वह हमेशा की तरह चलते फिरते दोस्तों से नोक झोंक करते दिखाई देते। 26 अगस्त की मुलाकात के बाद मैंने यही सोच कर अलविदा कही कि जल्दी फिर मुलाकात होगी, लेकिन अब जबके वह हमेशा के लिए दागे मुफारकत दे गए तो ये वजह जानने के लिए हफीज जालन्धरी का ये शेयर इस जुदाई पर कितना सादग आता है।

आखिर तुझको भी मौत आई खैर हफीज खुदा हाफिज ।
लेकिन जाते जाते प्यारे वजह मरग बताता जा ।।

यादें रफतगान के साथ
गुरूदत्त

सचिवालय
शिमला-२

राज ऋषि लाल चन्द प्रार्थी

--चन्द्र मणि वशिष्ठ

मेला रेणुका जी के अवसर पर श्री लाल चन्द प्रार्थी, डाक्टर वाई. एस. परमार के साथ आए थे। हमने विश्राम गृह के प्राँगण में मुख्य मन्त्री डाक्टर परमार तथा राजस्व मन्त्री श्री प्रार्थी का स्वागत किया। तब मैंने पहली बार प्रार्थी जी को देखा था। दिन में भगवान परशुराम की शोभा यात्रा में गिरी गंगा के पावन तट पर यह दोनों भगवान के स्वागत को पहुंचे। रात्री को आतिश बाज़ी के साथ जन सभा थी। मैं मेला सब-कमेटी का अध्यक्ष था। कमेटी के अध्यक्ष ज़िलाधीश सिरमौर होते हैं। अध्यक्ष के नाते सर्व प्रथम मैंने डाक्टर परमार तथा श्री प्रार्थी का स्वागत किया। मैं मेले के महत्व, कार्यक्रम की रुपरेखा तथा डाक्टर परमार की प्रदेश के प्रति सेवाओं और प्रदेश की पहाड़ी भाषा तथा लोक संस्कृति के बारे लगभग सवा घण्टा बोला। मेरे स्वागत भाषण के पश्चात प्रार्थी जी बोले। बरसों बाद दरया की सी रवानी की तरह बोलने वाले को मैं सुन रहा था। इस से पूर्व मैंने नेता जी सुभाष चन्द्र बोस को सुना था। प्रार्थी जी ने दो-चार वाक्यों में डाक्टर परमार की प्रशंसा बड़े नपे-तुले अंदाज में की और फिर वह बोले भगवान परशु-राम के जीवन चरित्र पर, प्राचीन आर्य संस्कृति की महानता पर और अन्त में पहाड़ी भाषा की दुर्दशा तथा उसके विकास को आवश्यकता पर ! लगभग २० हज़ार व्यक्ति दम साधे वह अत्यन्त प्रभावशाली भाषण कहिये या प्रवचन सुनते रहे। वह डेढ़ घण्टे से भी ज्यादा बोले। वह चुप हुए तो लोगों ने नारे लगाये डाक्टर परमार ज़िन्दाबाद ! प्रार्थी जी की जय हो (ज़िन्दाबाद नहीं, जय हो कहा गया)। सिरमौर के लोगों को परख है उन्होंने प्रार्थी जी को महर्षि यमदग्नि की धरती तथा भगवान परशुराम की जन्म भूमि में मन्त्री कम ऋषि के रुप में अधिक देखा। फिर डाक्टर परमार बोले, बार-बार डाक्टर परमार ज़िन्दाबाद होता रहा। तब सांस्कृतिक कार्यक्रम के पश्चात जब हम रेस्ट हाऊस पहुंचे तो प्रार्थी जी बोले, डाक्टर साहिब, सिरमौर सचमुच सिरमौर है। माँ रेणुका की धरती कितनी प्यारी है। डाक्टर परमार बोले, मेरा सौभाग्य है, मुझे यह निर्वाचन क्षेत्र मिला, तभी डाक्टर परमार ने कार्यक्रम की बात कही, वह बोले, प्रार्थी जी आपने कमाल कर दिया मैं तो आपको सुनते-सुनते सृष्टि की रचना के प्रारम्भिक दौर में पहुंच गया था, पता नहीं आपका भाषण इन लोगों ने रिकार्ड किया की नहीं, प्रदेश के प्रत्येक युवा को यह सुनना तथा समझना चाहिये। प्रार्थी जी ने मुख्य मन्त्री जी का प्रशंसा के लिए

धन्यवाद किया और मेरी ओर देखते हुए उन्होंने कहा इन्होंने मुझे बोलने के लिए इतना जोश और हौंसला दिया। फिर प्रार्थी जी बोले, बहुत ही बढ़िया बोलते हो भाई! डाक्टर परमार बोले, जानते हैं, यह चन्द्र मणि है "पहाड़ी मृणाल" आप प्रदेश में भाषा का विकास करेंगे तो यह आपके बहुत काम आयेंगे। हमें ऐसे जवानों से ही आशा है। अपनी प्रशंसा सुनकर मैंने दोनों हाथ जोड़ दिये। यही वह दिन था जब से मैं प्रार्थी जी के निकट होता चला गया। रेणुका तीर्थ विकास मंडल के अध्यक्ष होने के नाते मैंने उन्हें एक बार नहीं, कई बार मई मास में भगवान परशुराम जयन्ती समारोह की अध्यक्षता के लिए बुलाया। वह आते रहे। उनकी बदौलत हमारे कार्यक्रम सफल होते रहे। सिर-मौर के लोग डाक्टर परमार के बराबर, कई बार उन से भी अधिक चाहने लगे। कवि, साहित्यकार तथा लेखक के नाते अनेकों कवि सम्मेलनों, सभाओं में, मैं उनके समीप रहा। उनके मेरे एक परिवार के से सम्बन्ध हो गए। वह सिरमौर के किसी भी स्थान के दौरे पर आते, मेरे घर ग्राम बायरी में अवश्य आते। कई बार ऐसा हुआ, मुझे पता ही नहीं कि प्रार्थी जी का सिरमौर का किसी स्थान का दौरा है और वह अचानक घर पहुंच गये। घण्टों बात-चीत होती, घर में जो पका होता, खाते, मेरे बच्चों से, पिता जी से प्यार भरी बातें करते। मैंने प्रार्थी जी को साहित्यकार, कवि, कुशल समाज सेवी तथा मन्त्री के रूप में देखा। परन्तु उनका जो रूप मैंने अपने घर के शिवालय में देखा, वह कभी भूला नहीं सकता। लगभग सब लोग प्रदेश भर में जानते हैं कि प्रार्थी जी घण्टों पूजा-पाठ किया करते थे। वह परम ईश्वर भक्त थे। परन्तु कितने लोग जानते हैं कि वह योगी ही नहीं सिद्ध योगी थे, वह गृहस्थी में रहते हुए भी महात्मा थे। वह राजा जनक को भान्ति शासन चलाते थे वह महान् योगी थे।

मेरे घर में बगीचे के बीच शिवालय है। मंदिर में पहाड़ बना है, उस पर भगवान शिव की प्रतिमा है। उसके सामने मन्दिर के केन्द्र में शिवलिंग है। प्रार्थी जी उस मंदिर में गये। यहां उन्होंने जल चढ़ाया। वह जल चढ़ा रहे थे और श्यामवर्ण शिवलिंग गुलाबी होता जा रहा था। उन्होंने लगभग दस मिनट वहां हाथ जोड़कर मौन पूजा की। फिर वहीं आसन पर बैठ कर वह मुझे समझाने लगे जीवन क्या है, मनुष्य यहाँ क्यों आया है, प्रभु और भक्त के मिलने का सरलतम उपाय क्या है। मुझे उन से बहुत कुछ मिल गया। उनकी इस कृपा से ईश्वर के प्रति मेरा मन और अधिक झुक गया, दृढ़ हो गया। अन्त में वह बोले, देवताओं की इस धरती की सेवा करने का परमात्मा किसी भी रुप में अवसर दे, परन्तु देता तो रहे, यही हमारी आज की प्रार्थना है। उनका चेहरा देव मन्दिर में गुलाब के फूल की भान्ति लाल हो गया था। एक मधुर गन्ध का आभास उनके हाथों में मुझे तब हुआ जब उन्होंने अपना कृपा भरा हाथ आशीर्वाद देने के लिये मेरे सर पर रख दिया। यह मेरा वहम नहीं है, मैंने उनके दाहिने हाथ में चमकती एक नन्ही ज्योति भी देखी, जो फिर गायब हो गई। वह पहाड़ी भाषा, संस्कृति के उत्थानकर्ता, कुशल समाज सेवी, साहित्यकार थे परन्तु बाद में पहले वह सिद्ध योगी थे उन्हें हमने ठीक से पहचाना नहीं उन्हें राज ऋषि कहकर पुकारा जाना चाहिये।

रेणुका सिरमौर, हिमाचल प्रदेश

सोमसी

स्वर्गीय श्री लाल चन्द प्रार्थी कुछ जीवन झांकियां

—चन्द्र शेखर बेब्रस

बात शायद चौथे दशक के उत्तरार्द्ध की है, लाहौर का जब हमारे चरित नायक प्रेम गिरि सनातन धर्म आयुर्वेद महाविद्यालय के अध्येता थे। उस काल में देश में विशेषतया पंजाब में आर्य समाज का बड़ा जोर था। लाहौर था। उस का गढ़, सनातन धर्मी संस्थाएं उन का प्रतिवाद थी। खंडन मंडनात्मक टकराव हाथापाई की सीमा भी लांघ जाया करता था। विद्वानों के शास्त्रार्थ तो होते ही थे, कभी शास्त्रवाजों पर तर्क वितर्क बाज़बाजी मार ले जाते थे, जब इन संस्थाओं के वार्षिकोत्सव होते थे, तो लाहौर वालों के घर मेहमानों से भर जाया करते थे। ऐसे ही अवसर पर इन पक्तियों का लेखक भी लाहौर में था। सनातन धर्म वालों के जलूस के पथ की एक दुकान पर खड़ा था, कीर्त्तन यात्रा के अनेक वाहनों में एक शकट एस. डी. कॉलजों का था जिस पर सवार एक 19-20 वर्षीय नवयुवक गाने के पद जयकारे या नारे बोल रहा था और अन्य सैकड़ों छात्र उन्हें दुहरा रहे थे जो पैदल थे। जलूस में प्रार्थी जी के सहपाठी कुल्लू के ही स्वर्गीय मोहन लाल उपाध्याय भी थे जो मुझे देख कर दुकान पर आ गये, मेरे यह पूछने पर कि यह जयकारे बुलाने वाला लड़का कहीं देखा हुआ सा लगता है तो उन्होंने बड़े गर्व से कहा कि "हां हां यह कुल्लू का नग्गर गांव का ही है, और इस की धाक अपने या संस्कृत कॉलेज में ही नहीं इंग्लिश महाविद्यालय में भी है। सौभाग्य से नेता (प्रार्थी) जी मुझे पहचानते थे, आदर से मिले, एक दिन मुझे संगीत महाविद्यालय की सांध्य कक्षाओं में ले गये, तो देखा वहां भी आचार्य महोदय के काफी मुंह लग थे।

समय बीता आप वद्य कविराज बन कर आए, पर चंचल वृत्ति युवक को व्यवसाय में आनन्द नहीं आया, और गांव गाँव सुधार या लाहौर से लायी राजनैतिक लपट को सुलगाते भड़काते घूमने लगे।

उन दिनों कुल्लू के उपमंडल अधिकारी मि. लाल. एक ईसाई युवक थे, पर राष्ट्रीयता भी उन में थी। उन्होंने प्रार्थी जी को प्रोत्साहित किया, परंतु राजनीति का कोण बदल कर, ऐसा ही हुआ देहात सुधार तीव्रतर हो उठा, उपमंडलीय मुख्यालय तब उन्ही के गांव नग्गर में था और अधिकारी महोदय का निवास भी, दो सुधार के दीवानों ने रंग जमाया।

मैदान में

लाल महोदय के बदल जाने पर प्रार्थी जी समाज सुधार को प्रोत्साहन हीन होते देख कर पुनः राजनीति में खुल कर आए, इस दौरान काफी राजनैतिक जागृति पाई जा सकी, जलसे और जुलूसों का तांता रहा, हां साहित्यिक गतिविधियां तब नहीं के बराबर थी।

लाहौर रहते हुए या वहां से आकर भी कुछ प्रकाशित करने के उपक्रम किए, इन में 'कांगड़ा समाचार' की हमें याद है (उस काल में कुल्लू कांगड़ा जिले में था)। एक दो और भी प्रयत्नों की धुंधली सी याद है जो कांवर टेढ़ी सिंह तथा अन्य लाहौर में रहने वाले कुलुई युवकों ने किए थे। हां यही समय था जब प्रार्थी जी की वाचिक शक्ति की धाक जमी और प्रत्येक धार्मिक, सामाजिक एवं राजनैतिक क्षेत्रों में आप की मांग बढ़ी। हमें तिथि बार का तो क्रम याद नही कि कौन काम किस वर्ष में हुआ, हो सकता है ये आगे पीछे लिखे जायें।

अपहरण

प्रार्थी जो इस क्षेत्र में कांग्रेस का ढोल बजा रहे थे जब कि पंजाब में सिकंदर खिजर और छोटूराम की यूनियनिस्ट (जमीन दार) पार्टी का शासन था जो कांग्रेस विरोधी थी। पंजाब में चुनाव (तब राज्यों में जिन्हें प्रांत कहा जाता था कौंसिलें होती थी और एसेम्बली होती थी केन्द्र में) होने वाले थे। सत्तारूढ़ दल की शाखा कुल्लू में भी थी, पार्टी के नेता सर छोटू राम जी दौरे पर आए और उन्होंने मनाली में पार्टी का जलसा किया, एक छोटे से जमींदार के नाते यह लेखक भी अपवाद के रूप में शामिल था। पीछे के द्वार पर लटका हुआ पर्दा हटा तो दृश्य देख कर मुझ पर मानो वज्रपात हो गया, मानो कांग्रेस लुट गई हो, क्योंकि पर्दे के पीछे से श्री लाल चन्द जी प्रार्थी काली अचकन, लट्ठे का चूड़ी दार पाजामा तथा लहरदार पगड़ी हयात खानी शुमलेदार बांधे हाथों में चौखट चढ़ा मानपत्र पढ़ने के लिए प्रकट हुए, और दूसरे ही दिन उन्हें कांग्रेस से छीन पंचायत अधिकारी बना कर जिले के दूसरे भागों में भेज दिया और अपना पथ निष्कंटक किया और सचमुच उन का यह तीर ठिकाने बैठा था।

प्रत्यावर्तन

कुल्लू में जब आप लौटे तो 1945 के चुनाव का दौर था, हम लोग उन से रुष्ट तो थे, अपने पास कोई सशक्त प्रत्याशी न होने से प्रार्थी जी को ही कांग्रेस टिकट देना पड़ता पर यह क्या उन का तो घर से बाहर रहने के कारण मतदाता सूची में नामोलेख ही नहीं हुआ था।

अब दोनों (कांग्रेस और ज़मीदार पार्टी) दलों को भय था कि यह आग बरसाने वाला यन्त्र किस ओर जाता है, अतः विरोधी पार्टी के सचिव का अपहरण करके कांग्रेस प्रत्याशी बना लेने के बाद पहला काम प्रार्थी जी को सुबह 9 बजे बिस्तर पर दबोचा गया और तभी से उन्हें धरोहर रूप में ऐसे रखा कि "ना मैं देखूं और को ना तोहि देखने देऊं"। हां हमारे लिए यही पर्याप्त था कि वे प्रतिपक्ष के हाथ नहीं लगें। और हम ने चुनाव जीता।

अभागा दौर

1947 में स्वतंत्रता के तत्काल बाद प्रलय काल की सी वर्षा हुई, न कोई सड़क रही न कोई पुल बचा, और पनचक्कियों का तो सफाया ही हो गया तब पूर्वी पंजाब की राजधानी थी शिमला और मुख्य मंत्री थे डाक्टर भार्गव मंत्रीमन्डल में भागीदार तो कुल्लू भी था, पर "मा फलेषु" वाली बात रही। सर्दी बीतते बीतते मार्च में पुनः वही प्रलय की वर्षा और बाढ़, त्राहि त्राहि का दौर और पंजाब सरकार का मौन, मानो मुख्यमंत्री ने अपने बहरे कानों में तेल भी डाल लिया हो, लोग थे कि आजादी सहित कांग्रेस को कोस कचोट रहे थे, जब अगस्त 1947 से अप्रैल 1948 तक कुल्लू क्षेत्र अलग थलग पड़ा रहा। लिखा पढ़ी से हार कर पार्टी ने एक प्रतिनिधि मण्डल अपनी गुहार नयी सरकार को सुनाने को भेजने का निर्णय किया।

उन दिनों या 1935 के आस पास कुल्लू में अहमदाबाद के एक तपे हुए वृद्ध कांग्रेसी 'नागर दास जी 'पटेल' जिनका सर्वस्व स्वतंत्रता संग्राम में स्वाहा हो चुका था राजनीति में सक्रिय थे, उन्हें और लेखक को प्रार्थी जी के नेतृत्व में प्रतिनिधि बना कर जिला (धर्मशाला) और प्राँत की सरकारों के दरबार में भेजा। शिमला में चार दिनों तक द्वार खटखटाते रहे पर एक मिनट का समय भी नहीं मिला, फिर पता चला कि यह सब पूर्वाग्रह की मार है, आक्रोश ठाठें मार रहा था प्रतिक्रिया के लिए किसी प्रकार आर्थिक बाधा पार कर दिल्ली की ओर बढ़े।

शिमला से बिदक कर दिल्ली की ओर दौड़ तो पड़े पर वहां ठहरने और कार्य सम्पादन की चिंता हुई कि पटेल जी को स्मरण हो आया कि तत्कालीन संसद के -अध्यक्ष मावलंकर कारागार में उन के बड़े भक्त रहे हैं क्यों न सुदामा और श्री कृष्ण का इतिहास दोहराया जाया, और सचमुच वही हुआ नागर दास पटेल का चिट पाते ही कृष्ण (मावलंकर) जी ने सुदामा (पटेल) को अंक में भर लिया और हम लोग सम्मान पूर्वक ठहर गये। उन्हें व्यथा कथा सुनायी। तत्कालीन केन्द्रीय गृह मन्त्री श्री बल्लभ भाई पटेल जी तो दक्षिण के दौरे पर थे, अतः हमारे आतिथ्यक ने गृह सचिव मेनन से फोन पर बात कर के विश्वास दिलाया कि इन में जिस आदमी को मैं जानता हूं सच्चा और निस्वार्थ है। लगता है तत्काल ही दिल्ली के तार प्रतिक्रिया में हिले, सवेरे हमारी मुलाकात तो मात्र दो मिनट की औपचारिकता मात्र थी।

हां प्रांत भर का लोक कर्म विभाग हमारी ओर मुड़ चुका था और सुदामा के घर पहुंचने तक महल चौवारे बन चुके थे—हां पटेल जी कुछ देर में कुल्लू पहुंचे थे।

एक पुरानी घटना और स्मरण हो आयी, तब द्वितीय महायुद्ध चल रहा था कुल्लू के लोग जो सेना की ओर से उदासीन ही रहते हैं को अधिकाधिक सेना में भर्ती होने के लिए प्रोत्साहन देने के लिए किसी अंग्रेज अधिकारी को किसी ने सुझाया कि यदि आस पास के ग्राम देवताओं को पूरे ठाटबाट सहित बुलाया जाय तो खूब भीड़ एकत्र हो सकती है और ऐसा ही हुआ। एक दिन कुल्लू में प्रातः से ही चारों ओर से बाजे बजते सुनाई दिए, एकाध देवता तो आए दिन चलते ही रहते हैं पर इतने प्रचर उपकरणों सहित सब देवता तो दशहरे में भी नहीं आते, देखते देखते ढालपुर के विशाल मैदान में मेला लग गया, परन्तु यहां उन्हें संभालने वाला कोई नहीं, सभी अंधेरे में एक समय की रोटी तो लोग लाए होंगे दूसरे को कहाँ जाएं, कि इतने में प्रार्थी जी कहीं से टपक पड़े। इस बेवक्त के जमावड़े पर तो सभी हैरान थे ही अब परेशान भी हो उठे कि यह कैसा मजाक हुआ। उदासीन प्रकृति के कुलुई लोगों को जगाने का यह अच्छा अवसर था और प्रार्थी जी ने इसका पूरा लाभ उठाया, देवताओं का जुलूस बना। छोटे अफसरों ने निराश हो कर उप-मंडल अधिकारी को बुलाया परंतु तब तक लोग जा चुके थे।

उन में और दूसरे गुणों सहित भाषण कला भी खूब थी और वे लोगों को कायल करने में सिद्ध हस्त थे। राजनैतिक क्षेत्र में स्तर उन का जनता को मुग्ध करने का अधिक था। इस क्षेत्र में अंतिम बार वे बिमारी की असमर्थता वश लोक संपर्क छूट जाने से सही अनुमान करने में चूक गए, जब कि 1977 की जनता लहर को वे बमिारी के कारण बचा गये थे। बिमारियों आदि के कारण उन के शरीर ने सहयोग छोड़ दिया था और वे बिना आयु के बुढ़ा हो गये थे। ढेर सारी दवाइयां भी कहां तक संभालती जब शरीर का कोई भी अवयव स्वस्थ नहीं था। और अतत......... ..

कला पक्ष

वे रसिक स्वभाव के थे अतः उर्दू शायरी पर उन का पर्याप्त अधिकार था। गज़ल गोई में उनका अपना स्थान था क्योंकि उनकी शिक्षा तत्कालीन सुविधा अनुसार उर्दू माध्यम से हुई थी, हिन्दी उनकी गुजारा मात्र थी, अतः उर्दू क्षेत्र में वे अच्छा स्थान बनाए हुए थे। मिर्जा गालिब के तो अनन्य भक्त थे, कई बातों में गालिब को भी पीछे छोड़ जाते थे। प्रार्थी जी की अपनी रचनाओं (कविता) का कोई सग्रह नहीं देखा, गद्य तो आप खूब लिखते थे पर उन की गजलों का अप्रकाशित रहना खटकने वाली बात रह गई।

वे कलाकार से अधिक कला पारखी और पोषक थे, अकबर और राजा संसार चन्द की भांति उन्होंने गुणवानो को प्रोत्साहित किया, उभारा और उनको यथा स्थान स्थापित किया, गुण ग्राहक के हैराने से ही तो गुण लुप्त हो जाते हैं। वे उचित

सोमसी

समय पर कला-भाषा और संस्कृति विभाग के संरक्षक के रुप में हिमाचल के मन्त्री पद पर नियुक्त हुए और उपर्युक्त सम्पत्तियों और इन के प्रतिनिधियों की रक्षा हुई पूज्यों की पूजा हुई, पहाड़ों की चोटियों, घाटियों में छिपे पड़े कलाकारों को खोज खोज कर प्रकाश में लाया गया, उन की बोलियों, लोक साहित्य और कलाओं को मंच पर उतारा, ये सभी काम प्रार्थी जी की ही छत्र छाया में पनपे, उन्हें हिमाचल प्रदेश की माटी, पत्थर, वनों और जनों पर गर्व था। हिमाचल प्रदेश के सौम्य स्वभाव लोगों और भोली भाली महिलाओं पर नाज़ था। वे इस बारे में चुनौती पूर्ण भाषा में बोलने से भी नहीं चूकते थे।

कुलूत देश की कहानी

यह संग्रह ग्रंथ यदा कदा देशी विदेशी असंख्य इतिहास के विद्वानों की कुल्लू के सम्बन्ध में लिखे अपनी खोजों के निष्कर्षों ही नहीं वैदिक और पौराणिक एवं अनेक काव्य नाटकों में वर्णित कुल्लू के महत्त्व दर्शाने वाले अभिलेखों का जो यत्र तत्र बिखरे पड़े थे का अनुपम प्रयास है। इस संकलन एवं अपने शोध कार्यों के प्राप्त निचोड़ का अवलोकन करके उनके अध्ययन और अपनी जन्म भूमि के निमित श्रद्धा भक्ति का परिचय मिलता है। उन्होंने कुल्लू एवं बाहर वालों को कुल्लू की पहचान उपलब्ध कराई है।

स्व. लाल चन्द प्रार्थी कुल्लू की प्राचीन राजधानी नग्गर (जो अब एक गाँव रह गया है) के ब्राह्मण कोठी मुहल्ले में ब्राह्मण कुल में उत्पन्न हुए, कहते हैं इन का कुल लाहौल त्रिलोकनाथ क्षेत्र के इसी नाम के गांव से आकर यहाँ बसा है, परन्तु अब यह किवदंती मात्र शेष है, जब कि राजा जगत सिंह (1637-1662) के समय इसी गांव के किसी ब्राह्मण ने कुल्लू की तत्कालीन राजधानी मकड़सा या मकदाहर (अब हुरना) जाकर सिद्ध वैरागी कृष्ण दास पयहारी की उन के घर के पास झीड़ो की गुफा में होने की सूचना दी थी। ऐसा एक जगह उल्लेख मिला है। ये वंश राजाओं की कुलदेवी त्रिपुरा सुन्दरी के पुजारी हैं। जबकि इनकी अपनी कुलदेवी काइस की दशमी वरदा या दश महाविद्याओं में दसवीं कमला देवी है। शेष बातें प्रत्यक्ष हैं।

उपसंहार

यह हमने कुछ ऐसे प्रसंग लिखे हैं जो सर्व विदित नहीं है, और इन्हें जानने वाले अब जीवन के अन्तिम किनारे पर पहुंच रहे हैं।

बाकि उनके बारे में बहुत कुछ लिखने को है परन्तु लेखनी को निर्बाध चलाना कठिन है, झटके भी बीच में बहुत हैं, फिर भी यह छोटी सी भेंट अपने कुल्लू एक विभूति के अर्पण है।

ढालपुर
कुल्लू (हि०प्र०)

लाल चन्द प्रार्थी : एक राजनितिज्ञ : एक कलाकार

-- हरिराम जसटा

प्राय: राजनीतिज्ञ कुछ देर जुगनुओं को भान्ति चमकने का नाट्य करते हैं, फिर विस्मृति के महाअंधकार में विलीन हो जाते हैं। न कोई उन्हें याद करता है, और न ही उन्होंने याद रखने लायक कोई कार्य किए होते हैं। परन्तु कुछ ऐसे राज नेता भी होते हैं, जो अपनी या सामाजिक साहित्यक एवं राजनैतिक जीवन पर छोड़ जाते हैं। श्री लाल चंद प्रार्थी उन इनेगिने राजनेताओं में से एक थे।

राजनीति में वे सदैव राष्ट्रपिता महात्मा गांधी और राजनेता पंडित जवाहर लाल नेहरू के प्रशंसक एवं भक्त रहे। कुल्लू जब तक पंजाब में रहा, उनका सदैव यही प्रयत्न रहा कि पंजाब पहाड़ी क्षेत्र का विशेष कर कुल्लू का उचित स्थान हिमाचल प्रदेश में है। उन का यह स्वप्न पहली नवम्बर, 1966 के दिन चरितार्थ हुआ। उस दिन पंजाब के पहाड़ी क्षेत्र कांगड़ा, ऊना, नालागढ़, शिमला और कुल्लू हिमाचल प्रदेश का भाग बन गए। प्रदेश के निर्माता के साथ उनका यह घनिष्ट सहयोगी जीवन पर्यन्त रहा।

हिमाचल प्रदेश के मन्त्री मण्डल में जब से प्रार्थी जी आए, साहित्यिक एवं कलात्मक गतिविधि में गहरी रूची लेते रहे। इसलिए जब हिमाचल की भाषा, कला एव संस्कृत अकादमी की स्थापना हुई, डाक्टर परमार ने उन्हें ही इसका पहला अध्यक्ष चुना। इस कार्य को ऐसी कार्य कुशलता से चलाया कि सारे प्रदेश में पहाड़ी भाषा आन्दोलन और पहाड़ी कवि सम्मेलनों की लहर सी आ गई। पहाड़ी भाषा को लेकर अनेक गोष्ठियों एवं समाचार पत्रों में चर्चे हुए और हिमाचल प्रदेश को जैसे उसकी आत्मा मिल गई।

प्रार्थी जी स्वयं उर्दू और पहाड़ी के अच्छे कवि थे इसलिए प्रदेश का कोई कवि सम्मेलन उनके बिना निष्प्राण सा लगता था। उनकी कल्पना का हिमाचल प्रदेश उनकी इन पक्तियों से अभिव्यक्त होता है :—

चम्बा कुल्लू कांगड़ा कनै जम्मू इक देश ग्रो।
ऊना देहरादून हिमाचल प्रदेश ग्रो॥

ऐसे हिमाचल की कल्पना वह क्यों करते थे, इसका कारण बताते हुए वह प्राय: कहा करते थे :

इक म्हारा खाण पीण इक परोग्रार ग्रो ।
इक रहण बेहण. इक ग्रंगण दुग्रार ग्रो ।।
इक चज चार इक ग्रांदरां पलेस ग्रो ।
ऊन्ना देहरादून हिमाचल प्रदेश ग्रो ।।

पहाड़ी जीवन की आत्मा के पारसी प्रार्थी की प्रत्येक कविता की पंक्ति से जीवन की गहन अनुभूति टपकती थी।

हिमाचल अकादमी की पहली बैठक जब उनके सभापतीत्व में हुई, तो एक सदस्य के रूप में मेरा भी उनसे प्रथम परिचय हुआ। पहली मुलाकात में ही मुझे सहज अनुभूति हो गई थी, कि अध्यक्ष पद की कुर्सी पर बैठा यह व्यक्ति, लम्बी दाड़ी, सिर के लम्बे बाल कलात्मक रूप से संवारे हुए, ऐनक पहने, सांवला रंग, कोई साधारण राजनीतिज्ञ नहीं, अपितु एक ऐसा कलाकार है, जिसकी जीवन पर गहरी पैठ है और जिसकी आंखों में हिमाचल प्रदेश भारत का मुकुट बनाने का सपना भूल रहा है। हर बात वह बड़े तरीके से कहते थे। वह स्वयं ही अच्छे वक्ता, कवि और लेखक नहीं थे, अपितु जिनमें यह प्रतिभा होती थी, उनकी कदर करना जानते थे। कदम-कदम पर उनका प्रेरणा और आशीर्वाद देना नहीं भूलते थे उनका राजनीतिक जीवन इतना व्यस्त था, कि ठोस रूप से साहित्य एवं कला के क्षेत्र में वह कुछ करना चाहते थे, वह कर नहीं पाते थे। फिर भी जैसे तैसे उन्होंने अपने अनेक खोजपूर्ण लेखों का संग्रह "कुलूत देश की कहानी" प्रकाशित कर ही लिया था। उसे कुलूत एवं समस्त पहाड़ी जन समाज को युवा पीढ़ी को इस प्रदेश के साथ उन्होंने समर्पित किया।

निज गौरव का कुछ ज्ञान रहे।
हम भी कुछ हैं यह ध्यान रहे ।।
सब जाए ग्रभी पर मान रहे।
मरणेतिंर गूंजित गान रहे ।।

इस पुस्तक की भूमिका में डाक्टर परमार ने लिखा था कुलूत देश की कहानी के लेखक श्री लाल चन्द प्रार्थी हिमाचल प्रदेश के वन मन्त्री तथा मेरे सहयोगी हैं। हिमाचल प्रदेश के इतिहास के प्रति उनकी सजगता तथा संस्कृति के प्रति उनका लगाव प्रदेश के भीतर तो जाना माना रहा हा है लेकिन इस कृति के माध्यम से उनका परिचय एक व्यापक क्षेत्र तक पहुंचेगा-यह बात मैं आशा और विश्वास के साथ कह सकता हूं। प्रार्थी जी के साहित्यक जोवन को स्मृति शेष यह पुस्तक तथा विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित

उनकी पहाड़ी और उर्दू की कवितायें हैं। उनकी समस्त कविताओं का संग्रह प्रकाशित होना चाहिए, ताकि उनकी काव्य प्रतिभा का सही मूल्यांकन हो सके।

जीवन के अन्तिम अध्ययन में वह राजनीतिक जोवन से बड़े क्षुब्ध और निराश रहे। डाक्टर परमार के समय राजनीति में उनको जो आदर मिलता रहा, वह डाक्टर परमार के त्याग-पत्र के साथ समाप्त सा हो गया। डा० रामलाल जब मुख्य मन्त्री बने, तो वे भी उनके हिमाचल कला-संस्कृति के प्रति अनुराग के कायल थे, परन्तु कुछ राजनीतिक दबाव और धड़ेबन्दी के कारण वे भो उन्हें भाषा एव कला अकादमी का फिर से अध्यक्ष न बना सके। यह बात स्वयं प्रार्थी जो ने बिमारो के दौरान शिमला में कहा थो। उनके अकादमी के अध्यक्ष न रहने से साहित्यिक एवं कला गतिविधियों में शिथिलता और दिशा हीनता की स्थिति आ गई, क्योंकि किसी अन्य अध्यक्ष में कला और साहित्य के प्रति उन जैसी गहरी रुची, लग्न, निष्ठा बिल्कुल नहीं आ सकी। इसलिए आज भी हिमाचल प्रदेश के कलाकार एवं साहित्यकार इस फर्क को अकबर इलाहबादी के शब्दों में समझते हैं।

पुरानी और नई रोशनी में फरक इतना है।
उन्हें किश्ती नहीं मिलती, इन्हें साहल नहीं मिलता॥

प्रार्थी जी जब भी हमसे मिलते, बड़ी सहृदयता और प्रेम से मिलते और साहित्यक एवं कलात्मक प्रगति के बारे में पूछताछ करते। मैं पहली बार जब 1971 में अपनी पुस्तक "हिमाचल गौरव" उन्हें भेंट करने गया, तो कुछ देर पुस्तक का अवलोकन करने के बाद कहने लगे, "जसटा जी! हिमाचल लोक जीवन के जिन विषयों (हिमाचल के लोक नृत्य, लोक संस्कृति, लोक साहित्य, भाषा एवं कथा सम्बन्धो) पर आपने कलम उठाया है, उनमें प्रत्येक विषय पर भविष्य में एक विस्तृत ग्रथ की रचना की अपेक्षा है। "उनकी प्रेरणा से मैंने हिमाचल प्रदेश के लोक नृत्य" पर पुस्तक लिख डाली। उसे पढ़कर उन्हें सन्तोष हुआ। वह चाहते थे, कि हिमाचल प्रदेश का प्रत्येक लेखक एवं कलाकार को धल धूसरित हिमाचल के हीरों को भावी-पीढ़ी के लिए उठाकर सुरक्षित करने की दिशा में प्रयत्नशील रहना चाहिए। पहाड़ी भाषा में जो कुछ अच्छा है उसे प्रकाशित किया जाना चाहिए, ताकि हिमाचल की लोकवाणी को भारत के साहित्य अकादमी में वहीं स्थान मिल सके, जो डोगरी, कोंकणी और अन्य स्थानीय भाषाओं को मिला है। बाहर के कुछ लोग डाक्टर परमार और प्रार्थी जी के पहाड़ी जन संस्कृति के आन्दोलन पर अनेक शंकाएं प्रकट करते रहे, परन्तु उन दोनों ने पहाड़ी आत्मा को निखारने, संवारने और आदर का स्थान दिलाने के लिए जीवन भर प्रयत्न किया।

एक बार प्रार्थी जी से मिला और भाषा अकादमो में किसी अनुभवी साहित्यकार या कलाकार को लाने की बात कही तो सहसा उन्होंने उत्तर दिया। आप ठीक कह रहे हैं,

परन्तु हमारी कठिनाई यह है, कि यदि मैं हिमाचल प्रदेश के एक भाग के व्यक्ति को उच्च पद पर लाता हूं, तो मुझ पर यही लांछन आएगा, कि प्रार्थी जी पक्षपात कर रहें हैं। जब तक बाहर का व्यक्ति भाषा विभाग का निदेशक रहेगा, मुझ पर कोई उंगली नहीं उठाएगा" ।

अकादमी के कार्य चलाने के लिए जब कभी बजट की कमी आ जाती थी या कोई योजन धनाभव से कार्यान्वित नहीं हो पात थी, तो प्रार्थी जी बड़े आत्म विश्वास के साथ कह देते थे—मैं स्वयं डा० परमार को कहकर अमुक राशि दिलवा दूंगा" । डा० परमार उनका इतना सम्मान करते थे, कि उन्होंने कभी अकादमी के कार्य में धनाभाव के कारण रूकावट नहीं आने दी ।

अकादमी द्वारा आज तक चलाए गए कार्यक्रमों में "लेखकों को प्रोत्साहन देना", कुल्लू का कलाभवन, दशहरा उत्सव मनाने की योजना, लोक संगीत एवं लोक नृत्यों को प्रोत्साहन देना, लोक कलाकारों को प्रोत्साहन देना, पहाड़ी भाषा, लोक साहित्य पर अनेक ग्रन्थों को प्रकाशित करना जैसी अनेक योजनाएं ऐसी हैं, जो आज तक सफलता पूर्वक चल रही हैं। इन योजनाओं के कार्यन्वयन से हिमाचली संस्कृति एवं कला का अपना व्यक्तित्व देश के सांस्कृतिक क्षितिज पर उभर सका है। ऐसे ही अनेक कार्य के प्रेरणा स्त्रोत लाल चन्द प्रार्थी के प्रति हम सदैव ऋणी रहेंगे। उन्हें स्मरण करते रहेंगे और उनकी स्मृति शेष की सुमन अर्पित करते रहेंगे।

अम्बिका निवास,
संजौली, शिमला-६

स्वर्गीय श्री लाल चन्द प्रार्थी 'चांद कुलवी' एक संस्मरण

सत्य प्रकाश ठाकुर

यह 1973 की बात है जब मुझे एक बार स्वर्गीय श्री लाल चन्द प्रार्थी जी के साथ देहली जाने का सुअवसर प्राप्त हुआ था। सारे रास्ते भर में कार यात्रा के दौरान वह प्रदेश की भाषा, कला और संस्कृति के बारे में विस्तार पूर्वक वर्णन करते रहे। वह स्वर्गीय डाक्टर यशवन्त सिंह परमार 'हिमाचल निर्माता' के नेतृत्व में इस बात के लिए दृढ़ संकल्प थे कि चाहे हिमाचल के विभिन्न जिलों की बोलियाँ कुछ-कुछ भिन्न हैं, परन्तु वह इस बात को मानते थे कि पहाड़ी प्रदेश की मूलभूत भाषा एक है। केवल कुछ शब्दों का तालमेल जोड़ने वाली बात है। इसलिए डाक्टर परमार की प्रेरणा में भाषा, कला एवं संस्कृति विभाग की रचना की गई व श्री लाल चन्द प्रार्थी जी को इस विभाग का मन्त्री बनाया गया। भाषा के आधार को प्रार्थी जी ने बड़ी सुन्दर एवं सशक्त लेखनी में अपनी पुस्तक 'कुलूत देश की कहानी' में उदाहरण सहित प्रस्तुत किया है। उन्होंने इस पुस्तक द्वारा यह प्रमाणित करने की कोशिश की है कि कुल्लू से गढ़वाल तक के लोगों की भाषा कला एवं संस्कृति एक है। इसलिए यहां के लोगों का रहन-सहन, खान-पन, रीति-रिवाज, लोक-नृत्य, गीत की शैली लगभग एक सी है।

हिमाचल प्रदेश के विभिन्न मेलों एवं त्यौहारों को हिमाचली रंग में मनाने का गर्व उनके जीवन का महत्वपूर्ण अंग रहा है। उन्होंने बड़े चाव एवं लग्न से कुल्लू की कला, संस्कृति को जीवित रखा है। वह इस बात के लिए जीवन भर दृढ़ संकल्प रहे, कि कुल्लू का लोक नृत्य एवं वेशभूषा को अपनी गौरवमयी परम्परा के अनुसार बनाए रखा जाए। उन्होंने इस कार्य के लिए ज़िला भर के कला प्रेमियों को हमेशा प्रेरणा दी। जिस की ज्योति आज भी कुल्लू के कला प्रेमी जलाये हुए हैं। कुल्लू लोक नृत्य को अपने प्रयत्नों से अधिक सुन्दर एवं आकर्षक बनाया। इस के लिए उन्होंने अनथक प्रयत्न किए थे। भाव विभोर होकर बातचीत के दौरान बताने लगे कि जब उन्होंने कुल्लू लोक नृत्य में पुरुष एवं महिला दोनों के शामिल होकर सामूहिक नाच का प्रयोग किया तो इस का घोर विरोध हुआ था। परन्तु उन्हें इस बात की खुशी थी कि जिस प्रयत्न का पहले घोर विरोध हुआ था उसका आज सर्वत्र स्वागत हो रहा है। कुल्लू दशहरा में कला-संस्कृति को जीवित रखने के लिए उन्होंने कला-केन्द्र का निर्माण करवाया जो आज सारे हिमाचल प्रदेश के कला प्रेमियों का संगम एवं केन्द्र बिन्दू बन गया है। आज कुल्लू का

दशहरा 'अन्तंराष्ट्रीय लोक नृत्य मेला' के रूप में मनाया जाने लगा है। यह सब उनके प्रयत्नों का फल है। जिस प्रकार वह लोक नर्तक एवं नर्तकी की वेशभूषा को यथावत बनाए रखने के बारे में बता रहे थे तो मेरा सिर उनकी कला साधना के प्रति समर्पण की भावना से झुक गया। लगा कि एक सच्चा कला का प्रेमी अपनी अराधना में पूर्ण परिश्रम एवं लग्न के साथ लीन है जो कि हिमाचल की कला का स्थान सारे देश भर में ऊंचा रखने के लिए दृढ़ संकल्प है। उन्होंने बताया कि वह किस प्रकार अतीत में कुल्लू के लोक नृत्य द्वारा गणतन्त्र दिवस में भाग लेने से पहले कई महीना अभ्यास करवाया करते थे। सुजानपुर के होली मेले का जब वर्णन करने लगे, तो उनकी आँखों में एक चमक थी कि यह मेला अपने आप में बहुत सुन्दर एवं आकर्षक है। वह इस मेले को सही पुराने रुप में मनाने के लिए दृढ़ संकल्प थे। इसी प्रकार रेणुका मेले को सिरमौर की पुरानी परम्परा के अनुसार मनाने की डाक्टर परमार की चाह की भी उन्होंने चर्चा की।

प्रार्थी जी बड़े ही भक्ति प्रवृति के व्यक्ति थे। वह अपना बहुत सारा समय भगवान के ध्यान में लगाते थे। देवी-देवताओं में उन की पूर्ण आस्था थी। वह कुल्लू को 'अठारह करड़ओं' का देश कहा करते थे। देवी-देवताओं की पूजा एवं उनके बारे में उनका ज्ञान बहुत पूर्ण था। उन्होंने अपनी पुस्तक 'कुलूत देश की कहानी' में इस का वर्णन बड़े सुन्दर शब्दों में किया है। जब वह प्रदेश एवं कुल्लू के देवी-देवताओं एवं मन्दिरों के बारे में बताने लगे तो मेरी जिज्ञासा बहुत बढ़ी। मैंने पाया कि इस बात के लिए उनके दिल में तड़फ थी कि देवी-देवताओं एव मन्दिरों का प्रबन्ध और अधिक ठीक ढंग से किया जाना चाहिए, ताकि लोगों की आस्था इनके प्रति बढ़ती जाए और मूलभूत संस्कृति को बचाया जा सके, जो कि अपने आपमें बहुत ही प्राचीनतम एवं धनी है। जब वह प्रदेश के देहाती इलाके में जाते थे तो हमेशा पहाड़ी बोली में भाषण देते थे ताकि प्रदेश के लोग पहाड़ी बोली बोलने में गव महसूस करें। आज इस प्रथा का आम प्रचलन हो गया है।

चूंकि यह सारी बातें बहुत ही रोचक एवं ज्ञान बर्धक थी जिस कारण सारे रास्ते भर में इस विषय पर चर्चा होती रही। इस प्रकार चर्चा करते-करते हम करजन रोड़ होस्टल नई दिल्ली पहुंच गए। उनकी कार का ड्राईवर जब मुझे अलग में मिला, तो कहने लगा कि आज तो कमाल हो गया, कि आपने सारे रास्ते भर प्रार्थी जी को बातों में व्यस्त रखा। वह सारे सफर में तनिक भर भी नहीं सोए, हालांकि जब इससे पहले कभी इस सफर में आते थे तो बहुत सारे सफर में आराम करते थे। क्योंकि सफर के सिवाए तो वह हमेशा कलाकारों, लेखकों, बुद्धिजीवियों, लोगों एव राजनीतिज्ञों में घिरे रहते थे। मैंने कहा कि यह मेरा सौभाग्य है कि आज हिमाचल की भाषा, कला एवं संस्कृति के मसीहा से इतनी सारी ज्ञान वर्धक, रोचक एवं ऐतिहासिक बातें सुनने को मिली हैं। चूंकि मैंने रूचि दिखाई, इसलिए प्रार्थी जी ने एक सच्चे भाषा, कला और संस्कृति के भक्त के नाते अपना सारा आराम का समय मुझे दिया। वह हिमाचल

प्रदेश को पहाड़ी प्रदेश के तौर पर अपनी 'अलग पहचान,' बनाए रखाने के लिए भी हमेशा डा. परमार के साथ कधे से कन्धा मिला कर कार्य करते रहे । सफर में जब कभी अच्छे मूड में होते थे तो कुछ शेयर या गज़ल की पंक्तियां भी सुना दिया करते थे। चूंकि उन्हें पता था कि मुझे उर्दू, फारसी का बहुत कम ज्ञान है। इसलिए उन पंक्तियों का अनुवाद वह सरल भाषा में कर दिया करते थे।

प्रार्थी जी को बीमारी की वजह से तकलीफ थी जिस कारण वह रात को भी आराम से सो नहीं सकते थे। इस बार शिमला से चलने से पहले उन्होंने सुबह भी काफी कार्य किया था और रास्ते भर में भी बातें करते रहे थे इसलिए उस रात उनकी तबीयत ठीक नहीं थी। मैंने देखा कि वह इस तकलीफ की घड़ी में भी कलम लेकर कुछ लिख रहे थे। मैं थका हुआ था इसलिए जल्दी सो गया, परन्तु जब सुबह उठते ही प्रार्थी जी ने तकलीफ की हालत में बैठकर जो लिखा था मुझे बड़े चाव से सुनाया, तो मैं आश्चर्यचकित हुए बिना न रह सका। पक्तियों के भावात्मक अर्थ मुझे समझाए तो मैंने पाया प्रार्थी जी सचमुच हो 'चान्द कुलवी' हैं जो कि हिमाचल की भाषा, कला एवं संस्कृति के प्रति पूर्ण समर्पित हैं। मैंने प्रभु से प्रार्थना की कि वह प्रार्थी जी को लम्बी आयु दे जिस से कि हिमाचल की भाषा, कला और संस्कृति की वह अनमोल सेवा कर सके। आज भी जब मुझे उस रोचक यात्रा की याद आती है तो बरबस ही आँखों से आंसू टपक पड़ते हैं।

"चांद", जो कभी न होगा माँद

-- मनोहर सागर पालमपुरी

आज उस महान व्यक्ति को दिवंगत हुऐ एक वर्ष भी पूरा नहीं हुआ। 11 दिसम्बर, 1982 के दिन श्री लालचन्द प्रार्थी इस नश्वर ससार से नाता तोड़ कर कई स्नेहियों को बेजान सा कर गये थे, उन में से एक मैं भी हूं। उनके बारे में यह सोचते हुए कि वह बे-जिस्म हो कर अब हमारे बीच में नहीं हैं, कलेजा मुंह को आता है, उनके बारे में कुछ कहने से पूर्व उनका एक शेयर मेरे ज़ेहन में उभरता है :—

नज़र का फर्क है या सूरतें यकसां सी लगती हैं।
फ़रिश्तों की भी अब तो शक्ल पहचानी नहीं जाती॥

इस शेयर का अर्थ साफ है कि आज का मनुष्य कितना बेचेहरा हो चुका है, कि सज्जन और दुर्जन दोनों एक से दिखाई देते हैं।

ऐ चांद आ भी जाओ, दमे-लुत्फे-आगही।
हम लौट के परदेस से घर आए हुए हैं॥

कितनी दीर्घ दृष्टि थी उनकी! मानव जीवन के हर पद का अनुशीलन वह कितनी बारीकी से करते थे, इसी शताब्दि के दूसरे दशक के अन्त में उन का जन्म हुआ था और अपने इतने छोटे से जीवनकाल में जो काम वह कर गये हम में से बहुत से वैसा काम दो-दो जन्मों में भी नहीं कर पायेंगे।

दमे-लुत्फे-आगही का अर्थ है स्वयं को जान लेने की प्रसन्नता का क्षण। यहाँ उन्होंने अपने उपरोक्त शेयर द्वारा यह कहा है कि जब तक वह अपने आप से परिचित नहीं थे वह देश में होते हुए भी अपनों के लिए परदेसी थे लेकिन अब वह स्वयं को जान चुके हैं, इसलिए कोई भी अपना उन की प्रसन्नता को उनके साथ भोग सकता है, बात समझने की है।

उस शायर, विद्वान एवं साहित्य मनीषी का एक देशभक्त के रूप में यदि स्मरण करें तो यह मानना पड़ेगा कि नये हिमाचल प्रदेश के निर्माण में उन का कितना महत्वपूर्ण योगदान रहा है। अपनी सरल हृदयता, दूरदर्शिता एवं राजनैतिक सूझ बूझ की न केवल हिमाचल प्रदेश में ही बल्कि सारे भारत में गहरी छाप छोड़ने वाले इन्सान थे स्वर्गीय प्रार्थी जी। उनकी ओजपूर्ण वाणी में कला का जादू था। हर बात वह बड़े नपे तुले ढंग से करते थे और उनके वार्तालाप में व्यंग्य के छींटे हर एक मिलने वाले का मन मोह लेते थे।

प्रार्थी जी से मेरी जान पहचान 1958 में हुई थी और फिर आगे चल कर तो यह पहचान अटूट घनिष्टता में परिणित हो गई, वह मुझे इसलिए भी अपने निकटतम समझते थे कि मैं उनसे केवल उनकी कृपा के अतिरिक्त और किसी भौतिक उपलब्धी का इच्छुक नहीं था। उनके व्यक्तित्व से मुझे इश्क की हद तक लगाव था। जब वह पंजाब विधान सभा के सदस्य थे तो होटल "ओबराये माऊन्ट वियू" में आयोजित एक मुशायरे में मेरी गज़ल पर मोहित हो उठे थे, गज़ल उस समय मेरी आयु और मिज़ाज के अनुरूप थी, उसका मतलब था :—

इतने करीब आके न अब दूर जाईए।
पलकों की राह चल के मेरे दिल में आइए ।।

आज यह गजल मुझे बचकाना हरकत सी लगती है लेकिन उस दिन यह जमी थी। उस से पहले मैं उनके "फ्लैट" पर उनसे मिलने पहुंचा तो वह कुछ दिनों से बीमार चले आ रहे थे। मझे देखते ही वह स्वस्थ होने का अभिनय करने लगे लेकिन मैं समझता हूं यह उनका शिष्टाचार था, मेरे मना करने पर भी वह "माऊन्ट वियू" होटल तक मुझे सुनने के लिए गए। किसी व्यक्ति को दुःखी देख कर वह अत्यन्त द्रवित हो उठते, हिन्दी—संस्कृत, उर्दू-फारसी और अंग्रेजी भाषाओं के वह विद्वान थे। उनका उच्चारण बड़ा शुद्ध था। अपनी मातृ भाषा पहाड़ी से उन्हें असीम स्नेह था। अपने अंतिम दिनों तक, सत्ताच्युत होने के बाद भी वह पहाड़ी भाषा के संवरधन और संरक्षण के लिए प्रयत्नशील रहे।

प्रार्थी जी के जीवन के असंख्य रोचक संस्मरण मुझे याद है लेकिन उन जैसी महान् शख्सीयत के जीवन के विभिन्न एवं असंख्य पहलुओं पर विस्तार से कुछ कह पाना इस लेख के कलेवर की क्षमता से बाहिर की बात है। इस के लिए एक बड़ी पुस्तक दरकार होगी उनकी पत्रों द्वारा मुझे प्राप्त हुई उनकी गज़लें मेरे पास एक संग्रह की सूरत में सुरक्षित हैं। मैंने हाल ही में उन के उर्दू कलाम का एक संकलन तैयार किया है जिसका शीर्षक "वजूदीअदम" अर्थात् जीवन-मरण। मैं शीघ्र ही उनके मुझे प्राप्त हुऐ पत्रों पर आधारित एक पुस्तक तैयार कर रहा हूं जिसके अवलोकन एवं अध्ययन से उस महान हस्ती के प्रेरणा-दायक विचारों से पाठक लाभान्वित हो सकेंगे, ऐसी मुझे आशा है।

1978 में उन्होंने निम्नलिखित क़तअ मुझे लिख भेजा था :—

खुश्क धरती की दरारों ने अगर साथ दिया।
उनकी आशाओं का बादल हूँ बरस जाऊंगा ॥
कौन समझेगा कि फिर शोर में तनहाई के।
अपनी आवाज़ भी सुनने को तरस जाऊंगा ॥

कितना प्यार था उस शख्स को अपनी धरती से, एक स्थान पर कहते हैं :—

दुनियां नकाब ओढ़ के ढूंडे हैं रास्ता।
क्या रूशनास इस को कराएं डगर से हम ॥

अपने 28/11/80 के पत्र में लिखते है :—

मुज़मिहल अब तो हुए जाते हैं आज़ा ऐ चांद।
ज़िंदगी किस तरह गुज़रेगी, खुदा जाने है ॥

"मेरे मजमूआए कलाम को मंजरे आम पर लाना आप की ज़िम्मावारी है," काश यह काम मैं उनके जीते जी कर पाता।

अकादमी के बारे में इसी पत्र में लिखते हैं। "अकादमी की आज़ाद हैसीयत गई, खाना बदोशों का मसकन है अकादमी अब। बुझे हुए चरागों का धुआं—देखलिया 10 साल कुरसीए वज़ारत का मज़ा भी और अब चार साल फ़रशे-राह हुए भी, अपनों को देखा, गैरों को अजमाया, आंखे खुलीं, दिमाग में एहसासात का एक तलातम भी आया और चोटें भी पड़ी, अपनों को बेगाने बनते देखा और बगले झांकते देखा। आप भी हैं कि बेन्याजी के साथ मेरे रहे और आज भी हैं, जिन लोगों को अपने हाथ से बनाया उन्हें मन्दिर में भगवान बने भी देख रहा हूं, जो अब किसी को ख़ातिर में नहीं लाते। क्या क्या रंग हैं। इसी का नाम दुनिया है जिसके पीछे लोग बेतहाशा भागे जा रहे हैं—डाक्टर परमार के किए कराए पर पानी फिरना था सो फिर गया है, अब अच्छे वक्त से आने रहे"।

प्रार्थी जी का अन्तिम पत्र मुझे 8 जुलाई, 1982 का लिखा हुआ मिला था। उसके चार मास बाद उनका देहावासन हो गया। उस महान व्यक्ति का मनोबल कितना ऊंचा था। चुनाव हारने के बाद के इस पत्र में लिखते हैं—"चुनाव हार जाने पर मेरा बाल

तक नहीं हिला क्योंकि महज़ कामयाब होना ही मक्सद नहीं था "बात आ पड़ी थी गरदिशे-कौलो-निहार की"। कुल्लू में मुझे "डेडवुड डिकलेयर" कर के यहां वह लीडरशिप उभरना चाहती थी जिसे मैंने जिंदगी भर उभरने नहीं दिया। उन लोगों ने ही मिल कर रामलाल को वरग़लाया और इतना खिलाफ कर दिया कि इलैक्शन कमिशन के ऐलान से भी दो माह पेशतर उसने यहां अवामी जलसों में अपने उमीदवारों के नामों का ऐलान भी कर दिया। बस मेरे और मेरे खुददार साथियों के लिए यह ताजियाना ही काफी था। और हम ने तहयिया कर लिया कि यह साज़िश कामयाब नहीं होने दी जायेगी चाहे उसकी कितनी भी क़ीमत चुकानी पड़े, लिहाज़ा पांच सात लाख रूपये और तकरीबन एक नदी व्यास जितना शराब उण्डेल देने पर भी जिनको कामयाबी न हो पाई, उनके मुकाबिले में मेरी नाकामयाबी तो यकीनन किसी गिनती में नहीं आती। सब की डींगे धरी धराई रह गई............" मैं सब कुछ जानता था कि क्या होना है, इस तस्वीर का नुमायां पहलू यह था :—

क्या ज़िक्रे ग़ैर अपने भी ग़मख्वार बिक गए।
बाज़ारे-इन्तख़ाब में सब यार बिक गए॥
कुछ फ़िक्रो ़हम का भी दिलावा निकल गया।
परदा रहा वफा का वफादार बिक गए॥
क्या खेल था कि रह गया इख्लाक़ ताक़ पर।
कच्चे अपने ही परवरदा नमक ख़ार बिक गए॥
कोई, जगह की कैद न मौसम का था खियाल।
कुछ झोंपड़ी में कुछ सरे बाज़ार बिक गए॥
बोतल के बन्द पानी में डूबे बहुत ख्बीस।
फिसले वो इस तरफ़ से तो उस पार बिक गए॥
जिनके किए थे काम जमाने को छोड़ कर।
इस बार वह भी हाशिया बरदार बिक गए॥
है कौन जो बनेगा हमारा गवाह चांद
बातिल- के हाथ हक के तरफदार बिक गए॥

यह थे उन के उदगार। वह चांद ही थे और ऐसे चांद जिसे समय भी न कर सकेगा मांद।

अशोक लाज
ग्राम मारण्डा, तै० पालमपुर
जिला कांगड़ा (हि०प्र०)

लाल चन्द प्रार्थी 'चांद कुलवी'

-- खेमराज गुप्त 'सागर'

यादें हमें विरासत में मिला करती हैं। पुरखे हमारे, भले ही हमारे लिए धन, दौलत सम्पत्ति, मकान, दुकान छोड़ें या न छोड़ें, लेकिन एक चीज़ जो वो छोड़ जाते हैं। उसी का नाम तो है "यादें"! वैसे भी इन्सान अपनी ज़िन्दगी में कुछ गंवा कर, लुटा कर, या खोकर कुछ पाता है, तो वे सिर्फ यादें ही तो होती हैं।

लाल चन्द प्रार्थी, 'चान्द' कुलवी, उन गिनी चुनी हस्तियों में से थे, जिन्हें मैंने बहुत करीब से, बहुत नजदीक से देखा है। कौन कहता है कि प्रार्थी जी मर गए, मरे उनके दुश्मन! प्रार्थी जी, अपने आप भी खूब ज़िन्दादिल इन्सान थे, ज़िन्दगी और ज़िन्दादिली उन की फितरत थी, ऐसे आदमी मरा नहीं करते, हाँ उनका जिस्म खाकी या शरीर जरूर कहीं लुप्त हो जाता है। मेरी बात कहीं जीवन-मृत्यु के सिद्धान्तों के माया जाल या शब्द जाल में न उलझ जाए, इसलिए सीधे-सीधे उन से हुई कई मुलाकातों का ज़िक्र ही बेहतर रहेगा।

सबसे पहले मैंने उन्हें तब देखा, जब पहला गणतन्त्र समारोह मनाया जा रहा था राजधानी दिल्ली में। यह बात है 1952 की। डा० राजेन्द्र प्रसाद भारत के पहले राष्ट्रपति के रूप में गणतन्त्र दिवस परेड की सलामी ले रहे थे। लोक नर्तकों का एक दल सामने आया, जिस का नेतृत्व कर रहा था एक खूबसूरत रौबीला, फुर्तीला और आकर्षक व्यक्तित्व वाला जवान, जिसकी मूछें काफी तीखी नोंकदार थी। लोक नृत्य के तीन चार लटके कुछ इस अन्दाज़ से लिए उस तीखी मूछों वाले शख्स ने कि दिल फड़क उठा। मिट्टी की सुगन्ध बिखर गई थी माहौल में तालियों की गड़गड़ाहट से आसमान गूँज उठा था। पहला सवाल जो मन में उठा-वो था- "कौन है यह बांका, सजीला नर्तक"- दिल्ली जैसे महानगर की गहमा गहमी में, मुझे कौन बताता भला कि यही तो है लाल चन्द प्रार्थी। लेकिन जब दो रोज़ बाद अखबारों में श्रेष्ठ लोक नर्तक के रूप में राष्ट्रपति से ट्राफी लेते देखा— तो अपने आप पर ही इश्क आने लगा मुझे! मेरे प्रदेश का है यह कलाकार—काश मैं इस से मिल पाता। इस के हाथों को छू सकता इस की सजीली पोशाक को करीब से देख सकता, इस के थिरकते कदमों में छिपी बिजली को नज़दीक से देखने की लालसा मन में बनी ही रही, और समय बीतता गया-बीतता गया, चौदह वर्ष बीत गए मेरी यादें भी चौदह बरस का

बनबास काट रही थी, और फिर 1966 में मैं जब प्रार्थी जी से मिला तो उन के बारे में बहुत कुछ जानता था। पंजाब विधान सभा के सदस्य के रूप में उन का नाम अकसर अखबारों में पढ़ा था। उन द्वारा सम्पादित दो एक माहनामे भी देख चुका था। उन माहनामों में उर्दू कलाम भी पढ़ चुका था। खास तौर में उन के कतआत तो दिल की गहराईयों में उतर चुके थे। एक दो बार पब्लिक जलसों में बोलते हुए भी उन्हें सुन चुका था और मैं मानने लगा था कि उन जैसा बोलने वाला लीडर या जनप्रतिनिधि शायद कोई दूसरा नहीं था उन दिनों। अपनी आवाज़ और बोलने के सलीके और लहजे के कारण ही वे प्रभावशाली वक्ताओं की प्रथम पंक्ति की श्रेणी में गिने जाते थे। उन से मेरा तब इतना ही परिचय था। लेकिन यादें बनवास से लौट आई थी—1966 में प्रार्थी जी हिमाचल के मंत्री बने। पिछले 14 वर्षों में वह तीखी नोकदार मूंछे काफी घनी हो गई थी। दाढ़ी कुछ अनोखी शान में लहराती थी। सिर पर बाल तरतीबी से संवरे होते थे—चश्मा भी लगाने लगे थे। दा एक मुशायरों में उन्हें सदारत करते भी देखा था, लेकिन तब भी नहीं कह सकता था कि मैं उन्हें जानता हूं—हाँ यह दावे से कह सकता हूं कि मैं उन्हें खूब पहचानने लगा था। खैर...........तारीख तो याद नहीं लेकिन इतना ज़रूर याद है कि मैं हिमाचल विधान सभा के सामने खड़ा था। उस रोज़ विधान सभा का सत्र होने वाला था। एक सरकारी मुलाज़िम के तौर पर मैं विधान सभा में अपनी ड्यूटी निभाने गया था। तभी मैंने देखा एक कार वहाँ रुकी और उस में से उतरे प्रार्थी जी मन्त्री के रूप में। बीसियों हाथ उन्हें प्रणाम करने में उठ गए थे - मैंने भी हाथ उठा दिए थे प्रणाम के लिए, मेरे पास से गुज़रते हुए वह कुछ देर रुक गए—अरे! सागर तुम यहां? 'हां सर'

वे हंस दिए—उनकी हंसी भी ला-मिसाल थी—जो सदा कायम रही, उनके कहकहे जानदार होते थे—रस्मी या दिखावटी नहीं।

अरे भई - मैं खुद सोच रहा था, तुम लोगों से मिलने की बात—खैर—जल्द ही इन्तज़ाम हो जाएगा—और मेरा कन्धा थपथपाते हुए वे चले गए सत्र में भाग लेने।

मैंने सोचा मन्त्री जी को कहां फुर्सत होगी मुझ जैसे, या हम जैसे साहित्यकारों से बात करने की, यूं ही रस्मी तौर पर कह दिया होगा। मैं स्वीकार करता हूं कि वो मेरी ग़लती थी—मुझे क्या पता था कि यह शख्स साहित्यकार —या कलाकार पहले है राजनीतिज्ञ बाद में।

दो चार रोज़ में ही उन्होंने अपने निवास पर साहित्यकारों की एक गोष्ठी का आयोजन किया। खुश गप्पियां होने लगी पूरा माहौल एकदम अदबी हो गया था, लतीफे बाज़ी और चुटकले बाज़ी भी चल रहीं थी—इसी दौरान प्रार्थी जी के सचिव कुछ काग़ज़ात लाए जिन पर प्रार्थी जी के हस्ताक्षर होने थे - यह वो मौका था जब मैंने प्रार्थी जी को पहली बार अच्छी तरह जाना। हुआ यूं कि जैसे ही उनके सचिव ने काग़ज़ात उन

के सामने रखे तो वह वही चिर परिचित कहकहा बिखेरते हुए बोले, यार अच्छा खासा शायर बैठा था—तुम ने फिर से मनिस्टर बना दिया "और फिर हस्ताक्षर करने के बाद तुरन्त हम सब की ओर देखते हुए कहने लगे, "मुआफ करना भाई—आयन्दा शायर से मनिस्टर नहीं बनूंगा—मुआफी चाहता हूं" उनके सचिव भी मुस्कराते हुए कमरे से बाहर चले गए। फिर तो मुलाकातों का सिलसिला जारी रहा। बीसियों मुशायरों, साहित्यक गोष्ठियों और प्रदर्शनियों में उन के करीब रहने का मौका मिला, और मैं यकीन के साथ कह सकता हूं कि प्रार्थी जी—एक साफ शफाफ दिल—ओ—दिमाग के मालिक थे।

कई शायर या अदीब दोस्तों से कई बार उन की शान में गुस्ताखियां भी सरज़द हुईं, मैं दावे से कह सकता हूं कि एक मनिस्टर तो दूर की बात है—किसी साधारण आदमी की शान में भी ऐसी गुस्ताखियां हो जाती—तो वह जानी दुश्मन हो जाता, लेकिन—कमाल और रश्क की बात तो यह है कि 'चान्द' कुलत्री ने उन गुस्ताखियों को हर्फ-ए-ग़लत की तरह मिटा दिया, इतना क्षमाशील स्वभाव कम से कम किसी सत्ताधारी का मैंने नहीं देखा, सिवाए स्वर्गीय डा० यशवन्त सिंह परमार के।

1972 में जब हिमाचल प्रदेश में कला-संस्कृति एवं भाषा अकादमी की स्थापना हुई तो प्रार्थी जी उस के पहले चेयरमैन थे। हालांकि उनकी सेहत काफी खराब रहती थी, कई बार सरकारी कामकाज निपटाने में भले ही उन से देर हो गई हो लेकिन साहित्यिक एवं कला सम्बन्धी कार्यक्रमों या निर्णयों में उन्होंने खराब सेहत को खुद पर हावी नहीं होने दिया।

एक बड़ी दिलचस्प बात याद आ गई। प्रोफेसर तपेन्द्र सिंह अविवाहित राजनीतिज्ञ हैं। बात महिलाओं के सम्बन्ध में चल रही थी ठीक से याद नहीं तपेन्द्र सिंह जी ने क्या कहा था—लेकिन प्रार्थी जी ने जो कुछ कहा था वो अब भी मुझे याद है बोले थे: रहने दीजिए तपेन्द्र सिंह जी की बात, महिलाओं के बारे में इन का इल्म बिल्कुल महदूद है—और तो और इन की किस्मत में एक भी बीबी नहीं है जब कि मेरी दो-दो बीबीयां है "और सारा माहौल कहकहों से भर गया था"।

मैं कला-संस्कृति एवं भाषा अकादमी के संस्थापक सदस्यों में से एक था, इस नाते उन से मिलना जुलना अकसर होता ही रहता था। एक बार अकादमी के बजट में भारी कटौती हो गई, न जाने कैसे? प्रार्थी जी अपने लगाए पौधे को इस तरह मुरझाया कब देख सकते थे, फौरन मुख्यमंत्री डाक्टर परमार के पास गए और घण्टे भर में लाख डेढ लाख रूपया मंजूर करवा लाए। उस समय उनकी खुशी देखते ही बनती थी-ऐसा महसूस हो रहा था जैसे अकादमी के लिए बजट न लाए हो, बल्कि बेटे की शादी करवा रहे हो।

अकादमी के सदस्यों की एक बैठक नाहन में रखी गई थी—तकरीबन तीन रोज़ तक बैठक होनी थी इसी बीच एक मुशायरा भी होने वाला था। मुशायरे के रोज़ की बात

है यार लोग पी पिला कर मुशायरे में पहुंचे, प्रार्थी जी को मंच पर बैठा देख कर कुछ शायर दोस्त इसलिए जरा हट कर बैठना चाहते थे कि उन्हें पता न चले कि चख रखी है। वो समझ गए धीरे से एक पियक्कड़ दोस्त शायर (नाम नहीं बताऊंगा) को करीब बुला कर बोले, "अरे यार गुनाह करते भी हो और फिर डरते भी हो—सच बताओ कर्ज की पी है या पैसे खर्च किए हैं –"और फिर वही कहकहा फज़ा में उछाल दिया, सब की झिझक दूर हो गई। सिगरेटों का धुआं भी उठने लगा—हालांकि उन्हें सांस की तकलीफ थी—सिगरेटों का धुआं उन्हें रास नहीं आ रहा था पर क्या मजाल जो उन्होंने किसी को अहसास भी होने दिया हो। किसी का दिल दुःखाना उनके नज़दीक गुनाहे कबीरा था। यार लोग उन की कोठी को 'धर्मशाला' बनाने में कोई कसर नहीं उठा रखते थे। वक्त-बेवक्त जिसे कहीं जगह न मिलती उन के यहां बिना झिझक उतर जाता, और ये कहने की ज़रूरत नहीं कि ऐसे मेहमानों के लिये भी उन के दरवाजे सदा खुले रहते थे।

बजमे-अदब हिमाचल प्रदेश की तरफ से हिमाचल के उर्दू शोरा के कलाम का मजमूआ 'दरयाफ्त' छपा था, वह शायद पहला और अपनो तरह का एक ही मजमूआ है जिस में हिमाचल के उर्दू शायरों का कलाम छपा हे खुद प्रार्थी जी का कलाम भी उस में मौजूद है। दूसरा मजमूआ हिमाचल कला-संस्कृति एवं भाषा अकादमी द्वारा छापा गया है 'तरतीब' के नाम से ! उस में भी प्रार्थी जी का कलाम मौजूद है-ये दोनों ही मजमूए जब मैंने भारत के प्रसिद्ध शायर और तनकीद निगार जनाब सैयद हुसैन अली 'जाफरी' की खिदमत में पेश किए तो उन्हें सबसे पहलो हैरत तो यह हुई कि क्या हिमाचल में भी उर्दू में कहने वाले लोग मौजूद है। फर्माया—कलाम पर राय तो देखने के बाद ही दूंगा सागर ! और जब वो दरयाफ्त और तरतीब देख चुके तो फर्माया 'सागर' साहब काश मैं चान्दकुलवी से मिल पाता। वां जहानी चांद के कलाम को देख कर रूह खुश हुई। खूब कहते थे। सोच समझ कर कहते थे, बड़ी जान है उनके कलाम में।

यादों का काफिला—कारवां बनता जा रहा है। कुछ ऐसी भी बातें हैं जो कहीं नहीं जाती सिर्फ महसूस की जाती हैं। मैं महसूस करता हूं कि प्रार्थी जी को मैंने बड़े करीब से जो देखा था—आज इस बात का अफसोस हो रहा है कि क्यों न एक किताब ही लिख डालूं जिसमें उनकी यादों के सैकड़ों गुलाब खिले हों। लेकिन आंखें नम हो आई हैं कलम हाथ से गिर जा रहा है।

'टाप फलोर'
-दी माल शिमला

लाल चंद – दुखा सुखा रा माणू

-- प्रोफैसर चन्द्रवर्कर

"वोट देणा लाल चन्द प्रार्थी वे।
सा दुखा सुखा रा माणू" ॥

यह वह गाना है जिस को गा गा कर नाचने वाले स्त्रियों और मर्दों के एक झुंड ने हमारी गाड़ी को रोक लिया स्थान कटराईं और पतली कूल्ह के मध्य था।

सन् 1962 का मई का महीना था कुल्लू हलका से पंजाब विधान सभा का चुनाव हो रहा था। श्री लाल चन्द प्रार्थी बतौर एक स्वतन्त्र उम्मीदवार के चुनाव लड़ रहे थे।

बड़े ज़ोर ज़ोर से रूमाल और तलवारें लहरा लहरा कर और खूब जोश दिखा कर नाचने वाले प्रार्थी जी में अपनी आस्था प्रकट कर रहे थे। आधा घन्टा रोकने के बाद उन्होंने हमें आगे जाने दिया।

अगले दिन लरां केलो और घोड़ द्रोड़ में चुनाव सभाओं में भाग लेने के बाद सरदार प्रताप सिंह कैरों कटराईं रैस्ट हाऊस में दोपहर की रोटी के लिये रूके। कांग्रेस के उम्मीदवार राजा रघुवीर सिंह भी उनके साथ थे रोटी खाते समय सरदार प्रताप सिंह ने मुझ से पूछा कि मतदान किस हिसाब किताब से होने की उम्मीद है। मैंने कहा कुल्लू घाटी में तो प्रार्थी जी का बोलबाला है, यदि बोड़ मगांल में राजा साहब यहां का घाटा पूरा कर सकें तो चान्स हो सकता है, वरना नहीं। राजा साहब बीड़ मगांल में ऐसा नहीं कर पाए और प्रार्थी जी 1400 वोट से जीत गये अ.र राजा साहब से अपनी 1957 की हार का बदला चुका लिया।

यह थी कुल्लू घाटी के लोगों की प्रार्थी जी के लिये प्यार की एक झलक।

प्रार्थी जी से मेरी पहली मुलाकात 25 अगस्त 1959 को हुई। मैं तीन दिन से नगर विश्राम गृह में ठहरा हुआ था। वहां के प्राचीन किले (नगर कासल) को विश्राम गृह में बदल दिया गया है। आजकल उसे पर्यटक बंगला का नाम दिया गया है। उस दिन प्रातः कोई दस.बजे विश्राम गृह से थोड़ी दूर स्थित उनके निवास पर पहुंचा वह अपने घर के

बरामदे में एक छोटी सी मेज के पीछे एक कुर्सी पर बैठे हुए थे। बाईं ओर कुछ आर्युवैदिक दवाइयों की शीशियाँ रखी हुई थी। बातों बातों में मैंने पूछा कि निकोलस रोरिक (प्रसिद्ध रूसी चित्रकार) जो नगर में बस गये थे से उनका कोई व्यक्तिगत सम्पर्क रहा। उन्होंने कहा कि रोरिक को लोग अमरीकी साहब कहते थे, उनसे उनका कोई व्यक्तिगत सम्पर्क नहीं था। उन्हें सैर करते व आते जाते जरूर देखते थे। रोरिक एकान्त प्रिय व्यक्ति थे। मोटे तौर पर अपने परिवार और जो उन के यहां काम करने जाते थे से ही वास्ता रखते थे। जिस दिन (13 दिसम्बर 1947) उन की मृत्यु हुई, वह वहीं थे और उन की शव यात्रा में शामिल हुए।

मैंने प्रिन्स पीटर आफ ग्रीस (जो एक बार नगर विश्राम गृह में ठहरे थे) के उस विश्राम गृह में भूतों के वास होने के कथन के बारे भी प्रार्थी जी से पूछा। प्रिन्स पीटर ने विश्राम गृह में रखे गये यात्री रजिस्ट्र में लिखा था "यह भूतों का वासा है" मैंने कहा कि मैं 'इसी कमरे में ठहरा हूं जिसमें प्रिंस पीटर ठहरे थे, परन्तु मुझे तो वहां कोई भूत दिखाई नहीं दिया। प्रार्थी जी ने मज़ाक में कहा, "वह कहीं रिश्तेदारों के गये होंगे"।

प्रार्थी जी का लिखने और बोलने के इलावा खत लिखने का भी अपना ढंग था। इसके विशेषतासूचक उदाहरण के रुप में, हमारे आपसी पत्रव्यवहार में से उनके २७ मई १९६१ के उर्दू में लिखे पत्र में से उद्धरण दे रहा हूं। २३ मई से २५ मई प्रातः तक मैं उनका कुल्लू में इन्तज़ार करता रहा, पर प्रार्थी जी वहां न पहुंच सके इस न मिल सकने के बारे में उन्होंने अपने अन्दाज में लिखा, "२५ मई को मैंने कोशिश की मगर पहली बस पाँच मिनट पहले निकल चुकी थी दूसरी बस जब कुल्लू पहुंची आप कुल्लू छोड़ चुके थे, यह एक एसी कहानी बन गई जिसे मैं हादसा कह सकता हूं। वैसे मेरे लिये आप दोस्तों से मिलना सदमे से कम नहीं। शुक्र का मकाम यह है कि मैं इस सदमे को अभी तक बरदास्त किये हुए हूं। आपसे मुद्दत हुई मिल नहीं सका हूं। समझ लीजिये के जिन्दा हूं और खुश हूं। जिन्दगी में सुबक रफ़तारी लाने के लिये एक ताजयाने की जरूरत है। अब तो लबे बाम दो चार हाथ रह गया है, कमन्द फेंकी तो है। काश यह टूट न जाए और अब आप जैसे दोस्तों का भी फर्ज है यह देखना के फैंकी हुई कमन्द कहीं टूटने न पाए। हालातें हाज़िरा से बेबहर जरुर हूं, मगर बेन्याज नहीं...हालात से हम दोस्तों को भी आगाह व मतला करते रहा करें वरना हम तो इस बहरे बेकरां के किनारे गोशाह गुमनामी में कंकर ही चुनते रहेंगे ऐसा न हो के—

रौशनी लूट ली उभरे हुए मीनारों ने
पस्त जररों के मुकद्दर में वोही रात रही"

आखिर में लिखा "दोबारा जल्दी मिलने की तमन्ना लिये हुए अब इजाज़त

चाहता हूं। जवाब तो आप ज़रुर देंगे कोई जिन्दगी बख्श जवाब दीजिये। कोई खिदमत चाराने तेज़गाम को हमारा सलाम, न्याज़मन्द : प्रार्थी"

आजकल के केवल उपयोगितावादी संक्षिप्त पत्रव्यवहार के युग में साहित्यिक और अलंकृत पत्रलेखन कला में माहिर बहुत कम लोग हैं। प्रार्थी जी उनमें से एक थे, उनके पत्रों में साहित्यिक मांउ ज़रुर चढ़ी होती थी।

6 जुलाई 1970 को मैंने किसी कारण भाषा सलाहकार समिति की सदस्यता से त्यागपत्र प्रार्थी जी, जो उस समय हिमाचल के स्वास्थय मन्त्री व हिमाचल भाषा सलाहकार समिति के अध्यक्ष थे को भेज दिया और इसे तुरन्त स्वीकार करने का आग्रह किया। उन्होंने हरी स्याही से उसे नामंजूर करके मुझे वापिस लौटा दिया। अगले दिन उन्होंने अपने निवास पर पहाड़ी साहित्य संगम की बैठक बुलाई हुई थी वहां मैंने फिर इस्तीफा मन्जूर करने पर ज़ोर दिया। प्रार्थी जी ने सिर हिलाते हुए कहा "अ.प का और मेरा ज़िन्दगी से इस्तीफा तो मन्जूर हो सकता है, पहाड़ी भाषा स नहीं"।

प्रार्थी जी ने सन् 1938 में धर्मशाला में गाने बजाने का स्कूल खोला। ज्वालामुखी के श्री चुरंजीलाल शास्त्री जो कुल्लू में ब्याहे हुए थे ने उनका सम्पर्क धर्मशाला के श्री मिलखी शाह से कराया। श्री मिलखी शाह को भी गाने बजाने का बहुत शौक था। उनके ही एक मकान में प्रार्थी जी ने यह काम शुरू किया। गाने बजाने की बैठकें रात के ग्यारह-बारह बजे तक चलती रहती उन्होंने यह स्कूल दो साल चलाया।

दूसरे विश्वयुद्ध के दिनों में नेशनल वार फ्रन्ट के लिये आपने एक ग्रामोफोन रिकार्ड पर कुल्लू का प्रसिद्ध गाना "लागा ढोलेरा ढमाका, देश कुल्लूरा बड़ा बांका" गाया।

आप तीन साल धर्मशाला टी एस्टेट के मैनेजर रहे। सन् 1950 में आप ने इसे छोड़ा। टी एस्टेट के मालिक सरदार गुरप्रीत सिंह मान ने प्रार्थी जी के उन दिनों के बारे मुझे बताया "वे धार्मिक वृति के व्यक्ति थे। अच्छा काम करने वाले और अच्छे गायक थे"। फिर कहा, "जब वे मन्त्री बने तब भी हमारे साथ उसी प्रकार मिलते थे जैसे उस समय जब वह हमारे पास मैनेजर थे"।

आप न केवल स्वयं कवि थे, बल्कि कवियों का भरपूर सरंक्षण करते थे और उन्हें पूरा प्रोत्साहन देते थे "चान्द कुलवी" उन का अपना तख़ल्लुस (साहित्यिक उपनाम) था। उर्दू के प्रसिद्ध रसालों में उनकी कविताएं छपती थी। कवि सम्मेलनों में रात के दो दो, तीन तीन बजे तक बैठे रहते। जब किसी कवि सम्मेलन का पहला दौर समाप्त हो कर दूसरा दौर शुरू होता, तो उस का पूरा होने तक बैठे रहते। अपनी लम्बी बीमारी के दिनों में भी वे डाक्टरों और मित्रों की सलाह के विपरीत कवि सम्मेलनों में आखिर तक उपस्थित रहते। जिन दिनों उन्हें साँस की बहुत तकलीफ थी, मैंने एक कवि सम्मेलन में से उन्हें

"शमा जलाकर" और शुरू में दो चार मिनट आशीर्वाद दे कर उठ आने के लिए बड़ा ज़ोर दिया वे मान गए, पर जब कवि सम्मेलन में पहुंच गये तो रात के दो बजे तक वहीं रहे। वापिसी पर बहुत तकलीफ हो गई आक्सीजन देने की आवश्यकता पड़ गई। कुच्छ सुधरने पर मैंने कहा कि यदि मेरा कहना माना होता तो शायद यह दशा न होती जो हुई। बोले "कवि सम्मेलन में कई कवि इतने कच्चे थे और उनकी कविताएं इतनी कमज़ोर थी कि मैंने सोचा यदि मैं उठ जाऊं तो उन बेचारों का स्टेज पर खड़ा होना भी असम्भव हो जाएगा। उनका हौंसला न टूटे, इसलिये मैंने तुम्हारी, डाक्टरों और अपने मन की सलाह के विपरीत वहां बैठे रहना उचित समझा। इन कवियों का हिमाचल में मेरे सिवा है कौन"।

वे "साहित्य कला निकेतन" कुल्लू के संस्थापक प्रधान थे। थोड़े समय के लिए उन्होंने कुल्लू से उर्दू में अपना अखबार "देव भूमि" निकाला। ढालपुर कुल्लू में कला केन्द्र जहां दशहरे व अन्य उत्सवों व सम्मेलनों में स्थानीय और देश विदेश के लोकनृत्य और दूसरे कला प्रदर्शन होते हैं, प्रार्थी जी के प्रोत्साहन से तैयार हुआ। हिमाचल भाषा, और कला-संस्कृति अकादमी के बतौर भाषा और संस्कृति मन्त्री होने के वह पहले प्रधान थे। आपने हिमाचल भाषा विभाग को पहले शिक्षा विभाग का अंग बनवाया। फिर उसे एक जुदा विभाग का दर्जा दिलाया। अकादमी को कायम रखना और हिमाचल भाषा, कला और संस्कृति के व्यक्तित्व को उभारने और इसे संगठित करने व सरकारी नीति का हिस्सा बनाने का पायनियरिंग (रास्ता तैयार करने का) कार्य प्रार्थी जी ने किया। उनके शब्दों में "हिमाचल की विशेष संस्कृति है। जो एक खास ज़बान की मांग करती है, और वह है पहाड़ी। पहाड़ी एक समृद्ध भाषा है, यद्यपि इसका लिखित साहित्य बहुत पुराना नहीं, परन्तु यह लोक साहित्य की सरताज है"।

जहां इस काम के लिए पालिसी और प्रेरणा डा० परमार की थी। वहां क्षेत्र कार्य प्रार्थीजी का था, इस बारे वह दोनों एक दूसरे के अनुपूरक थे।

डा० परमार ने प्रार्थी जी के बारे लिखा "एक राजनीतिज्ञ के रूप में भी उन्होंने अपना अधिकांश समय इस पहाड़ी प्रदेश की संस्कृति और लोक जीवन को समझने बूझने में लगाया है, और प्राचीन ऋषियों की महान् परम्परा के अनुरूप ही उन्होंने राजनीति का हिमालयी संस्कृति के प्रचार प्रसार में एक हथियार के रूप में प्रयोग किया है"

वे कहा करते थे शब्द अमर है। इस बात को सामने रखते हुए जहां अपने भाषण और लेखन को ओज अलंकार की वह पुट देते थे, वहां वह स्थानिक और नित्य चर्चा की बातों को सार्थकता से जोड़ने का गुण रखते थे।

आयुर्वेद से उन्हें उतना ही लगाव था, जितना कविता, सगीत, कला और

साहित्य से। हिमाचल प्रदेश के सरकारी आयुर्वेदिक चिकित्सकों को चिकित्सा अधिकारी (Madical Officer) का पदनाम और दर्जा आपने ही दिलाया। १९७७ में बतौर प्रधान अखिल भारतीय आयुर्वेदिक चिकित्सक परिषद् के उन्होंने शिमला में उन्यासवीं अखिल भारतीय आयुर्वेदिक कान्फ्रैन्स का आयोजन किया, यह पहली से तीन अक्तूबर १९७७ तक हुई।

प्रार्थी जी की इन बहुमुखी प्रतिभाओं को सामने रखते हुए मैंने हिमाचल विश्वविद्यालय की कार्यकारणी के सदस्य के रूप में ३१ जनवरी १९७७ को उस समय के कुलपति को एक पत्र लिखा, जिसमें उन्हें (प्रार्थी जी को) सम्मानार्थ डाक्टर आफ लिट्रेचर की डिग्री देने की सिफारिश की और इस मुआमिले को कार्यकारणी की मीटिंग की विषय सूची में रखने का आग्रह किया, परन्तु कुछ समय बाद ही विश्वविद्यालय में अनिश्चितता का ऐसा वातावरण पैदा हो गया, कि कुलपति के बाद कुलपति बदलने लगे और यह बात सिरे न चढ़ सकी।

अपने इस पत्र में जहां मैंने उनके बाकी योगदानों का वर्णन किया, वहां उनकी पुस्तक "कुलूत देश की कहानी" की कुल्लू की लोक और ऐतिहासिक परम्परा की खोज में योगदान का भी विस्तार से वर्णन किया।

सन् 1975 और 1976 में उस समय के एक एम. एल. ए. ने उन्हें बहुत परेशान कर रखा था। उन दिनों उनके मुँह पर एक वाक्य आम चढ़ा हुआ था "भाई, हम तो (राजनीति में) केवल जीना ही चाहते हैं, लीडरी नहीं"।

उन्हीं दिनों जब वे बड़े बीमार थे और देहली में एक अस्पताल में थे, तो एक दिन शिमला में प्रातः मुझे उनकी ओर से एस. टी. डी. आई. कहा गया कि प्रार्थी जी को फौरन मिलूं। मैं अगले दिन प्रातः देहली पहुंच गया। प्रार्थी जी ने अकेले में उन अफवाहों के बारे पूछा जिनमें कहा जा रहा था कि बीमारी के कारण उन्हें मन्त्रीमण्डल से हटाया जा रहा है। संयोगवश डाक्टर परमार भी उस समय दिल्ली में आए हुए थे मैंने कहा आज ही डाक्टर परमार से मिल कर आप को बताता हूं। जब मैं डा. परमार से मिला उन्होने कहा, "प्रार्थी जी से कह दो, डाक्टर परमार दोस्त को मुसीबत के समय छाती से लगाता है, धक्का नहीं देता"।

भूतपूर्व विधायक
धर्मशाला (हि. प्र.)

प्रार्थी जी–साहित्यकार और कलाकार के रूप में

मोलूराम ठाकुर

श्री लाल चन्द प्रार्थी चाँद कूलवी को प्रायः हम राजनीतिज्ञ, नेता और मन्त्री के रुप में अधिक जानते हैं और उसी रुप में साधारणतः उन्हें देखते रहे हैं। परन्तु वास्तव में श्री प्रार्थी राजनीतिज्ञ और मन्त्री-नेता बाद में थे, एक शायर, साहित्यकार और कलाकार पहले थे। श्री प्रार्थी अपने समय में सफल राजनीतिज्ञ और लोकप्रिय नेता रहे हैं और उनकी लोक प्रियता का मुख्य कारण यह रहा है कि वे कलाकार थे और कला से उन्हें प्रेम था। वे साहित्यकार थे और साहित्यकारों की कदर करते थे। वे कला पारखी थे इसलिए कला की प्रशंसा करते थे, कलाकृतियों की समालोचना करने के योग्य थे, इसलिए सभी कलाकार उनकी राय के इच्छुक रहते थे। भारतीय दर्शन शास्त्र के ज्ञाता थे इसलिए साहित्य चर्चा में हर समय सक्रिय भाग ले सकते थे। वे साहित्यकारों और कलाकारों के मार्गदर्शक और प्रेरक रहे हैं। प्रदेश के कलाकारों और साहित्यकारों को उन से अत्यधिक प्रेरणा और उत्साह मिला है। उनकी अध्यक्षता में रात-रात भर मुशायरे और कवि-सम्मेलन आयोजित होते रहे हैं। वे हर एक अच्छी कविता, नज़्म और गजल पर दाद देते थे तथा जब अन्त में अपनी कविता या गज़ल सुनाते तो मुक्तकण्ठ से वाह-वाही भी पाते थे। उनकी अनेक कविताओं ने लोक-गीतों का रूप धारण किया है :—

मनू री मनाली देखी, थीपू लौंगा वाली देखी।
ठोडी तिल्ले आली देखी। बधिया शगार थिया॥

गोखड़ू कनबींचे कण्ठी कांगणु सजाई करी।
फूलदार पट्टू बान्हीं, गले चन्दरहार थिया॥

चाल टेढ़ी मेढ़ी जे जलेबी जाण पाकुली।
थम्मी जाओ जबे लग्गे बूटड़ी दियार थिया॥

ईंड़ां मटकोए मचकोए मुड़ी मुंहें फेरी।
झण-झण जाए जिहां बज्जदी सतार थिया॥

एकी एकी हाखड़ू रा मुल्ल लख लख हुँगा।
दाड़ुआ रे दाणें साहीं दंदा री कतार थिया ॥

लौंग लशकारे मारे हवा रे इशारे सारे।
इंहा लगे जिहां कोई बिजलो रो तार थिया ॥

खाखड़ू गुलाबी होठ पतले उनाब्री बाकें।
हेरने रा रंग ढंग तीर तलुआर थिया ॥

होश मैं गुआई बैठा रोश करां कुदे कन्ने।
बोलूआं मैं बिजली, पर लोक बोलां नार थिया ॥

एह गई होह गई बढ़दी ही चली गई।
समझ नी आई "चन्दा" नार कि कटार थिया ॥

मन्त्री के रूप में जो उनका स्थान और कार्य रहा है उसे हम सब जानते हैं। यह चर्चा का विषय नहीं है। परन्तु उन दिनों प्रदेश में साहित्य और कला का जो वातावरण बना था वह आने वाले समय में खूब याद रहेगा। साहित्य-सम्मेलन किस भाषा का था-हिन्दी, उर्दू, संस्कृत या पहाड़ी का ? यह विषय उनके सामने नहीं हुआ करता था। साहित्य चर्चा हो या कवि सम्मेलन हो वे उनमें भाग लेते थे। चाहे वह किसी भी भाषा का हो। वे संस्कृत में उतनी ही रूचि रखते थे जितनी हिन्दी में। वे उर्दू में उतना ही लुत्फ लेते थे जितना पहाड़ी में। प्रसन्नता तो इस बात की है कि हर भाषा के अनुयायी उन्हें अपने में से एक समझते थे और उन पर विश्वास रखते थे। यही बात कला के क्षेत्र में भी शतशः सिद्ध होती है। वे नर्तक और संगीतज्ञ तो स्वयं थे, इसलिए नर्तकों, गायकों और संगीतज्ञों का बहुत सम्मान करते थे। लोक संगीत और नृत्य को वे शास्त्रीय संगीत और नृत्य का प्रतिपूरक मानते थे। इसलिए जहां लोक-नृत्य, लोक-गायन और संगीत के अनेक कार्यक्रम होते थे, वहां उन्होंने कुल्लू के पीपल यात्रा मेला का दिन बसन्तोत्सव के नाम से शास्त्रीय संगीत और शास्त्रीय नृत्य के लिए सुरक्षित रखा था। उस अवसर पर वे प्रतिवर्ष शास्त्रीय संगीत-नृत्य का आयोजन करते थे। चित्रकार, मूर्तिकार, वास्तुकार, शिल्पकार सब उन से प्रशंसा पाते थे। उनमें सहयोग की भावना थी। हर कला क्षेत्र के विचारों में वे सक्रिय आदान-प्रदान करते थे। उनसे मिल कर हर कलाकार और साहित्यकार को संतोष मिलता था, प्रशंसा प्राप्त होती थी।

उनकी वाणी में सरस्वती वास करती थी। उनमें विद्वता थी, उनके भाषण में योग्यता झलकती थी। उसमें उपदेश होता था, कटाक्ष था, हास्य-व्यंग्य था। उनके व्यक्तित्व के यह सब गुण एक रात के चमत्कार के परिणाम नहीं थे। यह उनको उमर

भर की साधना का फल था। वे साधक थे और उनका साध्य उनकी कड़ी मेहनत और कर्मठता थी। बचपन से ही उन्हें साहित्य में रूचि थी, कला से प्रेम था।

श्री लालचन्द प्रार्थी जन्मजात कवि थे। और उनका कवि-हृदय बचपन से ही शायरी की ओर उन्मुख हो गया था। अपने स्कूल के दिनों में ही उन्होंने अच्छी कवितायें लिखनी आरम्भ की थी। इस बात की पुष्टि इस तथ्य से हो जाती है कि 17 वर्ष की आयु में ही वे लम्बी कवितायें लिख रहे थे। श्री प्रार्थी का जन्म नगर गांव जिला कुल्लू में मार्च, 1916 में हुआ था और 1931 में मैट्रिक करने के बाद जब वे लाहौर पढ़ने गए तो वहां के साहित्यिक परिवेश ने उनकी काव्य कला को और अधिक प्रोत्साहित किया तथा उन्होंने अनेक कविताओं का सृजन किया था। उस समय की उनकी कविताओं का अन्दाजा उनकी एक कविता से लगाया जा सकता है जो "कांगड़ा समाचार, लाहौल" पत्रिका के दिसम्बर 1933 के अंक में पृष्ठ 11 और 12 पर छपी थी। वे उर्दू भाषा और फारसी लिपी में प्रकाशित हुई थी जिसे यह देवनागरी लिपी में उद्धृत करना बहुत उपयुक्त है :—

मैं होता फूल इक छोटा सा, किसी चमन में काश खिला होता।
मेरी महक से महकता सारा चमन, और गुलशने अरम[1] बना होता॥
मेरी खुशबू भीनी-भीनी पर, भौंरों का शोर मचा होता।
बुलबुल के हशर बपां[2] नालों से, यह गुलशन सिर पे उठा होता॥
मेरे नाजो अदा पे मरते सभी, कुल आलम मुझ पे फिदा होता।
मेरे हुसन का करते रश्क[3] सभी, हूरों[4] का दिल भी जला होता॥
मेरे आशिक रखते मुझ पे नज़र, मैं नज़र में उनकी खुबा होता।
मैं प्यास बुझाता मजनूं की, जो चमन में लैला बना होता॥
कभी वाद सबा[5] की लपटों से, सरगम का तार बन्धा होता।
मेरे रक्स[6] से झूमते फरदोबशर[7], जब बुलबुल नगमा ए सरा[8] होता॥
आह, तोड़ भी लेता कोई मुझे, बेशक न रंज जरा होता।
मेरी शोहरत[9], इज्जत होती वही, जो किसी के सिर पे चढा होता॥
मेरी शौकत[10] हशमत[11] का दरजा, जब मन्दिर मुझ से सजा होता।
कहीं शादी में वाईसे नाज़ो[12] अदा, दुल्हन का हार बना होता॥

(1) स्वर्ग का बाग, (2) कोलाहल, (3) ईर्ष्या, (4) अप्सराओं, (5) सुबह की हवा, (6) नृत्य, (7) हर व्यक्ति, (8) गीत गाने वाला, (9) प्रसिद्धि, (10-11) शान-शौकत, (12) नखरे नज़ाकत, (13) दुःख

लाल चन्द प्रार्थी 1939 में
उनकी पुस्तक 'सचित्र बाल रामायण' से

कविता पाठ में मग्न !

मुझे होता न मरने का रंजो मेहन[13], भारत के लिए मरा होता।
उन देश पे मरने वालों पर, मैं भी कुरबान हुआ होता॥
इक हार की शक्लो सूरत में, मैं उनके गले पड़ा होता।
गो दुनियां से मिटता नामों निशान, शहीदों में नाम लिखा होता॥
जब कौम की सेवा करने का, इस हालत में मौका मिलता।
तो गैब से प्रार्थी आती सदा, इस हस्ती से बेहतर गुल होता॥
मैं गुल होता, मैं गुल होता...

लाहौर में रहते हुए उन्होंने इस तरह की छोटी-बड़ी अनेक नजमें, कवितायें और गज़लें लिखी हैं। "कागड़ा समाचार" और "देहात सुधार" के वे नियमित लेखकों में से थे और लगभग हर अंक में उनकी रचनाएं छपी हैं। इन कविताओं में सोज़ है, साज है, सरगम है, राज़ है। ग्राम सुधार इन रचनाओं का विषय रहा है और वे समाज सेवा और देशभक्ति की भावनाओं से ओत-प्रोत हैं। चरित्र-निर्माण, देश-प्रेम और सेवाभाव उनकी रचनाओं का मुख्य उद्देश्य रहा है। बाद की रचनाओं में उनके ये विचार अधिक सुदृढ़ और सबल होते गए हैं। विक्रमी सम्बत् १९६६ को विजय दशमी के दिन प्रकाशित "सचित्र बाल रामायण" में वे लिखते है :—

"रामायण से ग्रहण करने योग्य उपदेशों को किंचित विस्तार से प्रकाश में लाने का प्रयत्न किया है। यह इस ही शुभ आशा से लिखी गई है कि वह बालक और बालिकायें जिन्होंने भारत के भविष्य को सुन्दर बनाना है, इसे पढ़कर कुछ लाभ उठायें। राम प्रभु के आदर्श जीवन से, सीताजी के पवित्र धर्म से, लक्ष्मण और भरत जी के भ्रातृ प्रेम से शिक्षा प्राप्त करें। यदि राम नाम के स्मरण करने से प्रत्येक अपने जीवन को उज्जवल और विचारों को उच्च कर सकता है तो उनके आदर्श जीवन का अनुकरण करके आज भी भारत की संतान अपनी बिगड़ी हुई सामाजिक व्यवस्था को सुधार सकती है। अपने खोए हुए धर्म को, भूले हुए कर्तव्य को समझ कर संसार के सामने गौरव से सिर ऊंचा कर सकती है।"

श्री प्रार्थी की यह पुस्तक जहां श्रीराम के जीवन की पूर्ण कथा प्रस्तुत करती है, वहां उसमें सचमुच अनेक उपदेश दिए हैं। "विवाहोत्सव" पाठ में लिखते हैं :—"हम राम की पूजा करते हैं, उनके चरणों में सिर झुकाते हैं—चरणों का धुला पानी पीते हैं। परन्तु इस तरह हम राम के भक्त नहीं कहला सकते। राम की पूजा तो उनके आदर्श जीवन से शिक्षा लेना है। हमारे मन में सादगी और पवित्रता नहीं हैं, तभी तो ढोंग रचाते है, आडम्बर करते है :—

मन में घुंडी पाप की, राम जपे क्या हो।"

अपने क्षेत्र में अनपढ़ता दूर करने के उद्देश्य से प्रार्थी जी ने "ग्राम सुधार साक्षरता कमेटी" गठित की थी और इस कमेटी के माध्यम से उन्होंने जहां गांव-गांव में अनेक केन्द्र खोले थे, वहां उन्होंने प्रौढ़ों के लिए छोटी-छोटी पुस्तकें भी प्रकाशित की थी, इन पुस्तिकाओं की मुख्य विशेषता यह थी कि उनमें स्थानीय इतिहास और लोक कथाओं का मनोरंजक समावेश था। कूल्लू में रघुनाथ का आगमन, हिड़िम्बा देवी और बिहंगमणी पाल, बिजली महादेव, भृगु ऋषि आदि देवी-देवताओं द्वारा ये पुस्तिकायें बहुत प्रसिद्ध हुई थीं।

देश की स्वतन्त्रता प्राप्ति के आस-पास श्री प्रार्थी ने "देवभूमि" नाम से एक अर्द्ध-मासिक पत्रिका का सम्पादन भी किया था। वे स्वयं इसके प्रकाशक भी थे। इस पत्रिका के दो स्थायी स्तम्भ बहुत आकर्षक हुआ करते थे—एक "लुहरी से लिंगटो तक" तथा दूसरा "प्रार्थी रे खड़प्पके"। जैसा कि शीर्षकों से ही स्पष्ट है पहला हिन्दी में हुआ करता था और दूसरा स्थानीय भाषा "कुल्लूई" में। इस तरह देखा जा सकता है कि जिस पहाड़ी भाषा का महत्व हम केवल 1966 के आस-पास देख पाये हैं, श्री प्रार्थी उसकी विशिष्टता को बहुत पहले से जानते थे। "देवभूमि" से उनका अभिप्राय कुल्लू क्षेत्र से था जिसकी उस समय सीमा दक्षिण पूर्व में शिमला क्षेत्र के कुमारसेन के निकट सतलुज के किनारे लुहरी से आरम्भ होकर उत्तर में लाहुल और लद्दाख की सीमा पर लिंगटी क्षेत्र में समाप्त होती थी। कुल्लूई बोली में "लिंगटा" का अर्थ पूंछ या दुम है। इसकी व्युत्पत्ति संस्कृत शब्द "लिंग" का लघुतावाचक रूप भी हो सकता है। संस्कृत में लिंग का अर्थ "चिन्ह" है और पहाड़ी में "टा" प्रत्यय प्रसिद्ध है। लिंगटा से लिंगटी स्त्रीवाचक रूप होने के कारण कुल्लू की उत्तर की ओर लद्दाख के किनारे अन्तिम सीमा होने के कारण इस स्थान को लिंगटी कहा जाता है। "लुहरी" का अर्थ स्थानीय भाषा में "धारा" है। जैसे—"शिमे री लुहरा"। यह शब्द भी संस्कृत धातु लुल् से "लुलित्" रुप में "लुहरा" और स्त्रीवाचक में "लुहरी" शब्द बना है। इस प्रकार समस्त कुल्लू की सारी घटनाओं को उसी सीमा के अन्दर "लुहरी से लिंगटी तक" शीर्षक के अन्तर्गत अभिव्यक्त करना श्री प्रार्थी की प्रखर बुद्धि का प्रमाण है। इस शीर्षक के अन्तर्गत वे सारे कुल्लू और उसके आस-पास के क्षेत्रों की तत्समय की घटनाओं का वर्णन करते थे तथा साथ ही धार्मिक, सामाजिक और राजनैतिक व्यवस्थाओं पर प्रकाश डालते थे।

"प्रार्थी रे खड़प्पके" शीर्षक द्वारा श्री प्रार्थी ने एक गंवारू शब्द "खड़प्पका" को साहित्यिकरण दिया है। चूंकि यह पत्रिका उर्दू में छपती थी और लिखित रूप में तशद्दुत का प्रयोग प्रायः लेखक नहीं करते या पाठक उस ओर अधिक ध्यान नहीं देते इसलिए लोग इस शब्द को प्रायः "खड़ पके" पढ़ते थे, और "खड़गा" अर्थात् नाग से इसका सम्बन्ध जोड़ते थे जान के। इसका अर्थ हिन्दी शब्द "गप" के निकट ठहरता था।

"इधर-उधर की बात गपशप"। इस शीर्षक के अन्तर्गत वे उपहास रूप में बहुत कुछ कह डालते थे, जिसमें उपहास, व्यंग्य, कटाक्ष, लतीफे, तानाकशी, मज़ाक सब कुछ समाविष्ट होता था। प्रार्थी के खड़प्पकों ने सचमुच उन्हें बहुत लोकप्रिय बनाया था। वे मज़ाकिया और व्यंग्यकार तो थे ही तथा इस स्तम्भ से वे अपना मज़ाक पूरा करते थे। लोक प्रायः "प्रार्थी रे खड़प्पके" के लिए ही इस पत्रिका को खरीदते थे। इसके अधीन वे प्रायः अपने प्रतिद्वन्द्वियों की खिल्ली भी उड़ाया करते थे। यह उनके व्यक्तित्व की एक खूबी थी। वे प्रतिक्रिया में व्यवहारिक मज़ाक की हरकत न करके प्रतिपक्ष को साहित्यिक व्यंग्य में उत्तर देते थे। इन खड़प्पकों के उत्तर में कुछ पेम्फलिट भी छपे थे परन्तु वे उतने लोकप्रिय नहीं हो सके थे क्योंकि इनमें सीधा प्रहार होता था जबकि श्री प्रार्थी के खड़प्पकों में साहित्यिक में अभिरूचि होती थी। वे डांग नहीं चलाते थे, पत्थर नहीं मारते थे। उनके ठहाके, तानाकशी और कटाक्ष उनके अन्तिम क्षण तक साथ रहे हैं। परन्तु तब उनमें दर्द और वेदना भी प्रवेश कर गई थी :—

जो लगाते हैं आम गुलशन में, वे कभी बागवां नहीं होते।
बाब करते है रू-बरू हमसे, और खुद दरमियां नहीं होते।
बहुत मुद्दत के बाद समझा हूँ, दोस्त कब मेहरवां नहीं होते।
रूठ जाते है जब नसीब ऐ चांद, मेहरवां मेहरवां नहीं होते।

अर्द्ध मासिक "देवभूमि" के अतिरिक्त श्री प्रार्थी मासिक पत्रिका "कुल्लू वैली' और साप्ताहिक "जन्मभूमि" के भी सम्पादक रहे। परन्तु इन सबमें उनकी "देवभूमि" सर्वाधिक प्रसिद्ध और लोकप्रिय रही। यह पत्रिका वे विधायक बनने के बाद भी 1956 तक नियमित रुप से और तत्पश्चात् कभी-कभी सम्पादित तथा प्रकाशित करते रहे। ज्यों-ज्यों उनका कार्य-क्षत्र विस्तृत होता जा रहा था त्यों-त्यों इस पत्रिका के विषय भी विवध होते जा रहे थे। तब वे पूरे पंजाब की राजनीति की बात करने लगे थे। प्रथम नवम्बर, 1956 के अंक में वे लिखित हैं—"आज भारत की तारीख के वर्क पर, भारत नक्शे पर एक नया पंजाब उभर आया है। वक्त की रफ्तार एक नये मोड़ पर खड़ी हो गई है। वह मोड़ जो 1947 के मोड़ से कतई मुखतलिफ है .. आज इस मोड़ पर सदियों से दूर नदी की दो धाराएं आपस में मिल रही हैं।"

वास्तव में उस दिन भूतपूर्व पैप्सू और पंजाब का समागम हुआ था। यह सम्पादकीय उसी सन्दर्भ में था और उन्होंने आशा की थी कि "नये पंजाब में रहने वाले तमाम लोग छोटी-छोटी बातों, छोटे-छोटे झगड़ों, हल्के-हल्के मतभेदों को छोड़कर एक बार इस नये तरजबे को कामयाब करने में जुट जायें।" परन्तु उनकी यह आशा पूरी नहीं हुई। ठीक दस वर्ष के बाद ही एक नवम्बर, 1966 को पंजाब के पुनः टुकड़े हो गए।

श्री प्रार्थी मूल रूप से शायर थे। उनकी नज़्में और गज़लें अनेक पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुई हैं। उनके जीवन काल में दो बार उनकी गज़लों को दो संस्थाओं ने पुस्तक रूप में प्रकाशित करने का निश्चय भी किया था, परन्तु संग्रह प्रकाशित नहीं हुए। शायद उनके भाग्य में अपनी गज़लों के संग्रह देखना नहीं लिखा था। उनके ही शब्दों में :—

पल भर में ही नविश्त-ए किसमत बदल गया,
मंज़िल करीब आई तो पांव फिसल गया ।।
आया वह वक्त जिसकी तवक्कोह नहीं थी चाद,
नूरे सहर को शाम का साया निकल गया।

प्रार्थी जी बहुत अच्छे गीतकार थे। उन्होंने अपना कवि जीवन गीतों से आरम्भ किया है। यह बात उनके आरम्भिक दिनों की रचनाओं से स्पष्ट होती है। जब वे गद्य लिखते थे तो भी उनकी शैली काव्यमय रहती थी। यहा उनकी रचनाओं की लोक-प्रियता का एक कारण है। जहां वे रचना में गीतकार थे, वहां वे अच्छे गायक भी थे। और गायक भी लोक गायक थे। वे नाचते हुए गाते भी थे। उनकी वाणी में मिठास थी। गीतों की तरह उनकी गजलों में भी माधुर्य था। यह उनकी गीतकार शैली और कण्ठ की मधुरता है कि उनकी अनेक गज़लें पाठकों और श्रोताओं को अनायास कंठस्थ याद है :—

जहाने रंगोबू में भी कुछ ऐसे इन्क्लाब आये,
कि दामन थामने को खार, चुभने को गुलाब आये।
कभी खत आ गया पहले, कभो पहले जनाब आये,
कभी पहले खुशो आई, पहले अज़ाव आये,
तेरे इन्साफ में गलती का अमकान हो सकता है,
अगर मेरे गुनाहों का फरिश्तों से हिसाब आये।
वजह माकूल हो तो फैसले पर ही नजर सानी,
गुनाहों की सजा हो और बदले में सबाब आए।

श्री प्रार्थी ने अपनो कविताओं और गजलों में शृंगार को खूब निभाया है। यह बात उनकी पहाड़ी कविताओं में विशेष रूप से लक्षित होती है। पहले प्रस्तुत कविता "नार की कटार थिया" इस बात की पुष्टि है। परन्तु उनकी कविताओं में सच्चे प्रेम की तड़फ है, जुदाई का दर्द है। एक कविता में जहां वे एक ओर सच्ची प्रेम भावना की ओर संकेत करते है :—

फूके री ज़िंदड़ी काया नमाणी ।
मौरना, जीणा सा केथ परांणी ।।
भूरी की बेठी धाऊड़ी बौता ।
लाणी नी लाई ता पूंघा पजाणी ।।
भूरी रा ज़ैलम, औगी री लूपी ।
भूरी रा भेटिणा अम्बर पाणी ।।

वहां वे जीवन की क्षण-भंगुरता का सही चित्रण प्रस्तुत करते हैं :—"इस भोले संसार में कितना जीना है, यमराज से जान कब तक बचाई जा सकती है, कभी लहू से भी मिट्ठी गूंथी जाएगी ऐसी भी विपत्ति आ सकती है :—

भोले संसारान केतरे जीणा ।
जोंआ न केतरे जान बचाणी ।।
मुछिणा केमकी लोहूए माटा ।
विपता एण्डी बी ऐजिआ जाणी ।।
पौतरू डूबणा तौरनी शीला ।
जुगा रा धर्म देऊए री बाणी ।।
चदे री जिंदड़ी भूल भलेखा ।
सुपना चुटणा रात मियाणी ।।

श्री प्रार्थी के सामने अपने जीवन का बहुत बड़ा लक्ष्य निर्धारित था। उनके जीवन के संघर्ष ने इस दिशा में उनका पूरा साथ नहीं दिया। वे हिमाचल का पूर्ण इतिहास लिखना चाहते थे। सम्भवतः स्कूल के दिनों से ही यह योजना उनके मस्तिष्क में थी क्योंकि इसके लिए जो सामग्री उन्होंने इकट्ठी की है यह चार छः वर्षो का काम नहीं है। उसके लिए निश्चय ही उन्होंने कई वर्ष लगाये हैं। उनके यह प्रयत्न नितान्त असफल नहीं गए हैं। उन्होंने इस दिशा में काम आरम्भ किया और इस प्रयत्न में जो वे "कुलूत देश की कहानी" के रुप में प्रस्तुत कर गए है, वह कोई कम उपलब्धि नहीं हैं। "कुलूत देश की कहानी" एक ऐसा ग्रन्थ है जो उनकी प्रतिभा का दर्पण है और जो इस दिशा में काम करने वालों के लिए एक मार्गदर्शक है। पहाड़ी क्षेत्र के इतिहास के अध्ययन में श्री प्रार्थी का नाम युग-युग तक स्मरणीय रहेगा।

३३२ पृष्ठों का यह बड़ा ग्रथ यद्यपि नाम से "कुलूत देश की कहानी" है परन्तु

मूल रूप में यह समस्त हिमाचल प्रदेश का इतिहास समोए हुए है। अपनी कहानी वे वेदों से आरम्भ करते हैं। वैदिक कालीन आर्यावर्त्त और सप्तसिन्धु का पहाड़ी क्षेत्र जहां वैदिक ऋषियों ने वेदों की रचना की है और जिसमें कड़ाके की सर्दी, हिमपात और घंघोर घटाओं का वर्णन है, मूल रुप में हिमालय का यही भू-भाग है। यहीं मनु की मनाली, शिव का मणीमहेश, इन्द्रकील, भृगुतुंग, जमदाग्नि आश्रम, वशिष्ट की तपोभूमि है। विष्णु पुराण और मार्कण्डेय पुराण का कोलूत और कुलान्त क्षेत्र वर्तमान कुल्लू ही तो है। रामायण के किष्किन्धा काण्ड में "सौवीरम् अंग लोकं च कोलूकमेव च" तथा महाभारत के भीष्म पर्व में "अभिसारः कुलूतश्च शैवाला वाहिकस्तथा" आदि सन्दर्भों से वर्तमान कुल्लू की पृष्ठभूमि भली प्रकार से आंकी जा सकती है।

पुस्तक में ऋग्वेद काल के तीसरे दौर के राजा शम्बर और दाश का सम्बन्ध इस क्षेत्र से जोड़ा है। डामर, बानर, यक्ष, पिशाच, राक्षस, दैत्य, दानव, नाग, गन्धर्व आदि प्राचीन जातियों से लेकर किन्नर, किरात, खश, कोल, कनैत आदि वर्तमान जातियों पर शोधपूर्ण पर्याप्त सामग्री पुस्तक में जुटाई गई है। ऐसी सामग्री के लिए निश्चित रुप में श्री प्रार्थी को बहुत परिश्रम करना पड़ा है। और सामग्री को एक स्थान पर संगृहीत करके भविष्य के काम को बहुत सरल कर दिया है।

श्री प्रार्थी ने कुनिघंम और हीरालाल शास्त्री द्वारा उल्लिखित पहली या दूसरी सदी-ईसवी के सिक्के "राजनः कोलूतस्य वीरयशस्य", ह्यूनसांग के "क्यू-लो-तो" बराहमिहिर की "वृहत्संहिता" और विशाखदत्त की पुस्तक "मुद्रा राक्षस" से संदर्भ ले कर कुल्लू के इतिहास को यों छठी-सातवीं शताब्दी तक पहुंचाया है। परन्तु मूल रूप में वे इसे बौद्ध काल तक की कहानी समझते हैं और निम्न पंक्तियों के साथ इस खण्ड को समाप्त करते हैं:—

"बौद्ध काल के साथ ही युग-युग की बात और हमारी कहानी का पहला चरण समाप्त होता है। दूसरे भाग में कुल्लू के पाल वंशी राजाओं का इतिहास, मण्डी, सुकेत, बीड़, भंगाल, कुम्हारसेन, बुशैहर, चम्बा और लद्दाख वालों के टकराव, कुल्लू की देव पद्धतियां, कुल्लू में वैष्णव धर्म का प्रसार, मणिकरण की चांदी की खान और राजाओं के अत्याचार, सिखों के आक्रमण और लूटमार, सिराजियों का दूम्ह, अंग्रेजों की आमद, स्वतन्त्रता संघर्ष और फिर स्वतन्त्र भारत में कुलूत की रूपरेखा तथा हिमाचल प्रदेश में शुभ सम्मेलन आदि विषयों पर रोचक और परिचयात्मक प्रकाश डालने का प्रयत्न करेंगे।"

परन्तु खेद है कि इस प्रकार परिचयात्मिक प्रकाश डालने का श्री प्रार्थी को अवसर नहीं मिल सका। उनके पास सामग्री थी, सामर्थ्य था परन्तु जिन्दगी ने उनके साथ वफा नहीं की। जीवन के अन्तिम चरणों में उन्हें यह एहसास हो गया था कि उनका प्रोजेक्ट पूर्ण नहीं होने वाला है। शायद तभी उन्होंने मायूसी में गज़ल के कुछ शेर लिखे थे:—

कितना भी हो बुलंद मगर इक मुकाम पर ।
यह आसमां जमीं के बराबर दिखाई दे ॥
हंसता हूं इसलिए कि मेरा दरद छुप सके ।
रोता हुआ न मेरा मुकद्दर दिखाई दे ॥
ऐ चांद बच निकलना वहां से महाल है ।
कातिल जहां खलूस का पैकर दिखाई दे ॥

श्री प्रार्थी ने यह पुस्तक तब लिखी है जब वे मंत्री के पद पर बहुत व्यस्त जीवन व्यतीत करते थे। वैसे उनका कहना है "बारह वर्ष मैंने इस कहानी की खोज में लगाए"। निश्चय ही पुस्तक बहुत लम्बे परिश्रम का परिणाम है, परन्तु सामग्री की पुस्तक रूप देने में वे अधिक समय नहीं लगा सके थे। इसलिए पुस्तक में पुनरावृतियां हैं। जब पुस्तक लिखी गई तो उनका दिल्ली का एक मित्र तुरन्त सामग्री उठा कर ले गया, परन्तु न वह स्वयं प्रूफशोधन का कार्य कर सकता था न श्री प्रार्थी के पास इस के लिए समय था। इसलिए प्रूफ की अनेक भूलें हैं, परन्तु इससे पुस्तक का महत्व कम नहीं हुआ है। पुस्तक अभी पाठकों में बहुत प्रकाश में नहीं आई है। कारण यह कि यद्यपि उन्हें मंत्री होने के कारण अनेक प्रकाशक मिल रहे थे, परन्तु वे इस के लिए मन्त्री पद का लाभ नहीं उठाना चाहते थे। इस लिए पुस्तक उन्होंने अपने नाम पर "नील कमल प्रकाशन, कुल्लू" के पते पर प्रकाशित की। यदि पुस्तक किसी पुस्तक विक्रेता और प्रकाशक द्वारा छपती तो पुस्तक की अनेक प्रतियां बिक्री होती परन्तु पुस्तक अब भी वहीं पड़ी है। इस दिशा में एक कारण यह भी था कि वे नील कमल प्रकाशन के नाम से प्रकाशन का बहुत बड़ा कार्य करना चाहते थे और इसीलिए इस पुस्तक से ही इस का आरम्भ किया जो वहीं समाप्त हो गया।

राजनीति में व्यक्ति की योग्यता प्राय: डॉवांडोल रहती है। योग्यता को सही रूप में आँका नहीं जाता। व्यक्ति की योग्यता पर राजनीति छाई रहती है। यही कारण है कि श्री प्रार्थी की साहित्यिक प्रतिभा उस रूप में सामने नहीं आई है जिसकी वह अपेक्षा रखती है। श्री प्रार्थी ने बहुत महत्तपूर्ण कार्य आरम्भ किया था उसका बहुत बड़ा भाग वे पूर्ण भी कर चुके हैं परन्तु उनकी सारी योजना पूरी नहीं हुई है। उन्होंने उसके लिए पर्याप्त सामग्री पहले भाग में भी यत्र-तत्र जुटाई है। आशा है कोई प्रतिभाशाली विद्वान उनके छोड़े हुए कार्य की पूर्ति करेंगे। यही उनके प्रति उचित श्रद्धाजंली होगी। इस सम्बन्ध में उनकी एक गज़ल के शेर बड़े उपयुक्त हैं :—

मुझे मिटा के नया नक्श इक बना डाला,
इधर चिराग़ बुझाया उधर जला डाला ।

शांत आश्रम, शामघन,
तारापुर, कुल्लू

"श्री लाल चन्द प्रार्थी 'चांद' कुलवी"

– विष्णु शर्मा

प्रार्थी जी मेरे ज्येष्ट भ्राता पं० शिव शर्मा के शिष्य थे। उसी नाते मेरा उनसे परिचय हुआ। 1969 में चोनी बंगला-कुफरी में 'कस्तूरा मृग पालन' सम्बन्धो भारत सरकार द्वारा नियोजित एक समिति के सदस्य के रूप में मैं उन से मिला। प्रार्थी जी तब हिमाचल प्रदेश सरकार के वन मन्त्री थे। ऋषियों जैसे दाढ़ो, काकयक्ष, पतले सुनहरे चश्मे के पीछे तीखो स्वच्छ गहरी और बीधती हुई आंखें, चेहरे पर मुस्कराहट, गम्भीर गहरी आवाज़, इकहरा बदन, लम्बी-लम्बी अंगुलियों वाले हाथ, काली अचकन, चूड़ीदार सफेद पाएजामा ऐसे लगते थे प्रार्थी जी। बैठक के बाद उनके आकर्षक और कुछ कर सकने की क्षमता वाले व्यक्तित्व का प्रभाव मुझ पर रहा और वह कभी टूटा नहीं।

सिपाही प्रकृति से या सैनिक प्रभाव से अलगाव पसन्द होते हैं। परन्तु प्रार्थी जी धीरे-२ मुझे अपने निकट ले आए। आयुर्वेद साहित्य और विनोद हमारा साँझापन था। परन्तु जो चीज मुझे प्रार्थी जी के निकट लाई वह थी उनमें कूट २ कर भरा हुआ सैनिकपन। एक दुबले पतले शरीर में न जाने कितनी बीमारियाँ संजोए हुए वह अपने कर्म की भावना को शरीर से अलग रख लेते थे।

मुझे याद है कि एक बार सोलन के ठोडो मैदान में गहरी सर्दियों में किसी सनकी ने कविसम्मेलन बुला लिया। प्रार्थी जी मुख्य अतिथि थे। खुला मैदान मुंह बांए झूल रही कनाते मंच जमा देने वाली हवाओं से लिया हुआ। कुछ कवि लोग तो आए ही थे। हिमाचल प्रदेश की साहित्य के प्रति सबसे बड़ी देन है उनके कवि। पंख टूटे कौवे की भान्ति मैं स्वयं भी एक हूं।

रात के नौ बजे होंगे टेलीफोन बजा। लाइन पर प्रार्थी जी।

—कहिए क्या कर रहे हैं?

—ठंड के मारे सिकुड़ा बैठा बीबी को निहार रहा हूं।

तो फिर आजाइये सोलन सर्किट हाउस। आपको हम गरम करेंगे।

—साहब......

—आप कवि सम्मेलन में नहीं आ रहे क्या ?

—मुझे तो मालूम भी नहीं कि सम्मेलन है और वो भी यह कहर की सर्दी...

उन्होंने मुझे कहने का मौक़ा ही नहीं दिया।

—खाना तो खा लिया होगा? नहीं तो हमारे साथ शरीक होइये ना।

—साहिब आज तो बीबी ने बहुत पहले ही खाना खिला दिया था। प्रार्थी जी खिल खिला दिए।

—हमारी ओर से क्षमा मांगिए और हमारा नमस्कार कहिए। नीचे सड़क पर आ जाइये। गाड़ी हमने भिजवा दी है।

सर्किट हाउस पहुंचा प्रार्थी जी चारपाई में विद्यमान थे। कमरे में राजनीति वालों की भीड़ का आवागमन जारी था। कुछ मिलने वाले बाहर बैठे थे। हाथ मिलाया। ज्वर से जल रहा था।

"आप को तो तेज बुखार है।" मैंने आश्चर्य से उनकी ओर देख कर कहा।

"बुखार का क्या है यह होता रहता है। कामकाज थोड़ ही बन्द हो जाते हैं।" उत्तर मिला।

समाज के और उनके अपने प्रति अत्याचार से कोफ्त हुई। रात के दस बज गए थे। जोंकों की भांति लगे लोगों से किसी प्रकार पिंड छुड़ा कर हम चल पड़े। सम्मेलन में श्रोताओं के रूप में एक दर्जन कवि ही। बाकी न कोई आगे न पीछे। अपनी स्वाभाविक मुस्कान से प्रार्थी जी ने अभिवादन किया कुछ उपस्थित कवियों से चुटकियां ली। "..........तो शायद गर्म होने गए होंगे।" कुछ एक अनुपस्थित कवियों के बारे प्रार्थी जी ने हंस कर पूछा।

मुझे तो मंच पर बैठते ही लगा कि बरफ की शिला पर लिटा दिया गया हूं। गर्म कपड़ों में से एकसरे करती हुई हवा परन्तु प्रार्थी जी की जबान पर न शिकवा न चेहरे पर शिकन। बुखार से उबला हुआ दम शरीर श्वास से उखड़ा हुआ पर उनकी वही प्रसन्न मुद्रा।

ग्यारह बजे तक कविताएं चली। किसी ने क्या कहा मुझे याद नहीं मेरे शरीर के गरम भाग तो जम चुके थे जबड़ों में दर्द होने लगा था। तब आए प्रार्थी जी।

क्या रस उनकी वाणी में था और क्या पकड़। उस रुग्ण शरीर से शक्ति सामर्थ्य और चरम सहनशीलता की प्रेरणा मिली। मुझे अपने सिपाहीपन पर शरम आई। सम्मेलन समाप्त हुआ। गाड़ी में पहुंचने तक प्रार्थी जी के कहकहे रात में गूंज रहे थे। मुझे महसूस हुआ मैं एक महान् सेनापति के साथ था जिसे कर्त्तव्य के आगे सुख दुख नहीं होता। गाड़ी चलते ही मैंने विरोध किया :—

इतना बुखार थकावट छाती में तकलीफ और कवि सम्मेलन क्या यह कीमत है इस कष्ट की।"

कवि और कलाकार तो ईश्वर के रुप होते है। हम उनके दर्शनों को कैसे न जाते? अपनी थोड़ी सी तकलीफ़ के लिए हम उन्हें निराश करते क्या? और फिर तकलीफ़ भी क्या हुई। गाड़ी में आए गाड़ी में जा रहे हैं।

हास्य विनोद चुटकियां लेना प्रार्थी जी का स्वभाव था।

एक बार प्रार्थी जी नालागढ़ के रैस्ट हाउस में ठहरे थे। मैं अपने भूतपूर्व सैनिकों सम्बन्धी कारोबार से नालागढ़ गया तो उनसे मिलने जाना स्वाभाविक ही था। बाहर सहन में बैठे थे तो एक साहब इधर उधर देख कर बोले इस इलाके में बड़ा जबरदस्त तीतर होगा।

मेरे मुह से निकल पड़ा—

"हां है तो लेकिन जबसे प्रार्थी जी आए हैं जान बचाने के लिए सब भाग गए हैं।"

प्रार्थी जी खिल खिला उठे। पर संयोग वश उसी समय एक तीतर बोल उठा।
साहब ने पूछा—"और यह?"

इससे पहले कि मैं कहता कि यह बेखबर है प्रार्थी जी बोले "अपनी मादा को खबरदार कर रहा है कि आज एक कर्नल भी इधर हैं?" ऐसे थे वह हाज़र जवाब और विनोद प्रिय।

कविता, संगीत और कला के इस प्रेमी ने हिमाचल के नृत्य नाटक देश के कोने तक ही नहीं विदेशों तक भी पहुंचा दिए। कुल्लू को तो उन्होंने अन्तर्राष्ट्रीय लोक नृत्य का केन्द्र बना दिया था। स्व. डाक्टर यशवन्त सिंह परमार प्रार्थी जी के गुण ग्राहकों में से थे। इन दोनों के तालमेल ने हिमाचल संस्कृति को जो योगदान दिया है वह अनूठा है। प्रार्थी जी रत्न पारखी थे जहां वह व्यक्ति को पहचानते थे। साधारण बातचीत से काम की बात जहन कर लेनी और उसको मूर्तरुप देना वह खूब जानते थे।

प्रार्थी जी को मैं अन्तिम दिनों में भी मिला। कोई विषाद की छाया उनपर न थी। चुनावों में अपनी हार के प्रति वह स्वभाविक दार्शनिक रहे। उनका मन आयुर्वेद और अकादमी में सदा अटका पाया। गिर रहे स्वास्थ्य में संघर्ष और मानसिक दृढ़ता सदा प्रबल देखी। जीवन में आस्था और प्रसन्नता-उनका व्यक्तित्व बना रहा।

नगर में उनकी खिड़की के आगे खुली हुई व्यासा की घाटी शान्तवातावरण और प्रार्थी जी अभी भी नहीं भूलते।

सोमसी

श्रीमति प्रार्थी से पिछली बार शोक संवेदना प्रकट करने गया तो उनसे पूछा कि वह अन्तिम क्षणों में कैसे रहे ?

—"बस एक दिन पहले उन्होंने मुझ से कहा" श्रीमति प्रार्थी ने बताया "अब जाने का समय आ गया है। कल सुबह।"

वह बोली —मैंने समझाया

इससे भी ज्यादा बीमारियों से तुम उभरे हो। ऐसी क्या बात है ?

तुमने तो कभी मन नहीं हारा था।"

"नहीं अब तो जाना ही होगा।"

वह सच्चे निकले। हिमाचल का एक महान् कलापारखी, कवि, राजनितिज्ञ और आयुर्वेद का उपासक इस धरती से विदा हुआ।

एक प्रश्न मेरे मन में उठता है कि उस व्यक्ति की तो देन बहुत थी प्रदेश को। क्या हमारा भी कोई कर्तव्य बनता है उनके प्रति। कैसे लाल चन्द प्रार्थी—चाँद कुलवी को अमर करें उन रंग मंचों में जो उन्होंने हमें दिए इन वादियों में जहां वह नाचे गाए, जहाँ से उनके कलाम मुखरित हुए।

पर्वतपुर
कण्डाघाट

श्री प्रार्थी सच्चे अर्थों में पहाड़ी थे

– डॉ० प्रत्यूष गुलेरी

आज विश्वास नहीं होता कि हिमाचल की संस्कृति, कला और भाषा के दिलदादा संरक्षक एवं उत्प्रेरक चांद कुलवी श्री लाल चन्द प्रार्थी जी नहीं रहे। ११ दिसम्बर १९८२ को महान् आत्मा महाकाल की ज्योति में समा गई। निधन के समाचार को सुन कर गहरा आघात पहुंचा। उनके होते हुए प्रत्येक साहित्यिक महफल गरमा उठती थी। उनकी उपस्थिति को कुछ बात ही निरली थी। ईर्ष्या, द्वेष एवं वैमनस्य से वे एक दम दूर थे। उनका हृदय एवं व्यक्तित्व खुली किताब थी। उन्होंने कभी किसी से कुछ छुपाया नहीं है। हिमाचली कवियों/लेखकों/कलाकारों विशेषकर काँगड़ा वादी से उन्हें बड़ी आशाएं थी। उनमें एक साथ कवि का हृदय कुशल राजनीतिज्ञ की सूझबूझ, अनुसन्धित्सु की जिज्ञासा और इतिहासकार के विषय में गहन पीठ सब कुछ विद्यमान था।

उनके दिल में हिमाचली, कला, भाषा और संस्कृति को भारत ही क्या संसार के मानचित्र पर लाने तक की कल्पना की उड़ान थी। वे पहाड़ी भाषा के विकास के लिए पूर्णतयः समर्पित और अडिग थे। उन्होंने हिमाचली युवाओं, बच्चों-बूढ़ों सबसे अपनी मां के दूध से सीखी भाषा को गले लगाकर सच्चा प्रेम देने का निरन्तर आग्रह किया। सत्ता में रहते हुए उन्हें अधिक चिन्ता भाषा और संस्कृति विभाग की ही रही। सत्ता के छिन जाने पर पहाड़ी के विकास में आए गतिरोध का देखकर उनका हृदय तड़प उठा था। एक निजी पत्र में व्यक्त उनके विचार इस प्रकार हैं—"यह जानकर प्रसन्नता हुई कि आपका रचात्मक कार्य पूरी हिम्मत से चल रहा हैं। इसे जारी रखिए। पहाड़ी भाषा आप जैसे विद्वानों की ओर ही निहार रही है, वरना अन्धकार है। जो पौधा हाथ से लगाया था उसे देखकर कलेजा मुंह को आ रहा है। असहाय और किंकर्तव्यविमुढ़ बने चुपी साधे बैठे तमाशा देख रहे हैं एवं समय की प्रतीक्षा कर रहे है जो आएगा अवश्य। और उसी समय की प्रतीक्षा करते-करते ....उफ !

अपने एक पत्र में जो नगर से 27-7-78 को लिखा है उनमें भी उन्हें नए सवेरे का आभास हुआ है। वे लिखते हैं— यहां सब कुशल है। आप की कुशलता सदैव चाहता हूं। पीयूष जी ने तो विसार ही दिया है कोई पत्र-व्यवहार भी नहीं। कुछ पता भी

नहीं। क्या जाने कहां खो गए हैं और कब वापिस आएंगे। यदि वे सो गए हों तो उन्हें जगाईए और कहिए उठो ! सबेरा हो गया है.........दूर क्षितिज पर अन्धकार छूटने लगा है। स्वर्णीम आभा झिल मिल आँख मिचौनी कर रही है। अब उजाला हुआ ही चाहता है।" कांगड़ा आने की इच्छा उनकी निरंतर बनी। दोस्तों के दर्शनों को तड़पते रहे पर विधाता ने उनकी इच्छा पूरी नहीं की। पत्र में आगे लिखते हैं —" मेरा स्वास्थ्य कुछ बहुत अच्छा नहीं है। वर्षाकाल में तो ठीक होगा भी नहीं। ऋतु परिवर्तन पर मैं कांगड़े की ओर कुछ दिनों के लिए आना चाहता हूं। यदि यह कार्यक्रम बन पाया तो आप सब के दर्शन करुंगा और साक्षात बधाई दूंगा।

विफलताओं को सफलताओं में बदलने के लिए वे निरंतर आशावादी रहे। नगर (कुल्लू) 7-9-1979 को लिखे निजी पत्र में वे जान जोखम में डालकर पहाड़ी भाषा को उसके अहित चिन्तकों से बचाने की एक चिन्ता और सोच यों लिखते हैं —"एक बार फिर विफलताओं को सफलताओं में बदल देने का अवसर आया है। जी जान के ज़ोखम पर भी यह लड़ाई तो अब लड़नी है। पहाड़ी भाषा के लगाए पौधे की चिन्ता उन्हें यहां भी बनी रही है। पहाड़ी साहित्यकारों से और गहरे उतर कर लिखने पर भी बल दिया —"मने दी भड़ास' कहीं-कहीं से देखो है परन्तु ध्यानपूर्वक देखनी बाकी है। प्रयास बहुत सफल है परन्तु पहाड़ी के नवीन कलाकारों को अधिक गहराई में डूब कर लिखने की ओर प्रेरित करने की आवश्यकता है। समय आ रहा है, आप सब साथी तैयार रहें। इस पौधे को अहित-चिन्तकों के कुप्रयासों से तो बचाना ही होगा। शायद यह तबदीली इसलिए आ रही है। मैं शीघ्र उस तरफ का प्रोग्राम बना रहा हूं। दो चार दिनों में शिमला जा कर प्रोग्राम बनेगा। डा० पीयूष तो धर्मशाला में ही होंगे। मित्रों और जान पहचान वालों को भी हमारी शुभकामनाएं देते रहें। पत्र-व्यवहार जारी रहे इससे बड़ा संतोष मिलता है।"

प्रार्थी जी के व्यक्तित्व में एक बहुत बड़ी विशेषता यह थी कि वे सबसे सच्चा प्यार करते थे और आत्मीयता का साफ सुथरा सम्बन्ध बनाए रखते थे। यही कारण था कि वे साहित्यकारों में सबको एक जैसे प्रिय थे। वे विरोधियों को भी गले लगाते थे। उन्हें घृणा से नहीं अपितु प्यार से जीतते थे। उर्दू-हिन्दी के प्रसिद्ध शायर होने के साथ-साथ मातृ भाषा पहाड़ी के उत्कृष्ट कवि भी थे। उनकी आंखों ने सदा पहाड़ी के विकास और सम्वर्द्धन का एक सुन्दर सपना ही देखा। वे सच्चे मानों में पहाड़ी थे। पहाड़ी समाज, पहाड़ी संस्कृति एवं पहाड़ी भाषा उनके निधन से अनाथ प्रतीत होती है। दिल रो-रो उठता है। बहुमुखी प्रतिभा के धनी उस महान् आत्मा श्री प्रार्थी को शत्-शत् प्रणाम्॥

राजकीय सान्ध्यकालीन महाविद्यालय,
धर्मशाला (हि०प्र०)

तुम ही सो गए दास्तां कहते कहते ।

-- प्रेम पखरोलवी

लोग पैदा होते हैं और मरते हैं। यह एक कुदरती नियम है। और यह नियम अटल है : हर व्यक्ति का पैदा होना और मर जाना। मगर कुछ ऐसे नरे नाहर भी होते हैं जो अपने तईं मर कर भी अमर कर जाते हैं। जो निज इह लिला बेशक समाप्त कर जाते हैं, मगर उनकी हस्ती जीवंत बनी रहती है, ठीक उस पुष्प की मानिंद, जो कुदरती नियम के तहत मुस्काता है, बिखर जाता है, मगर उसकी सुगंध हमारे दिलो दिमाग़ को देर तक ताज़गी प्रदान करती रहती है।

श्री लालचन्द प्रार्थी के नाम से स्वर्गीय विशेषण जोड़ते हुये एक मानसिक पीड़ा की अनुभूति हो रही है। मगर मानना होगा कि वह जानी मानी और दूर दराज़ तक निज पहचान एवं छाप छोड़ जाने वाली महान् हस्ती आज हमारे बीच में नहीं है। नहीं है महज़ अपने पार्थिव रूप में। अन्यथा वह बुलंद बांग एवं दबंग शख्सीयत एक दम हमारे साथ है ! उनकी शख्सीयत बहुआयामी हस्ती रही है – वह अमर है, उस का मौत कुछ बिगाड़ नहीं सकी। असगर गौंडवी का एक शेर प्रार्थी जी प्रायः गुनगुनाया करते थे, आज रह रह कर याद आ रहा है। यह शेर आम तौर से इन्सान को महान् और बड़ी हस्ती की व्याख्या को करता है :—

इलाही क्या किया तूने।
कि आलम में तलातुम है ।।
गजब की एक मुश्ते खाक।
ज़ेरे आसमां रख दी ।।

मृत्यु के बाद, मनुष्य सचमुच एक मुट्ठी भर खाक (माटी) होकर रह जाता है। परंतु ईश्वर की कुदरत या कहें कि कुदरत का करिश्मा जो इसी 'मुश्ते खाक' से पानी माटी के आकिंचन पर्दे से लालचंद प्रार्थी जैसे इन्सान पैदा होते हैं। निज जीवन की स्वल्प अवधि में आस पास, समाज, धर्म, संस्कृति और साहित्य कला को प्रभावित करते

हैं। राष्ट्र के भावनात्मक परिवेश पर अपने होने की छाप लगाते हैं। और भरा पूरा जीवन बिता कर एक दिन सबको 'अलविदा' कह जाते हैं। ऐसे इन्सान रोज़ रोज़ पैदा नहीं होते हैं।

समझ नहीं आता है कि प्रार्थी जी के महान् व्यक्तित्व के किस पहलू पर कहने की धृष्टता करुं। प्रार्थी जी कलाकार थे.........शास्त्रीय संगीत और नृत्य में उनकी रूचि थी। लाहौर अल्प आवास में उन्हें आयुर्वेद में भी रूचि पैदा हुई थी। पश्चात् उन्होंने पंचायत अधिकारी के बतौर सरकारी नौकरी का भी अनुभव प्राप्त किया। ये सब बातें उनसे हुई मेरी भेंट की पृष्ठ भूमि में आती हैं। मेरी मुलाकात उनसे सन् 1953 (अगस्त) में हुई। तब तक वह नौकरी आदि छोड़छाड़ कर राजनीतिक क्षेत्र में सक्रिय रूपेण पदार्पण कर चुके थे। वह कुल्लू क्षेत्र के, पंजाब विधान सभा में सदस्य (विधायक) थे। मगर उनकी कलात्मक और साहित्यक अभिरूचियां एक दम यौबन पर थी। जन सेवा की उन पर जैसे धुन सवार रहती थी। उन दिनों कुल्लू ज़िला कांगड़ा का एक भाग (उपमंडल) था। हम कुछ युवकों ने कला एवं साहित्य, संस्कृति के उत्थान हेतु कुल्लू में एक छोटे से क्लब की स्थापना की थी। स्व० प्रार्थी जी उसके संस्थापक अध्यक्ष थे। क्लब की बैठकें हर सप्ताह सुलतानपुर में श्री राम कुमार कपूर या आखाड़ा बाजार में ला० बिहारी लाल सूद जो के यहां जुड़ा करतीं। लाला जी क्लब के महामन्त्री थे। पुरोहित चन्द्र शेखर 'बेबस' श्री रमा चरण पराशर श्री बिशन दत्त उपाध्याय तथा मैं उस क्लब के सक्रिय सदस्य (या कहें कार्यकारिणी के विभिन्न अंग) थे। क्लब का नाम था अमेच्योर रिक्रियेशन क्लब कुल्लू।

एक बार पालमपुर (कांगड़ा) बाजार जल कर राख हो गया। तब प्रार्थी जी ने 'क्लब' की आपात बैठक बुलाई। हम लोगों ने कुछेक नाटक तैयार किए थे। प्रार्थी जी ने उन का निर्देशन किया। और कुल्लू, भूंतर, मनाली तथा जगतसुख में उस नाटक के 'शोज़' आयोजित करवायें। इस प्रकार कई हज़ार की धन राशि एकत्रित की और उसे लेकर प्रार्थी जी स्वयं ज़िलाधीश कंवल नैन को सौंपने धर्मशाला गये थे ताकि अग्निपीड़ितों को कुछ राहत उपलब्ध हो सके।

क्लब की साप्ताहिक बैठकों में प्रार्थी जी गजल और कोई शास्त्रीय 'आईटेम' प्रस्तुत किया करते थे। कुलवी भाषा में खुद के लिखे और संगीतबद्ध किये उनके गीत बहुत लोक प्रिय थे। 'लाशा ढोले रा ढमाका, देश सा कुल्लू रा बड़ा बांका' उनका अत्यन्त जन प्रिय गीत था। अब तो ऐसे कुछ के गीतों के 'रिकार्ड' भी उपलब्ध हैं।

यद्यपि कालेज पढ़ने, प्रार्थी जी कभी नहीं गये, मगर उर्दू, हिन्दी और इंग्लिश का उनका ज्ञान एक ग्रेज्यूयेट से किसी तरह कम नहीं था। पहले लाहौर फिर धर्मशाला से प्रकाशित होने वाले साप्ताहिक 'डोगरा संदेश' में प्रार्थी जी की गज़लें हर मास प्रकाशित

होती थी। स्व० रूप सिंह 'फूल', एडवोकेट उक्त साप्ताहिक के संपादक थे, प्रार्थी जी के घनिष्ट मित्र थे। जब कभी फूल साहब कुल्लू आते, प्रार्थी जी उनके ठहरने का प्रबंध स्व० राम रक्खामल सूद, आखाड़ा बाजार के यहां करवाते। दोनों मित्रों का यह परिसम्मिलन नगर के दूसरे साहित्य प्रेमियों के लिये एक दुर्लभ अवसर बन जाता। इस संगीत और साहित्यिक गोष्ठी का आनन्द महीनों तक स्मरण रहता। दोनों अभिन्न मित्र खूब उन्मुक्त भाव से बात पर ठहाके लगाते और महफल को 'गुलज़ार' बनाते।

नादौन में एक समय में एक शख्स बिशनदास 'गुलशन' जी भी लाहौर में 'आलिम फ़ाज़िल' की उच्च परीक्षा हेतु डेरा डाले पड़े थे। रूप सिंह फूल लालचन्द प्रार्थी और बिशनदास गुलशन नादौनवी के अंदाज पर प्रार्थी जी ने अपना 'उपनाम' चांद कुलवी रखा था। आरम्भ में आप उर्दू में ही लिखते थे। अजब धूम थी उर्दू की तथा उर्दू शेर व शायरी की। मेरे तई प्रार्थी जी विशेष स्नेह भाव का प्रदर्शन संभवतः इस लिये भी करते थे कि मैं नादौन से कुल्लू सर्विस करने पहुंचा था। नादौन से उन्हें मनोवैज्ञानिक लगाव था, गुलशन जी की वजह से। गुलशन जी मेरे अध्यापक रहे थे। वह एक ऊँचे दर्जे के शायर भी थे, यह मुझे कुल्लू जाकर प्रार्थी जी तथा 'श्री दिलेराम शबाब' जी से ज्ञात हुआ। प्रार्थी जी ने बताया कि गुलशन महोदय ने चन्द संग्रह कविताओं के तैयार कर छोड़े है। न जाने वह हस्त लिखित गजलें किस के पास हैं। मैंने इन गज़लों का एक संग्रह (बयाज़) देखा है। मगर इसे प्रकाशित कराना अभी शेष है। प्रार्थी जी कांगड़ी (पहाड़ी) बहुत सुगमता से बोलते थे। उनके प्रति शीघ्र आकृष्ट होने का मेरे लिये एक कारण यह भी था। 'फूल' साँब को ये लोग मज़ाक मज़ाक में 'नौल' (न्योला) कहकर बुलाते थे। दोनों कवि बड़े भावुक थे और साथ साथ विनोदी प्रवृति के भी। हास्य-विनोद क्षण सहज ही जुटा लेते थे। दोनों के मध्य चलने वाली नोक झोंक देखने-सुनने की चीज़ होती थी तथा कई सप्ताह तक उस का आनंद सुनने वालों को ऐसे फक्कड़ एवं हाल मस्त दोस्तों की दोस्ती का रंग गुदगुदाता रहता था।

उनके साथ निकट से गुज़ारे कुछ उल्लेखनीय लमहों की याद दिमाग़ में महफूज़ है। मगर सबका जिक्र कर पाना यहां संभव नहीं है। केवल दो घटनाओं का वर्णन जरूर करुंगा।

प्रार्थी जी कुल्लू क्षेत्र से पंजाब विधान सभा के विधायक थे और बाहय सिराज (आउटर सिराज) से स्व० राजा रघुवीर सिंह जी विधायक थे। दोनों में अच्छी मैत्री थी। नवम्बर ५५ की बात है। मुझे पंजाब की नई राजधानी चण्डीगढ़ किसी सरकारी कार्यवश जाना था। मगर चण्डीगढ़ मेरे लिए सर्वथा अपरिचित स्थान था। मैंने अपनी समस्या प्रार्थी जी के समक्ष रखी।

संयोग की बात, अगले ही सप्ताह प्रार्थी जी का कार्यक्रम चण्डीगढ़ का बन गया।

एक दिन बाद दोपहर तीन बजे मुझे उनका आदेश पहुंचा —'आज ही चार बजे राजा साहिब की गाड़ी (जीप) चण्डीगढ़ जा रही है। तैयार रहो...... ..हम आपको ढालपुर में पिकअप कर लेंगे।'

ठीक चार बजे हम लोग कुल्लू से रवाना हुए। गाड़ी में हम चार जने थे : राजा रघुवीर सिंह जी, प्रार्थी जी, मैं तथा गाड़ी का चालक। राजा महोदय से मेरी उतनी जान पहचान नहीं थी। मगर इस यात्रा में उन्हें भी काफ़ी उदारचित, विनोदी एवं खुश मिजाज पाया। राजा जी अच्छे पढ़े लिखे एवं सुसंस्कृत शख्स थे। बातचीत में अंग्रेजी भाषा के जुमलों का प्रयोग अकसर ज्यादा रहता था। गाड़ी पूरी गति से जा रही थी। रास्ता कच्चा था (उन दिनों यह मार्ग पक्का नहीं था) अतः मंडी छः बजे के बाद पहुंचे। यह तय हुआ कि रात बिलासपुर रुकेंगे।

मार्ग में जीप काफ़ी झटके खाती धीमी रफ़्तार से जा रही थी, मगर हम लोग बातों में पूरे मनोयोग से संलग्न थे। प्रार्थी जी, स० प्रताप सिंह कैरों (मु०मंत्री) की विकासनीति पर तब्सरा कर रहे थे। सरदार कैरों स्व० भीमसेन सच्चर का तख्ता पलट कर मुख्य मन्त्री बने थे। प्रार्थी जी की सच्चर साहब के साथ खूब घनिष्टता थी। मगर राजा रघुवीर सिंह जी बता रहे थे कि सरदार (कैरों) साहिब लंबे समय तक पंजाब को कुशल नेतृत्व प्रदान कर सकेंगे। बाद के इतिहास ने इस भविष्यवाणी को सत्य सिद्ध किया। प्रार्थी जी की दलील यह थी कि श्री कैरों मैदानी भू-भागों की उन्नति में अधिक रूचि लेते थे और कांगड़ा, कुल्लू, लाहुल-स्पिति आदि के पर्वतीय भू-भागों की उपेक्षा हो रही है। उनके मन में अपने 'पहाड़ीपन' तथा 'पहाड़ियों' के पिछड़ेपन के लिये एक विशेष संवेदना थी। मगर उस समय वह मात्र एक विधायक थे। बिलासपुर पहुंचने में अभी कुछ मिनट शेष थे, अपनी बात को समेटते हुये प्रार्थी जी ने एक शे'र सुनाया, उस का एक मिस्रा मेरे ज़हन में महफ़ूज़ है :—

गुमराह इस लिए हैं कि
राहबर खफ़ा न हो।

राहबर से मुराद संभवतः प्रताप सिंह कैरों जी से थी। उस समय यह समझा जाता था कि कांगड़ा और कुल्लू से जितने विधायक पंजाब विधान सभा में थे, सब कैरों साहिब के अंध-भक्त (यसमेन) थे। जबकि प्रार्थी जी की बातों से यह आभास मिलता था कि वे इस अंध-भक्ति के समर्थक नहीं थे। स्वयं राजा रघुवीर सिंह कैरों के विशेष अनुरागी थे, और उसका फल उन्हें मिला भी........उन्हें कैरों ने पर्वतीय क्षेत्रों के विकास हेतु अपने मंत्री मण्डल में उपमन्त्री बनाया था। हालांकि यह अधिकार श्री प्रार्थी जी का था। अस्तु !

साढ़े आठ बजे हम बिलासपुर में थे। मगर यह क्या ? जीप विश्राम गृह में नहीं

जाकर नीचे सतलुज के किनारे बसे राजमहल के प्रांगण में जा पहुंची थी। महल चांदनी में नहा रहा था ....और गैस लैम्पस की रोशनी एक अनूठी जगमगाहट वातावरण को प्रदान कर रही थी। अति निकट थी नदी की चपल लास्यरत लहरें। राजा आनंदचन्द (संयोग कि अब वह भी स्वर्गीय हो गये हैं।) के जाकर गाड़ी से कब सामान भीतर ले आये, पता भी न चला। हम लोग महल के बैठक खाने में चाय पान कर रहे थे और दोनों राजपुरुष शिष्टाचार में बातचीत कर रहे थे। मैं प्रार्थी जी की ओर (कुछ हैरानी से) देख रहा था। वह प्रकटतः बातों में रत थे, मगर वास्तव में कहीं अतीत में खोये थे।

मेरे लिये किसी राजमहल में मेहमान होने का यह पहला अवसर था। ड्राइंग रूम की दीवारें पूर्ववर्तीय राजाओं के कदावर चित्रों से खचित थी। आमने सामने के द्वारों के ठीक ऊपर मध्य में किसी बारह सिंगे की गर्दन सींगों समेत टंगी थी जो राजघराने की पुश्तैनी शूरवीरता अथवा राजाओं के शिकारी होने का प्रतीक था। महल के दरो दीवार से राजसी आन बान और शाही शान का आभास हो रहा था।

दस बजे हम लोगों को साथ वाले कमरे में लिवा ले गये, जहां बहुत बड़ा दस्तरखान लगा था... दूधिया चमचमाते मेज़ पोश बिछे थे... चांदी के थाल, क्रॉकरी, कटलरी, कटोरे और कटोरदान। चमचमाता सनहरा पटका कमर पर बांधे पगड़ीधारी वेटर। मेरे लिए यह सब एक तिलस्मी संसार का एक परिदृश्य प्रतीत हो रहा था। प्रकट महानता के समक्ष निजी लघुता का प्रत्यक्ष अनुभव हो रहा था। कटोरदानों की संख्या याद नहीं है। नाना पदार्थ सामने थे, सामिष और निरामिष दोनों। इन सबकी बहुलता में अपनी तो भूख जैसे गायब थी। क्या खायें, क्या छोड़ें, कुछ ठीक विवेक नहीं हो रहा था। मैं प्रार्थी जी के साथ संलग्न कर्सी पर बैठा था... .. मुझे लगा उनकी भी लगभग मेरे जैसी मनोदशा थी। वे लोग हमारी खातिरदारी में लगे थे, और इधर हालत कि किसी कठिन परीक्षा में से गुजरना पड़ गया था। सांध्य भोज समाप्त हुआ। एक राहत मिली।

हमारे सोने का प्रवन्ध कोने वाले एक कमरे में किया गया। यह शयन कक्ष अतीव मनोज्ञ साज़ सज्जा-युक्त था। नरम गरम मखमली गद्दे और लिहाफ। तकिए में फर या पक्षियों के नाजुक पंख ठुंसे थे .....जिन पर गरदन फिसल फिसल पड़ती। मगर सौभाग्यवश अब हम दोनों ही वहां मौजूद थे। भोजन के समय से बनी चुप्पी टूटी प्रार्थी जी ज़रा मूड में थे। कमरे में घुसते ही उन्होंने एक शे'र के साथ वह मौन भंग किया।

हम को नई रविश के हल्के जकड़ रहे हैं।
बातें तो बन रही हैं पर घर बिगड़ रहे हैं॥

व्याख्या में, उन्होंने समझाया – 'प्रेम जी, मैंने राजा सा'ब से कुल्लू में ही कहा था कि हम रेस्ट हाउस में रुकेंगे। पर यह खानों के खान मेहमान वाली बात है। राजा ने

राजा के यहां ठहरना पसन्द किया। तुम बताओ, खाना तो खाया ठीक से ?'

मैंने अपनी हालत उन पर प्रकट कर दी। तब इस वैभव और बहुल्य पर टिप्पणी करते हुए बोले — 'बिलासपुर रियासत के गांवों में रहने वाले कितने ही परिवार आज भी निर्धनता के दैत्य के शिकंजे में हैं। रियासत में बाढ़ आये, सूखा पड़े या दूसरी प्राकृतिक ईत्तियां व्यापें राजा साहिब को उनसे क्या मतलब ? उनके कारिंदे (कर्मचारी वर्ग) प्रजा से ठोक बजा कर मालिया वसूल करते हैं। प्रजा किस हाल में है, इससे आनन्द चन्द जी को कोई सरोकार नहीं। तुम मेरे साथ चलो, मैं तुम्हें दिखा सकता हूं आज भी ऐसे घर जहां चूल्हा नहीं जला है। हमारे राष्ट्र स्तरीय नेता कहते हैं कि फिरंगी ने भारत को लूटा है। पर मेरा दृढ़ मत है कि इन देसी साहबों — राजाओं नवाबों — ने इस सोने की चिड़िया के पर बुरी तरह नोच रखे हैं। वे तो माना गैर थे, पर इन 'अपनों' ने कौन सी भलाई की है प्रजा के साथ ?

मैं देर तक उनके नज़रिये पर विचार करता रहा.........और लगभग बारह बजे निद्रा ने मुझे राहत दी।

अगले दिन प्रातः ही चायपान के बाद प्रस्थान किया। दोपहर तक हम चण्डीगढ़ पहुंच गये। मार्ग में राजा रघुवीर सिंह जी ने बताया कि राजा बिलासपुर ज्यादातर इंग्लैंड में रहते हैं। गोबिन्द सागर तैयार है ....इसका पानी ऊपर तक आयेगा। यह महल शीघ्र जलनिमग्न हो जायेगा। राजा जी भारी कम्पेनसेशन मांग रहे हैं भारत सरकार से। अस्तु !

चण्डीगढ़ हम एक दो दिन रुके फिर कुल्लू लौट आये। इस बीच कई ऐतिहासिक घटनाएं घटी। प्रार्थी जी पं० जवाहर लाल जी नेहरु को कुल्लू लिवा लाने में सफल हुए। कुल्लू और मनाली भारत के मान चित्र पर उन्नत पर्यटक-स्थल बन कर उभरे। पंजाब पुनः बंटा। पहाड़ी इलाके पुराने हिमाचल में मिले। प्रथम नवम्बर 1966 को हिमाचल का वह स्वरूप सामने आया जिसकी कल्पना प्रार्थी जी और उनके मित्रों राजनेता रूप सिंह फूल, चौ० हरिराम कांगड़ा वाले ने की थी।

स्व० डॉ० यशवंत सिंह परमार ने प्रार्थी जी के जीवट को पहचाना और सराहा .. .. उन्हें अपने मंत्री मण्डल में उचित स्थान और सम्मान दिया। उन्हें मालूम था कि पंजाब से अलग होने और हिमाचल में विलय होने में प्रार्थी जी ने कितनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। पर्वतवासियों के सर्वांगीण विकास के लिये जो विचार प्रार्थी जी के दिमाग में थे, लगभग वही सूझ डॉ० परमार की थी। ये नेता मानते थे कि जिस आयोजन और विधि से मैदानों और वहां के लोगों का विकास होता है, वैसी प्लानिंग पर्वतीय क्षेत्रों में कारगर नहीं हो सकती।

11 तथा 12 नवंबर—1972 : नादौन में ला० जगन्नाथ 'कमाल' की 72 वीं वर्षगाठ के अवसर पर प्रो० नारायण चन्द जी पराशर (सांसद) ने एक समारोह आयोजित करवाया। मुझ तथा भाई मेला राम सावर को भी इस आयोजन में तुच्छ सहयोग का अवसर मिला। ला० जगन्नाथ जी मेरे और प्रोफेसर साहब के मुख्य अध्यापक रहे थे। मूलतः वह किरतारपुर के रहने वाले थे .. ..मगर नादौन में हाई स्कूल उन्हीं के खास उद्यम एवं यत्नों से हुआ था, अतः हम लोग उन्हें सम्मानित करने की सोच रहे थे। अतः यह समारोह रखा गया था। दिन के समय जो कार्यक्रम था, उसके उद्घाटन के लिये डाक्टर परमार मुख्य मन्त्री पधारे थे। रात्रि को एक कवि सम्मेलन था। इसकी अध्यक्षता हेतु श्री प्रार्थी महोदय पधारे थे। थोड़ा अवकाश पाकर मैंने प्रार्थी जी से कहा—कहें हजूर, अब तो आपने राज्य को पूर्ण राज्यत्व भी प्राप्त करवा दिया। अब पहाड़ एवं पहाड़ वाले प्रसन्न हैं। अपना देश, अपनी संस्कृति-सभ्यता अपना बाना अपनी बोली। आप सचमुच बधाई के पात्र हैं।

प्रार्थी जी ने मेरे कंधों पर हाथ रखा......थोड़ा थपथपाया और दाढ़ी पर कलात्मक ढंग से दूसरा हाथ फेरते हुये बाले—'तुम ठीक सोच रहे प्रेम, पूर्ण राज्य का दर्जा हमें परमार सा'ब ने दिलाया है। इसका समूचा क्रेडिट मैं उन्हीं को देता हूं। डॉ० परमार जैसा लीडर देश में दूसरा कौन है भला !' खैर......

थोड़े भावुक हो गये और फिर कहा—'सब ठीक ठाक हुआ देखा और भोग रहे हैं। मगर, एक ख्वाब अभो भी शर्मिदा-ए-तावीर होने को है। जानते हो, कौन सा ?... फिर थोड़ा रुक कर बोले—'मैं पहाड़ी भाषा की बात कर रहा हूं। बस एक साध है यह इस ज़िंदगी कि 'पहाड़ी' को डोगरी की भान्ति, देश की अन्य स्वीकृति भाषाओं में संवैधानिक स्थान दिलाया जा सके।'

यह साध अपूर्ण रह गयी उनकी। आज वह हमारे बीच में नहीं हैं। परन्तु उनकी सुझ का हम लाभ उठा सकते हैं। उन के संदेह को स्मरण करके उन के अधूरे छोड़े कार्य क्रमों को संपन्न कर सकते हैं। अपनी प्रसिद्ध कृति 'कुलूत देश की कहानी' में वह हमारे लिये अनेकों प्रश्न छोड़ गये हैं हल करने के लिये। इसका पारायण हमें प्रार्थी जी के व्यापक और गहन अध्ययन और विशद चिंतन की तीव्र अनुभूति से अवगत कराता है। यह कहानी वास्तव में अनूठो है और रोचक भो। समर्पणार्थ लेखक ने टिप्पणी की है—'कुलूत एवं समस्त पहाड़ी जन समाज की युवा पीढ़ो को, इस संदेश के साथ :—

निज गौरव का कुछ ज्ञान रहे।
हम भी कुछ हैं यह ध्यान रहे॥

सब जाये अभी मान रहे ।
मरणोत्तर गुंजित गान रहे ॥

सार रूप में, इस कहानी में वैदिक, महाभारत, रामायण कालीन भारतीय संस्कृति का दिग्दर्शन कराया है। कुलूत एवं किरातों के क्षेत्र तथा आस पास की सीमाओं के उधर के लोगों के साथ भारत वासियों के वाणिज्य-व्यापार और आम व्यवहार के ब्यौरों से यह 'कहानी' रोचक एवं समृद्ध और पठनीय बनी है । इस में जहां कल्पना का रंगीन संसार है, वहां इतिहास का ठोस धरातल भी है। इसी धरातल के एक कगार पर खड़े होकर सुधि लेखक ने कहानी कहने का अवसर प्राप्त किया है। यह कहानी चांद कुलवी को एक दम चौदहवी का पूर्ण चन्द्र बनाती है और धीरे धीरे आगे और आगे अंजाम तक बढ़ती है और तब हम चौंकते हैं......तब हठात होंठों पर यह शेर आ जाता है :

ज़माना बड़े शोक से सुन रहा था
तुम ही सो गये दास्तां कहते कहते ।

ग्राम पखरोल, बरास्ता नादौन
ज़िला हमीरपुर (हि०प्र०)
पिन : १७७ ०३८

"कौन कौन"
से
स्वर्गीय श्री लालचंद प्रार्थी
का
एक संस्मरण

-- चन्द्रकान्त

स्वर्गीय श्री लाल चन्द प्रार्थी का परिचय व्यापक क्षेत्र तक हो चुका है । इसका मुख्य कारण उनकी साहित्य में गाढ़ रूचि और परिणामतः अपने जन्म क्षेत्र का परिचय उन्होंने 'कुलूत देश की कहानी' लिखकर अमरत्व पाया है। सामाजिक क्षेत्र में भी वह आगे निकल चुके थे । हिमाचल के लोकप्रिय और वरिष्ठ मन्त्री भी रहे है और पंजाब विधान सभा के सदस्य तो लगभग बीस वर्ष रहते गए। उनकी लोक प्रियता का कारण उनका अपना व्यक्तित्व था । मनुष्य को खूब पहचानते थे और उनकी तबीयत को टटोल कर अपना बना लेते थे। विचारों के आदान प्रदान में भी उदार भाव रखते थे। ऐसा अनुभव मुझे है कि एक बार प्रार्थी जी के सामयिक चाटुकारों ने मेरे विपक्षी विचारों की चुगली की परन्तु वह तो मुझ में पूर्ण विश्वास रखते थे कहने लगे 'भई उसकी सोचने की पहुंच अपनी है। हमें तथ्य की खोज में उलझना नहीं चाहिए।'

प्रार्थी जी राजनीतिज्ञ के रूप में भी अपना अधिक समय पहाड़ी प्रदेश की संस्कृति और लोक जीवन को समझने बूझने में लगाते रहे हैं। सौभाग्यवश उनकी कदर करने वाले तत्कालीन मुख्यमन्त्री डाक्टर यशवन्त सिंह परमार, जो हिमाचल प्रदेश के वास्तविक जन्मदाता थे, प्रार्थी जी का सत्कार भी किया है और सदोपयोग भी । उन्हें हिमाचल प्रदेश की भाषा, कला और संस्कृति के प्रचार प्रसार हेतू इस विभाग को भी सौंपा । यह सम्मान साकार भी हुआ । उनके समय में ही पहाड़ी भाषा, कला और संस्कृति का प्रसारण उत्तरोत्तर बढ़ता जा रहा है ।

प्रार्थी जी को तो पहाड़ी प्रदेश ही केन्द्र आर्यवर्त का लगता था । उन्होंने प्रयत्न किया किया है लोक जीवन के बिभिन्न पहलुओं को दर्शाने का । वेश-भूषा, भाषा-बोली, खान-पान, नाच-गान तीज-त्यौहार, रीति-रिवाज, रहन-सहन जो हमारे पहाड़ी क्षेत्र का है एक अतीत काल की स्मृति का वर्णन है। प्रार्थी जी में एक तड़प बराबर झलकती रहती थी।

अपने पहाड़ी क्षेत्र के गौरवमयी इतिहास को प्रस्तुत करने की। उन्होंने भरसक प्रयास किया अपने उद्गारों को पुस्तक रूप में प्रस्तुत करने का। एक 'कुलूत देश की कहानी' तो पाठकों को मिल ही गई दूसरी पूरी हो रही थी कि उन्हें स्वयं छपाने से पहले यमराज़ उन्हें ले गए हैं। परन्तु उनकी कल्पना तो जीती है। उनके उत्तरदायी कभी तो प्रकट हो आएंगे। उनके-सत्य साहित्य की खोज करने वाले उनकी स्मृति में उनकी प्रतिमा को दर्शा पाएंगे।

मुझे श्री लाल चन्द प्रार्थी की जीवनी के बारे में कहने व लिखने को बहुत दिल कर आता है परन्तु अपनी कलम को लगाम देने का भी ध्यान रहता है। उसका कारण यह है कि कभी कभी हम बहुत निकट भाव रखते थे। आयु में तो मुझ से वह केवल सात आठ साल ही बड़ होंगे परन्तु विचारों का मेल समकालीन बना देता है। हमें इस 'कुलूत प्रदेश' का परिचय देने का भाव एक दूसरे के प्रति निकट लाता रहा है। हां शैली भिन्न भिन्न हो सकती है। परिस्थिति ने उन्हें अवसर दिया अपनी कहानी प्रस्तुत करने का। अपनी गौरवमयी तपोभूमि में ऋषियों के नाम देने का जैसे मृगु भारद्वाज, बामदेव, गौतम, कपिल, कण्व, कणाद, वशिष्ठ, शृंगी, प्राशर, व्यास, नारद, धौम्य, शांडिल्य, कात्यायन, कार्तिक आदि उन्हें भगवान परशुराम के पहले नरमेध यज्ञ का विचार उभार देता और मलाणा के पुराने जनपद का ध्यान आता तो कभी चन्द्रभागा, विपाशा और शतद्रु की कर्म भूमि याद आती। कई बार कोल जाति के कोलितर शम्बर के राज्य भाग की बात मुझ से परस्पर करते, सिद्ध करने का प्रयास था। एक बार मैंने उनसे भगवान बुद्ध के महा-परिनिब्बान के पश्चात जो उनके अस्थि विशेष के झगड़ों के निपटारे की कहानी सुनाई तो कहने लगे कि आप इन इतिहासिक पन्नों को कही से भी मुझे लाकर कृतार्थ करें। वर्णन चल रहा था जनरल कनिंघम का कुल्लू के बारे में अपनी पुस्तक (Coins of Ancient India) की एक तस्वीर कुल्लू के राज्य के एक सिक्के के बारे में।

जनरल कनिंघम ने राजा कुलूतस्य वीर्यासस्य को अंग्रेज़ी में Rajna Kulutasya Viryasasz लिखा था। अब कुलूत का बीर्यासस्य का पता न जनरल साहब कहीं प्रकट कर पाए न प्रार्थी जी। कनिंघम साहब ने कहा दासवंश का राज्य घनियारा (धर्मशाला-कांगड़ा) के निकट था वहां कृष्ण दास एक राजा राज्य करता था। सलोणो में उसका पता लगता है। परन्तु दासवंश को स्पष्ट करने में वे सभी स्पष्ट नहीं हो पा रहे हैं। मैंने प्रार्थी जी से एक बार यह अवश्य कहा था कि बौद्ध साहित्य में कोल वंश के राज्य का वर्णन मिल सकता है जो महावंश ग्रन्थ जो श्रीलंका से प्राप्य होगा हमें वास्तविक कहानी की सिद्धि के लिए उपयोगी होगा। मेरा तात्पर्य उनसे ऐसा निवेदन करने का यह था कि कुलूत देश की कहानी के लिए बौद्धकालीन साहित्य सामग्री अवश्यक है। प्रसिद्ध चीनी यात्री ह्वैनच्वांग यहां सातवीं शताब्दी में किसलिए आया यदि उसे यहां बीस संघ्राम (बौद्ध विहार) का पता न लगता। हमारे देवताओं के गूर कुल्लू राजा के मुहल्ले में जब "वधणिया" सम्बोधन करत हैं ता कइ बार संगत शब्द 'वर्धन' समझ में आता है अर्थात

हर्ष वर्धनकी याद बौद्धकाल के साथ-साथ हो आती है। इसीलिए तो कहते हैं कि :—

अगर शामिल न हो किस्सा तुम्हारा
हमारी दास्तां कुछ भी नहीं है।

प्रार्थी जी उन कड़ियों की तलाश में थे जो उन की कहानी को पूर्ण रूप दे सकती। परन्तु समय ऐसे ही चला गया। विधाता उनके मिशन को फिर भी आगे बढ़ाए ऐसी हमारी प्रार्थना है।

श्री लालचन्द प्रार्थी के व्यक्तित्व की थोड़ी सी चर्चा किया चाहता हूं। सम्भवत: विचारशील व्यक्ति इसे उपयोगी मानेंगे। प्रत्येक साहित्यकार की अपनी अपनी पृष्ठ भूमि होती है। ऐसा मोड़ जीवन में कभी कभी किसी किसी के हो जीवन में आता है। प्रार्थी जी भी उनमें से एक थे। उनके बाल्यकाल ग्राम 'नग्गर' और विद्यार्थी जीवन काल 'कुल्लू' में व्यतीत हुआ। मैट्रिक तक शिक्षा कुल्लू में ही पाई उनके सहपाठी जानते हैं कि विद्यार्थी जीवन में ही उन्होंने साहित्य और कला में कितनी रुचि रखी थी। उन्हीं दिनों कुल्लू के एक और होनहार प्रतिभाशाली विद्यार्थी इन से कई वर्ष आगे पढ़ने हेतु लाहौर निकल चुके थे और कंवर टेढ़ी सिह नाम से कुल्लू घर में विख्यात थे। वे हमारे पहले एम० ए०, एल० एल० बी० भी थे। प्रतिभाशाली भी थे। ग्राम सुधार में उनका झुकाव था। श्री बर्क आई० सी० एस० ने उन्हें ग्राम सुधार सभा का विशेष कार्य भी सौंपा था। उनके लिखित गाने, कविताएं श्री प्रार्थी पर अपने ढंग से छाप कर गई थी। उनके एक गाने पर उन्होंने थोड़े शब्दों में बदल भी किया।

देशा देशा न शोभला देश कुलू म्हारा।
आसे सी ए रेतितरु चाकरु, ए बगीचड़ू म्हारा॥

इस गीत में श्री प्रार्थी जी ने जमा जोड़ आंतरों से किया। उनका अपना कण्ठ भी मधुर स्वर रखता और लोगों को आकर्षित करता था। बोलने का ढंग भी प्यारा हो जाता। कई बार हमने उनको भाषण देते सुना है 'ए मेरे कुलू घौरे रे डफ भाईयों।' परन्तु लोग हंस कर अपनाते। क्योंकि उनका भाव प्रेम पूर्वक होता था। नाच-गाने में स्वयं निपुण थे। धुनें बनाने में शिष्यों को जोड़ देते। पद घूंघरू बांधे भी हमने उन्हें नाचते अपनी संस्था में देखा है। लाहौर में कविराज की शिक्षा पाने गए और हमें थोड़ी याद है कि कैरावान (Caravan) फिल्म कम्पनी में एक्टर भी कुछ समय काम किया। उनके एक सहपाठी डाक्टर देवी चन्द एम०डी० जो हिमाचल के डायरेक्टर हैल्थ सर्विस थे उनके घनिष्ठ सहायक थे। विद्यार्थी जीवन से ही परस्पर प्रेम था

उनका। लाहौर योगाश्रम ६ लोअरमाल पर था जहां विद्यार्थी सभा भी थी प्रार्थी जी भी कभी वहां के सदस्य रहे थे। डाक्टर देवी चन्द भी तब वहीं रहते थे। फिर उनकी अपनी अपनी लाईनें बन गई परन्तु प्रेम तो बना ही रहा।

प्रार्थी जी को जीवन में कई संघर्षों का सामना करना पड़ा। परन्तु जीवन में हर्ष के साथ निपटते रहे। कभी हतोत्साही नहीं देखे। सदैव आशावादी थे। देश भक्त भी थे भारत के स्वतन्त्रता संग्राम में सक्रिय भाग लेते रहे। कांग्रेस पार्टी से घनिष्ठता सारा जीवन भर रही। कई बार उन्हें पार्टी ने निष्कासित करने की बात भी उठी परन्तु उन्होंने अपनी आस्था कांग्रेस से नहीं हटाई। जीवन के अन्तिम दिनों में भी यही ठेस उन के मन में जमी थी इनके भाव से हमने अन्दाजा लगाया था। परन्तु भारत की स्वतन्त्रता के पश्चात वह लगातार पंजाब की विधान सभा के सदस्य रहे और अन्त में कुल्लू जिला जब हिमाचल प्रदेश में विलीन हुआ तो प्रार्थी जी हिमाचल की विधान सभा में भी निर्वाचित होकर मंत्री पद पर आसीन रहे।

उर्दू भाषा में उन्हें बड़ी महारत थी। उनका तखल्लस 'चाँद' रहा है। उर्दू की रवानगी भी उनकी स्तुत्य है। फार्सी के एक कवि की बात याद आई है मुझे इन के बारे लिखते हुए—"कसबे कमाल कुन के अज़ीज़े जहां शवी" अर्थात :—किसी भी विषय में इतना प्यार रखो कि संसार प्रशंसा करे। प्रार्थी जी भाषण में, गायन में, नृत्य कला में, साहित्य में लोक साहित्य में घानिष्ठ रूचि रखते थे। इसी कारण वे लोकप्रिय भी थे। सारांश प्रार्थी की जीवन फ़िलासफ़ी थी जिन्दगी ज़िन्दा दिली का नाम है, मुर्दा दिल क्या खाक़ जिया करते हैं।

यह हर्ष का विषय है कि प्रार्थी जी में वह सभी गुण थे जो एक आदर्श नागरिक में होने चाहिए। देश भक्ति की मात्रा प्रचुर होनी चाहिए। एक सार्वजनिक हितैषी को लोग सदैव याद करते हैं, सराहना करते हैं स्तुत्य होते हैं। यही लक्षण प्रार्थी जी के में झलकते रहे हैं। जन्मभूमि के प्रति प्रेम प्रचार एक पवित्र उद्देश्य है जो आगे आने वाली पीढ़ी को मार्ग दर्शन करता है।

इसी मार्ग दर्शन के उद्देश्य को पूर्ति श्री लालचन्द प्रार्थी ने की है। हम इनके बहुत धन्यवादी हैं और चाहते हैं कि उनके प्रति पूर्ण सम्मान प्रदर्शित करें। उनकी बरसी पर साहित्यिक गोष्ठी का सामूहिक आयोजन करें। जहां उन्होंने भाषा, कला, संस्कृति के प्रचार-प्रसार और विकास में विशेष योगदान किया है वहां हमारा कर्तव्य बनता है कि इन की रुहेखां को अपनाते हुए स्मृति को बढ़ाएं।

इन्हीं थोड़े से शब्दों को व्यक्त करके अपनी हार्दिक भावना प्रकट करते हुए श्रद्धांजली भेंट करता हूं।

अवलोकितश्वर विहार, कुल्लू

कितनी जल्दी मुलाकातें यादें बन गई

– काहन सिंह जमाल

सर बलंदी नहीं मेरा मकसूद ।
खाक हूँ खाकसार रहने दो ।।

स्वर्गीय लाल चन्द प्रार्थी से मेरी पहली मुलाकात १९५२ में शिमला के एक होटल में हुई थी उस समय वह पंजाब विधान सभा के सदस्य थे । गेंसुओं तथा लम्बी दाड़ी वाले नहीं अपितु लम्बे चुलबुले खूब सूरत नौजवान थे । इस छोटी सी मुलाकात में हमें एक दूसरे को ठीक से पहचानने का अवसर मिला । कई महफिलों में हमः शे'र तो सुनाते थे दूसरे मगर शायरों के लिखे हुए । उसके पश्चात हमारी मुलाकात १९६५ तक नहीं हुई। जब वह स्वर्गीय डॉ० परमार से पंजाब के पहाड़ी क्षेत्रों को हिमाचल प्रदेश में मिलाने की बातचीत के लिए आऐ थे । मैं ठा० राम लाल, भूतपूर्व मुख्यमन्त्री के साथ उनसे मिलने गया तो उनका रंगरूप देखकर दंग रह गया मगर प्रसन्नता से मन खिल उठा । जैसे कि मैंने किसी महान विभूति के दर्शन किए हों। मुझे यह लगा कि जैसे मैंने अपने स्वर्गीय दादा के दर्शन किए, जिनकी दाड़ी व जुल्फें ठीक वैसे ही थीं। जैसे कि प्रार्थी साहिब की । इस मुलाकात से भी हम दोनों को एक दूसरे के साहित्यकार होने का पता नहीं लगा । वैसे उन्हें कुछ शक था और मुझ से पूछा, 'आप शिमला के उस कवि को जानते है जिसने एक किताब "वक्त की आवाज" लिखी है और पंजाब सरकार ने उसे पंजाब की सभी लाईब्रेरीज़ के लिए स्वीकृत किया है। ठा० राम लाल जी कुछ मुस्कुराए और कहने लगे कि यह कमाल इन्ही जमाल साहिब का ही तो है। प्रार्थी साहिब जी हंसे और कहने लगे कि आप इन्हें छुपाना चाहते थे तथा मुझे इनका परिचय एक सरकारी कर्मचारी का ही कराया । उसके पश्चात उनकी बातचीत से आदर प्रेम और गर्व की की भावना टपकती थी। उन्होंने तब मुझे फ़रमाया —'मैं तो केवल पहाड़ी में कविता कहता हूं। वे भी ज्यादा गीत ही हैं जो लोक गीतों में बदल गए हैं।'

नवम्बर १९६६ को विशाल हिमाचल बना और पंजाब के पहाड़ी क्षेत्र पुराने

हिमाचल में मिल गऐ जैसे दो बिछड़े भाई पुनः इकट्ठे मिलते हैं।

मुख्यमन्त्री डॉ० परमार ने श्री लाल चन्द प्रार्थी को हिमाचल कैबनिट स्तर का मन्त्री बनाया। मेरा आना जाना प्रार्थी साहिब के पास खुला हो गया और हिमाचल की कला, संस्कृति व भाषा और साहित्यिक गतिविधियों पर विचार विमर्श होता रहा।

प्रार्थी साहिब ने हिमाचल के कवियों, लेखकों व कलाकारों की भावनाओं व विचारों को मुख्य मन्त्री तथा दूसरे मन्त्रियों तक पहुंचाया और फलस्वरूप वह हिमाचल में कला, संस्कृति एवं भाषा विभाग/अकादमी स्थापित करने में सफल हुए।

हिमाचल प्रदेश विधान सभा ने पहाड़ी भाषा को देवनागरी लिपि में लिखने और इसकी उन्नति करने का प्रस्ताव पास किया जिसका श्रेय स्वर्गीय डॉ० परमार और प्रार्थी जी को जाता है। हिमाचल ने जो उन्नति और प्रगति प्रार्थी साहिब के शासन काल में की है उसे हिमाचल का इतिहास कभी नहीं भूलेगा। जिस पहाड़ी भाषा के अस्तित्व को कोई मानने को तैयार ना था उसी पहाड़ी भाषाओं को हिमाचली साहित्यकारों ने थोड़े ही समय में सैकड़ों पुस्तकों में प्रकाशित कर दिया। प्रदेश में हर स्थान पर पहाड़ी, हिन्दी, संस्कृत और उर्दू के कवि सम्मेलनों की गूंज, गूंज उठी। हर प्रकार की साहित्यिक गतिविधियों ने थोड़े हो समय में एक लम्बी छलांग लगाई। जब पंजाब विश्वविद्यालय चण्डीगढ़ में 1976 को एक विशाल सप्त सिंधु कल्चर कॉन्फ्रेंस हुई जिस में पंजाब, हरियाणा, जम्मू काश्मीर, राजस्थान और हिमाचल के प्रसिद्ध विद्वानों ने भाग लिया दुर्भाग्य से माननीय प्रार्थी जी सोलन में अचानक बीमार हो गए तथा सम्मेलन में भाग नहीं ले सकें।

उन्होंने फिर मुझे उस सम्मेलन में हिमाचल प्रदेश की ओर से प्रतिनिधि भेजा। उस सम्मेलन में मैंने सिद्ध किया कि हिमाचली, पहाड़ी भाषा सप्त सिंधू कलचर की भाषाओं की बड़ी बहन है और सभी भाषाओं जैसे पंजाबी हरयाणवी, हिन्दी डोगरी राजस्थानी का हिमाचली पहाड़ी भाषाओं से सम्बन्ध ही नहीं अपितु इस भाषा का और भी निखरा हुआ स्वरूप है। यह विचार मैंने प्रार्थी जी से ही सुने थे और वहां पर आए सभी विद्वानों ने इन्हें स्वीकार किया। और उस सम्मेलन में परम आदरणीय राष्ट्रपति ज्ञानी जैल सिंह जी, जो उस समय मुख्य मन्त्री पंजाब थे वहां पर उपस्थित थे। जिन्होंने मुझे व्यक्तिगत भी एक अच्छा पेपर पढ़ने की बधाई दी मेरे कहने का तात्पर्य यह है कि ये प्रार्थी साहिब की प्रेरणा और कार्य था जिसने पहाड़ी भाषा के अस्तित्व को मान्यता दिलाई। इसी संदर्भ में प्रार्थी साहिब का यह 'शे'र' कितना ऐतिहासिक, कितना स्पष्ट और वास्तविकता का प्रतीक है :—

वक्त की गर्द ने दीवार पर जो लिखा है,
आओ, आओ ज़रा इसको भी तो पढ़कर देखे।

प्रार्थी जी पहले शायार थे उसके पश्चात मन्त्री या कुछ और

शिमला में हिमाचल के कवियों और लेखकों की संस्था बजमे अदब हिमाचल १९५२ से साहित्य के क्षेत्र में काम कर रही है। प्रार्थी साहिब का शौक व जौक था कि मन्त्री होने के नाते अति व्यस्थ हो कर भी हर मास एक महफले मुशायरा उनकी कोठी पर होता था और सभी शायरों और लेखकों की खातिर करने को खान पान का प्रबन्ध करते थे।

प्रार्थी साहिब के शे'रों में सरकार की कुछ नीतियों पर चोटें मिलती है जिसका अर्थ यह हुआ कि वह अपनी ही आलोचना करते। जबकि वह स्वयं मन्त्री थे। हर अच्छा शायर, लेखक सच्चाई को नहीं छुपाता कवि व लेखक जनता का प्रतिनिधित्व करता है सरकार का नहीं।

इस परीक्षा में प्रार्थी जी सफल निकले तथा हिमाचल के लेखकों व कवियों ने उन्हें इस संस्था का सुरक्षक मनाया। इस प्रकार के उनके ये तीन शे'र मुझे याद हैं :—

आएंगी अब बहारें ये तुवक्को[1] नहीं रही।
नूरे सेहर[2] को शाम का साया निगल गया।

खुशी की बात मुकद्दर[3] से दूर है बाबा
कही निजाम[4] में कोई फतूर[5] है बाबा

जो लगाते हैं आग गुलशन[6] में
वह कभी बागंवां[7] नहीं होते।

मैं पहले उर्दू का शायर नहीं था

शिमला की फिजाओं में महफिलों व मुशायरों ने प्रार्थी साहिब पर एक गहरा असर डाला। उन्हें उर्दू शायरी का शौक जनून की हद तक सवार हो गया और थोड़े ही समय में उर्दू की दुनिया पर छा गया। समस्त देश के बड़े-२ लेखक चकित रह गये कि यह चांद कुलवी कौन है जो आज तक नहीं सुना और अब उर्दू गजलों में कमाल कर रहा है। यही बात बेगम आबिदा अहमद धर्म पत्नी स्वर्गीय राष्ट्रपति फखरूद्दीन अली अहमद ने

(1) आशा (2) सुबह का उजाला (3) भाग्य (4) शासन (5) खराबी
(6) फुलबाड़ी (7) माली

मुझ से भी शिमला में एक अखिल भारतीय मुशायरे में पूछी थी। प्रार्थी जी उसमें भी बीमारी के कारण भाग नहीं ले सके थे तथा मैंने उन्हें प्रार्थी जी का एक शेर सुनाया :—

खटका लगा हुआ था अजल हयात में ।
जब मर गए तो दिल से यह कांटा निकल गया ।

बेगम साहिबा ने फरमाया कि मैं उनकी गजलों को बड़े शौक से पढ़ती हूं वह भारत के उर्दू के उच्च स्तरीय रसालों में छप रही हैं सच्च वह बहुत ही कमाल करते हैं ।

मैं क्योंकि बजमे अदब हिमाचल का १५ वर्ष तक महासचिव रहा इसलिए मुझसे अधिक प्रार्थी साहब के इस क्षेत्र में सराहनोय कार्य को कोई नहीं जानता । इस क्षेत्र में जो कुछ हुआ है उसका वर्णन करना कुजे में दरिया समाने की बात है इतना कहना ही काफी होगा कि हिमाचल में गतिविधियों का एक सुनहरी अवसर था। देश भर में हिमाचल का नाम ऊंचा हुआ। यहां पर बड़े बड़े अखिल भारतीय मुशायरे हुऐ। जिनके सम्बन्ध में बाहर से आऐ बड़े बड़े शायरों का यह कहना था कि इतने बड़े मुशायरे भारत में अब भविष्य में होने की आशा नहीं है । और यहां इतने शायर हैं कि हमें लोग एहसासे कमतरी ले कर जा रहे हैं । इस बात को सिद्ध करने हेतू एक और मुशायरे की वारदात का वर्णन करता हूं ! होशियारपुर पंजाब में एक अखिल भारतीय मुशायरा हुआ। शिमला से हम पांच शायर जो प्रार्थी जी सहित थे बुलाऐ गए वहां पर बहुत ही विद्वान शायर पहुंचे हुए थे। कोई आठ हजार उसताद श्रोता होंगे। मुशायरा शाम ६ बजे से सुबह ४ बजे तक चला शिमला से गऐ सभी शायरों को खूब दाद मिली। प्रार्थी साहिब को इतना पसन्द किया गया कि उन्हें कई गज़ले बार बार गानी पड़ी। श्रोता लोग खुले आम कहने लगे की शिमला वाले बाजी मार गए सबके दिलों को लूट लिया। कहने लगे प्रार्थी जी अपने पांच प्यारों सहित आऐ है। मुशायरे के संयोजक प्रोफैसर "नजर" साहिब ने भी बड़े गर्व से फरमाया कि मैंने इन लोगों को आप लोगों का गर्व तोड़ने के लिए बुलाया है। जो कभी मांग नहीं करते कि अदब की सेवा के लिए पैसे दो। ये लोग कोई नाज़ नखरा नहीं जानते । प्रार्थी साहिब का प्रमुख कार्य साहित्य की सेवा करना है और मन्त्री पद का कार्य पीछे से।

प्रार्थी जी सच्चे, स्पष्ट और साफ दिल इतने थे कि उसी जन समूह में उन्होंने मेरी ओर इशारा करते हुऐ कहा कि मैं कोई शायर नहीं था। लेकिन इन लोगों ने मुझ पर कोई जादू सा कर दिया और मुझे शायरी का इतना शौक है कि इस के लिए कुरबान करने को सब कुछ तैयार हूं और मैं ये भी जानता हूं कि मन्त्रीपद से हट जाने के बाद लोग मुझे भूल जाऐंगे परन्तु एक कवि के नाते मैं अमर रहूंगा यह स्वर्गीय प्रार्थी साहिब दूर अंदेशी थे। आज वो सचमुच अमर हैं। हिमाचल के लेखक व कवि तथा आने वाली

पीढ़ीयां उन्हें नहीं भूलेंगी।

अन्त में उस योगी मनुष्य के चरित्र के बारे में भी लिखना अपना कर्तव्य समझता हूं। वह हिमाचल की संस्कृति को एक जिदां मिसाल थे। वे किसी से कुछ लेना या कोई एहसास उठाना एक पाप समझते थे। मैं विश्वास के साथ कहता हूं कि उन्होंने कभी भी अपने मन्त्रीपद का दुरूपयोग नहीं किया। यहां तक कि उन्होंने मेरी किताब (शहीद प्रकाश) पर दो शब्द लिखने को अपनी असमंथता बताई। उन्होंने कहा, "कि लोग समझेगें कि...... जमाल प्रार्थी के बहुत नजदीक है और उन से अपने रसूख में अपनी तारीफ लिखवा ली। मैंने कहा "कि आप सराहना नहीं तो आलोचना ही करें। परन्तु मैं गैर शायर से इस पर दो शब्द नहीं लिखवाऊंगा। उन्होंने यह बात मान ली परन्तु किताब के मसौदे को पढ़ने में पूरे दो मास लगाऐ। परन्तु मेरी पुस्तक "शहीद प्रकाश" पर जो प्राक्कथनलिखा तो उनकी सूझ बूझ और बलंद खिपाली का पता लगता है वह कितने दूरदर्शी थे। "यह पुस्तक भारत को आने वाली पीढ़ी के युवकों को राह दिखाने में मशाल का काम देगी यह बात इस तथ्य से सिद्ध हो रही है कि इसी पुस्तक पर १२ साल के पश्चात् १९८३ इसी वर्ष मुझे प्रथम पुरस्कार प्राप्त हुआ। इसी प्रकाशन में उन्होंने कहा है कि "मुझ प्रसन्नता है और गर्व भी कि हिमाचल आज हर पहलू में तरक्की करता आगे बढ़ता जा रहा हैं और हम दौड़ में हिमाचल के साहित्कार भी पीछे नहीं हैं।"

आज हिमाचल प्रदेश के कलाकारों व साहित्यकारों का कर्तव्य है कि वे प्रार्थी साहिब के दिखाऐ हुऐ मार्ग पर आगे बढ़ते हुऐउनकी पवित्र आत्मा को सुख और शांती दें।

गांव शाहडी, डा० धार
तै० जुब्बल, जिला शिमला

एक संक्षिप्त परिचय

चांद कुल्लूबी और उनकी शायरी

– धर्म पाल आकिल

चांद अगर हम हैं तो खुरशीद-ए-दरख्शां तू है।
रोशनी पाने को हम तेरे नगर तक पहुँचे ॥

यह शेर लाल चन्द प्रार्थी चांद कुल्लूबीमरहूम का है जोकि हिमाचल प्रदेश के सुलझे हुए सियासतदान, मशहूर अदीब और शायर थे। उनका जन्म सन् 1916 ईसवी में ज़िला कुल्लू के नगर नामक स्थान पर हुआ। उन्होंने कुल्लू से दसवीं की परिक्षा पास की और फिर वैदक की तालीम हासिल की। विभिन्न क्षेत्रों में कार्य करने के पश्चात उन्होंने कांग्रेस पार्टी में शामिल हो कर काफ़ी अर्से तक काम किया। उसके बाद वह एम. एल. ए और प्रदेश के मन्त्री भी रहे। इस प्रकार के अनुभव प्राप्त किये।

कई और गुण रखने के साथ साथ प्रार्थी जी एक बहुत अच्छे शायर भी थे। उनके कलाम में बहुत सी खूबियां पाई जाती हैं जिनका ब्यान इस छोटे से लेख में सम्भव नहीं, ताहम उनके कुछ शेरों को सामने रखकर खयाल के इज़हार की कोशिश की गई है।

आजकल के दोस्त सच्ची हमदर्दी से वंचित हैं; इस विचार को यूं ब्यान करते हैं :—

यह कैसा वक्त भला हम पे आने वाला है।
हमारे दोस्त ही हम से नज़र बचा के चले ॥

उनके कलाम में कई जगह खूबसूरत तस्वीरें भी नज़र आ जाती हैं। यह शेर देखिये :—

चमन से दूर, उफ़ुक़ के क़रीब सहरा में।
खज़ां का फूल भी खिलता दिखाई देता है ॥

प्रार्थी जी की मुशाहिदे की ताकत कितनी तेज़ थी, इसका पता उनके इस शेर

से लगता है :—

नये शूअर के तपते हुए अलाव में साफ़।
हर एक जिस्म पिघलता दिखाई देता है ।।

आज का युग किस तेज़ी से बदल रहा है, यह बात इस शेर में इस तरह अदा की गई है :—

इक लम्हा भर को चांद यह आंखें हुई थी बन्द।
देखा ये जागने पे कि इन्सां बदल गया ।।

इश्क-ओ-मुहब्बत का मज़मून, उर्दू शायरी ही क्या, हर ज़बान की शायरी में बहुत अज़ीज़ रहा है। चांद कुल्लूवी साहिब के इस रंग के कुछ शेर मुलाहज़ा फरमायें :

आप के वास्ते लाने को नहीं था कुछ और,
मेरी आंखों में है कुछ प्यार के गौहर देखो ।।

न जाने कब से बैठे हैं गमे-हिज्रां लिये दिल पर।
न तुम आये, न ख़त आया, न नींद आई, न खबाब आये।।

टांग देता है जान सूली पर प्यार कितना अजीब होता है।
याद करता है जब भी कोई चांद दर्द दिल के करीब होता है।।

हर तरफ़ चेहरों की कसरत में कहीं जो ऐ चांद।
उस का चेहरा भी उभर आये तो कुछ बात बने ।।

अश्क बरसाते रहे अहले फ़लक छुप छुप कर।
माह-ो-अन्जुम ने किसे ख़ाक ब सर देख लिया ।।

इश्को-मुहब्बत के अलावा कहीं कहीं फल्सफियाना रंग भी उनके शेरों में झलकता है। यह शेर ज़िन्दगी के विभिन्न पहलूओं को दर्शाते हैं :

ख़ाक की निस्बत ने पाबन्दे-सिलासल कर दिया।
वरना मेरी वुसअते-परवाज़ लामहद्दूद है ।।

ज़िन्दगी दूर से थी कितनी सुहानी लेकिन।
पास आई है तो लगती है वबालों की तरह ॥

ऐ चांद इस जहान में रहना तो है ज़रूर।
अच्छी हमें लगे न लगे इस जहां की बात ॥

मुहाफिज़ है अगर तू हर कसो-नाकस का दुनया में
बता फिर क्यों तिरे मासूम बन्दों पर अज़ाब आये।

इश्क की आग में परवाने के हैं पर, देखो
दर्द के हद से गुज़रने का यह मंज़र देखो

प्रार्थी जी से जब भी मुलाकात होती थी वो निहायत खंदा-पेशानी से मिलते थे और उनकी बातों से हमेशा खुशी हासिल होती थी। यूँ तो वो हर किसी से मुहब्बत और शफ्कत से मिलते थे परन्तु शायरों और अदीबों व कलाकारों के बहुत क़दरदान थे। यही वजह है कि इस फ़ानी दुनिया को खैरबाद कह चुकने के बावजूद भी उनकी मख्सूस आवाज़ कभी-२ कानों में गूंजती हुई मालूम पड़ती है और गाहे गाहे यह महसूस होने लगता है कि वह अपने इस शेर के मिस्दाक़ :—

जीस्त इक ऐसा सफ़र है जो कभी खत्म न हो
मौत आगाज़ का अंजाम कहां होती है।

अब भी हमारे दरमियान मौजूद हैं।

भाषा एवम् संस्कृति विभाग
(हि.प्र., शिमला-१)

श्रद्धांजली

-- रमाचरण पराशर

श्री लाल चन्द प्रार्थी जी के निधन को करीब एक वर्ष होने जा रहा है, परन्तु दिल अभी भी विश्वास नहीं कर पा रहा है कि सचमुच प्रार्थी जी अब हमारे बीच नहीं हैं। हिमाचल कला-संस्कृति और भाषा अकादमी शिमला द्वारा उनके सम्मान में अपनी पत्रिका 'सोमसी' का एक विशेषांक निकाला जा रहा है जो कि सचमुच ऐसे प्रबुद्ध राजनीतिज्ञ, उत्कृष्ट साहित्यकार और उच्च कलाकार के लिऐ एक सच्ची श्रंद्धाजली होगी।

मैं तो इस योग्य नहीं कि ऐसे उच्च व्यक्तित्व के बारे में कुछ लिख संकू, और न ही मेरे पास ऐसे उपयुक्त शब्द हैं जिनसे उनकी जीवनी पर प्रकाश डाल संकू। मेरे कई विद्वान साथियों ने उनके जीवन के बारे में अपने अपने विचार लिखे हैं। मेरी तो उनके आगे सूर्य को दीपक दिखाने वाली बात होगी, फिर भी दिल के उद्गारों का तो कोई ठिकाना नहीं, एक आध संस्मरण लिखना चाहूंगा।

स्व० श्री लाल चन्द प्रार्थी जी जहां एक प्रबुद्ध राजनीतिज्ञ थे वहां एक सुलझे हुऐ भारत प्रसिद्ध कवि भी थे। वह उपनाम "चांद कुलवी" से कविता लिखा और पढ़ा करते थे। वह चांद के अनुरूप ही जीवन प्रयंत चमकते रहे। मेरा उनके साथ लगभग 40-45 साल का परिचय रहा। मैंने उन्हें एक संतरूप में ही देखा। जीवन के सब कार्यों में व्यस्त रहते हुऐ भी वह जनक वैदेह के रूप में ही जिये। एक बार कुल्लू दशहरा के अवसर पर तत्कालीन मुख्यमन्त्री स्व० डॉ० परमार जी के आगमन पर कुल्लू कालेज के कुछ विद्यार्थियों ने शरारती तत्वों के उकसाने पर जलती लकड़ियां तथा पत्थर आदि फेंक कर बहुत अपमान किया। मैंने कुछ लोगों को प्रार्थी जी से कहते सुना कि कालेज बन्द करवा दो, मुख्यमन्त्री का अपमान आपका अपमान है। प्रार्थी जी ने सब कुछ सुनते हुऐ बड़ी गंभीरता से कहा कि यह कोई गैर बच्चे नहीं हैं। कुछ भूल गए हैं। समझ जायेगें, हम तो आयु में उनसे बढ़े हैं। बच्चों की धृणता का उत्तर बच्चों जैसा नहीं दिया जाता। और परमार जी को रात नगर ले गऐ और सुबह सीधे शिमला वापिस भेज दिया और बच्चों की ओर से स्वयं क्षमा मांगी। बाद में मैंने स्वयं उनमें से कुछ छात्रों को प्रार्थी जी से सारी

घटना का कारण बतलाते हुऐ क्षमा माँगते हुऐ देखा। मेरा संपर्क प्रार्थी जी से कुछ घरेलू सा रहा क्योंकि मेरे बड़े भाई स्व० भवानी चरण पराशर व डा० देवी चन्द जी भी उनके सहपाठी रहे। यह तीनों ही कई बार घर में इकट्ठे हुआ करते थे और मुझे इनकी सेवा करने का मौका मिलता रहा। यह सब कुल्लू के इतिहास में सितारों की तरह चमके और अल्प आयु में ही भगवान को प्यारे हो गऐ, जिससे यह लोकोक्ति कि "जिन लोगों की इस संसार में आवश्यकता है उनकी भगवान के दरबार में भी जरूरत है।" पूर्णतया चरितार्थ होती है। प्रार्थी जी कुल्लू के इतिहास में तब तक अमर रहेंगे जब तक कुल्लू का कला केन्द्र, हस्पताल, महाविद्यालय व और छोटे मोटे अंनगिनत संस्मरण रहेंगे। फिर भी इन चदं शब्दों द्वारा मेरी प्राँतीय सरकार से भी निवेदन है कि उन्होने सारे हिमाचल प्रदेश की समृद्धि के लिऐ भी बहुत सहयोग दिया है इसीलिऐ प्रांतीय स्तर पर प्रार्थी जी की स्मृति में कोई स्मृति चिन्ह बना कर वास्तविक रूप में श्रद्धांजली अर्पित करें।

मेरी भगवान से यही प्रार्थना है कि जिस प्रकार प्रार्थी जी आयुप्रयंत दीन दुखियों की आवश्यक मांगे मानते तथा मनवाते हुऐ उन्हें शान्ति प्रदान करते रहे, वैसे ही उन्हें भी स्वर्ग में फलस्वरूप शान्ति मिले।

सुलतानपुर
कुल्लू

पीले पत्ते और पतझड़

-- सुदर्शन वशिष्ठ

प्रार्थी जी के मैं उस समय करीब हुआ, जब वे सत्ता से दूर हो चुके थे। जब उन्हें सदा घेरे रहने वाले दूर जा चुके थे। जब उनका संघर्ष का समय था। संघर्ष अपने-आप से, असाध्य रोग से राजनीति से संघर्ष, साहित्य से संघर्ष और जीवन से संघर्ष।

कुल्लू प्रवास के दिनों वादी के गुरुत्वाकर्षण से परिपूर्ण अज्ञात तन्तुओं के अतिरिक्त मुझ पर वहां दो विराट व्यक्ति छाये रहते थे——एक प्रार्थी जी और दूसरे स्वामी श्याम। कुल्लू की पुरानी राजधानी नगर में "चांद कुल्लूवो" और नई राजधानी कुल्लू में स्वामी श्याम। दोनों की प्रभावशाली आवाज़, लम्बी कच्ची-पक्की दाढ़ी, तेजस्वी आँखे, दोनों ही अपने-अपने क्षेत्र में पटुवक्ता। दोनों का विगत जीवन चर्चाओं से भरा, किन्तु वर्तमान गरिमामय व गाम्भीर्यपूर्ण। दोनों ही अन्तर्राष्ट्रीयता से जुड़े हुये प्रार्थी जी का नाम "अन्तर्राष्ट्रीय कुल्लू दशहरा" से जुड़ा हुआ तो स्वामी जी का "अन्तर्राष्ट्रीय ध्यान केन्द्र" से। "अन्तर्राष्ट्रीय ध्यान केन्द्र" में अनेक देशों से अनुयायी आते थे तो प्रार्थी जी के पास आसपास बसे हिप्पियों में ज्ञानपिपासु विदेशी। एक विदेशी महिला का, जिसे वे "घूघती" कह कर पुकारते थे, प्रायः चर्चा करते। दोनों ही व्यक्तियों के जितना करीब मैं जाना चाहता था, जा नहीं सका। फिर भी जितने क्षण साथ गुजरे, वे अविस्मरणीय हैं। स्वामी जी की ध्यान स्थली में और प्रार्थी जी की ऊपरी मंजिल की बैठक में जो शान्ति मन को मिलती, वह बखानी नहीं जा सकती।

कुल्लू उनकी अपनी भूमि थी। उसी भूमि से वे अनेक तन्तुओं द्वारा जुड़े हुये थे। अपने पतझड़ के दिनों में कुल्लू वादी ने ही उन्हें अपने आगोश में लिया। अपने सत्ता के दिनों में जो कार्य उन्होंने कुल्लू के किये, वे भी चिरस्मरणीय हैं। अनेकों अन्य कार्यों के अलावा कुल्लू का जिला अस्पताल व कला केन्द्र उनकी प्रमुख देन हैं। कुल्लू दशहरा—जो आज "अन्तर्राष्ट्रीय लोक नृत्य उत्सव" के रूप में प्रसिद्ध है, उन्हीं की देन है, एक तो इस साधारण और डूबते हुये मेले को अन्तर्राष्ट्रीययता का दर्जा मिला, दूसरे यह उत्सव "लोक नृत्य उत्सव" बना रहा, यह भी सराहनीय हैं। कुल्लूई लोक नृत्य को एक नई दिशा दे कर जन-जन के सामने प्रस्तुत करने का एक अन्य साहसिक व प्रशंसनीय कार्य इनकी प्रेरणा से हुआ। "इसके लिये हमने अपनी बहु-बेटियों को स्टेज पर नचाया है"। वे कहा

करते थे। इसी कारण हिमाचल में जितना मुखर व लोकप्रिय कुल्लूई नृत्य हुआ, उतना अन्य कोई नहीं। कुल्लू दशहरा, कुल्लू नाटी, कुल्लूई संस्कृति प्रार्थी जी के पर्याय हो गये थे जैसे।

पहली बार मैं नगर स्व० पाराशर जी के साथ गया।

"जब व्यक्ति सत्ता से हट जाये, तब उससे अवश्य मिलना चाहिये। इससे उसे बड़ा सकून मिलता है" पराशर जी ने कहा था। प्रार्थी जी ने उस "जनता हवा" के दौरान चुनाव नहीं लड़ा था। पाराशर जी उन दिनों "पीपल जातर" के कार्यक्रम के लिये कुल्लू आये हुये थे। ढालपुर में लगभग एक घण्टा बस की प्रतीक्षा के बाद हमें बस मिल पाई थी। पतली कुल्ह से हम पैदल चढ़ कर नगर पहुंचे।

प्रार्थी जी का पुराना सा घर;, जिसमें प्रवेश द्वार की ओर मुरम्मत कार्य लगा हुआ था। वे अस्वस्था के कारण बिस्तर पर ही थे। पाराशर जी को देख उनकी आँखों में चमक आ गई। अपने मन्त्रीत्व के दौरान प्रार्थी जी अकादमी के अध्यक्ष थे, तो पराशर जी प्रथम सचिव। इन दोनों व्यक्तियों ने वर्तमान भाषा-संस्कृति विभाग व अकादमी के फलने-फलने के सपने देखे थे।

"अपने राजनैतिक जीवन के दौरान मैं अपने घर की ओर बिलकुल ध्यान नहीं दे पाया। अब वर्षों बाद यहां लौटा हूं तो मुरम्मत शुरू की हैं।" दवाईयों की शीशियों से घिरे वे बिस्तर पर बैठ गये। विभाग व अकादमी का हाल उन्होंने उत्सुकता से पूछा। जब पराशर जी ने उन्हें बताया कि कुल्लू में भी विभाग की शाखा खुल गई है और मैं यहां कार्यरत हूं तो वे बहुत प्रसन्न हुये।

"कभी-कभी यहां आया करो नौजवान!" प्रार्थी जी ने जिस अपनत्व के लहजे में ये शब्द कहे थे, वे आज भी मेरे कानों में गूंजते हैं। उनके इस आमन्त्रण पर ही, उसके बाद जब भी मैं नगर गया, उनसे मिले बिना नहीं रहा। यद्यपि उन दिनों प्रार्थी जी से मिलना ठीक नहीं समझा जाता था। पाराशर जी ने भी अपनी प्रार्थी जी से मुलाकात का कहीं भी जिक्र न करने का मझ से वादा किया था। देश में पहली बार राजनैतिक परिवर्तन को कुछ और ढंग से लिया था।

अस्वस्थता के कारण प्रार्थी जी का पतझड़ का समय कुल्लू में बीतना था। कभी अपस्ताल में, कभी किराये के मकान में। अधिक ऊंचाई पर सर्दियों में उन्हें तकलीफ बढ़ जाती थी, अतः कुल्लू आना पड़ता।

दूसरी बार मैं उन से कुल्लू के अपस्ताल में मिला। वे एक मास से अस्पताल में

दाखिल थे, बार्थ-रूम तक चलना कठिन था। डाक्टरों ने अधिक बोलने को मना कर रखा था। जब कोई मिलने आता, बोले बिना वे रह नहीं सकते थे। शारीरिक कमजोरी में भी वे मानसिक रूप से पूरी तरह चैतन्य थे।

"अब मैं अपना सारा समय लेखन में लगाऊंगा। इस राजनैतिक जीवन में मेरा सारा लेखन पिछड़ गया है। बहुत सारा जो मेरे जेहन में है, अब मैं सारा सामने लाना चहाता हूं", बातचीत के दौरान उन्होंने कहा था।

"कुलूत देश की कहानी का दूसरा भाग तकरीबन तैयार है। शब्दकोष तैयार है ..राजनैतिक जीवन को मैं छोड़ने की सोच रहा हूं। वैसे भी साहित्यकार के तौर पर आदमी का स्थायी महत्व रहता है जब कि राजनैतिक जीवन तो रंग बदलता रहता है।"

उस बिमारी की हालत में भी वे बातों-बातों में मजाक करते रहते। बातों से उनके खुशमिजाज लहजे व जिन्दादिल की झलक मिलती थी।

झरे हुये पत्तों के पुनः रसमय होने पर उनके स्वास्थ्य में सुधार हो गया और वे पुनः नगर चले गये।

नगर में प्रायः वे अकेले होते थे। जब वे सत्ता छोड़ नगर आये ही थे, लोगों का तांता लगा रहता था। प्रदेश में राजनैतिक परिवर्तन के बाद, जनता शासन में लोग धीरे-धीरे पीछे हटने लगे। जब भी मैं उस दौरान नगर गया, उन्हें अकेला पाया। एक बार मैंने पूछा :" आप तो हमेशा आदमियों से घिरे रहे हैं। इस अकेलेपन में आपको कैसा लगता है।"

"मैं अब एकान्त चाहता हूं......इसीलिए यहां रहता हूं। थोड़ी सेहत ठीक हो जाये तो मुझे लेखन में जुटना है। बहुत काम करने को पड़ा है अभी।"

फिर काफी देर वे खामोश रहे थे मुझे लग रहा था। असल बात उन्होंने टाल दी है। वास्तव में सत्ता के दिनों में वे जिन चाटूकारों से घिरे रहते थे, उनके यहां दर्शन दुर्लभ थे। इन चाटकारों में राजनयिक, सरकारी लोग, साहित्यकार शामिल थे। यह निश्चित है कि उन्होंने अपने राजनैतिक जीवन में कईयों को लाभ पहुंचाया होगा। उन की वजह से कई आज अच्छी जगह सैटल होंगे। किन्तु इस समय उनके पास, दूर के तो दूर रहे, नजदीकी भी पास न फटकते थे। बहुतेरे ऐसे भी थे जो सरकारी दौरे पर घूमने के मूड़ में नगर आते। नगर में रोरिक गैलरी जाते। नगर किले में चाये पोते हुए प्रार्थी जी का चर्चा करते किन्तु उनके नजदीक न जाते। उस समय उनसे मिलने

मिलने में एक राजनैतिक भय भी था। ऐसे लोगों में बाहर के ही नहीं, कुल्लू के लोग भी शामिल थे।

कुल्लू में हमने एक संस्था बनाई थी:, "साहित्य-कला परिषद्"। इसके वार्षिक समारोह में एक पुरस्कार योजना रखी था जिसमें किसो साहित्यकार या कलाकार को पुरस्कृत किया जाता था। संस्था के प्रथम वार्षिक समारोह में ही हमने प्रार्थी जो को सम्मानित करने की सोची। यह स्पष्ट है कि उस समय इन्हें सम्मानित करने का विचार इसलिए भी आ गया कि अब पुनः प्रदेश में कांग्रेस सरकार आ गई थी। इस सिलसिले में मैं और पुरोहित चन्द्रशेखर जी उनसे मिलने नगर गये। यद्यपि इस छोटी-सी संस्था द्वारा सम्मानित होना उनके लिए कोई बड़ो बात न थी, तथापि ऐसे समय में यह महत्वपूर्ण था। वे इस से बहुत प्रसन्न हुए और अस्वस्थ होने के बावजूद भी समारोह में आने का वादा किया।

मन्त्री पद छोड़ने के बाद इस समय समारोह के अवसर पर उनका कला केन्द्र मंच पर आने का यह पहला मौका था, जो बाद में आखिरी भी साबित हुआ। उसो सायं उन्होंने इस मंच से जनता को सम्बोधित किया, मन्त्री पद से हटने के पहलो और आखिरो बार। यह मच, जो उन्हों द्वारा बनवाया हुआ था, पराया हो गया।

अब कुछ ऐसा समय आया कि उनकी महत्ता तो बढ़ी लेकिन भीतर ही भीतर उपेक्षा के अंकुर भी पड़ते गये जो बाद में विशाल वृक्ष बन उनके समूचे व्यक्तित्व और धारा पर छाया डाल गये।

इसी दौरान उनके "अकादमी अध्यक्ष" मनोनीत होने की बात फैली। अखबारों में भी आई। इसी बीच वे कुछ दिन शिमला में भी रहे। एक बार पुनः साहित्य के क्षेत्र से जुड़े लोग उनके आसपास मडराने लगे। उनकी वापसी पर एक बार मैं उनसे नगर में मिला। अध्यक्ष बनने की बधाई पर वे गर्वित हो बोले : "हां, ऐसी कुछ बात है। सुनने को आया है कि ऐसी कोई फ़ायल सरकार के पास चलो हुई है। मैं तो इस कार्य को अवैतनिक भी करना चाहूंगा......"

अध्यक्ष की यह बात, बात ही रह गई। कुछ बना नहीं। वह फायल, पता नहीं चली भी थी या नहीं किन्तु इसके बाद आया उनका राजनैतिक और मानसिक उथल-पुथल का समय जिसने उन्हें उपेक्षा ही उपेक्षा दी।

उनका "साहित्य-कला संगम" का वृक्ष, जो उनके सत्ता काल में फला-फुला था, अब एकदम ठूंठ हो गया था। चाह कर भी उसे वे पुनः हरा न कर पाये। उससे जुड़े लोग अब उनकी पहुंच से दूर जा चुके थे। जिस किराये के मकान में "साहित्य-कला

संगम" का बोर्ड लगा था, उसे छोड़ वे अपने निजो मकान में आ गये । उसका बकायदा विमोचन भी हुआ । कुलूत देश की कहानी" की प्रतियां व अपनी अन्य चहेती पुस्तकें उन्होंने वहां रखीं । यह कमरा उस रिक्तता को नहीं भर सका, जो संगम के कार्यक्रमों व बैठकों में पहले शोरशराबे के कारण कभी महसूस न होती थी ।

अपने जीवन के अंतिम चुनाव दंगल में हुई हार के बाद वे भीतर ही भीतर टूट गये । साहित्य के प्रति अभी भी वे मानसिक रूप से तैयार थे, किन्तु अब स्वास्थ्य जवाब दे चुका था । पुनः कुल्लू अस्पताल में उन्होंने दवाइयों के सहारे सर्दियां बिताईं ।

उनसे मेरी अंतिम मुलाकात बहुत ही क्षणिक थी । बाहर से एक महिला कुल्लू आई हुई थो । जिन्हें मैं रोहतांग, मनाली आदि घुमाने ले गया था । रोहतांग में अक्तूबर के दिनों में पेड़ों में पतझड़ आता है । पेड़ों के पत्ते एक अजीब सो लालिमा लिये हुये पीले होते जाते हैं, फिर झड़ने लगते हैं । उस महिला ने, जो कई बार विदेश हो आई थी । बताया था कि विदेशों में इस पतझड़ के मौसम को बहुत अच्छा मानते हैं । कई जगह बसंत से भी सुन्दर । लालिमा लिये हुए पीले पत्तों वाले पेड़ों के फोटो, केलैण्डर व भू-दृश्य मैंने देखे थे, जो विदेश से आये होते हैं । इस पतझड़ का सौन्दर्य बने हुये थे प्रार्थी जो । रोहतांग के पेड़ों में लगे तो लालिमा लिये हुये पीले पत्तों से, झरने को अ तुर । आती बार नगर हो कर गुजरने लगे तो अपने संस्थान के लिये लोक सस्कृति संग्रह की इच्छुक उस महिला से मैंने प्रार्थी जी का जिक्र किया कि उन से मिले बिना कुल्लू की संस्कृति का उल्लेख अधूरा है । महिला ने भी उनसे मिलने की इच्छा जाहिर को । उन्हें कार में सड़क पर छोड़ मैं ऊपर गया । उस दिन प्रार्थी जी के घर कोई अनुष्ठान हो रहा था । जिसका उस दिन समापन था । प्रार्थी जी ऊपर लेटे थे । वैसे हो बोमार (अशक्त) किन्तु मानसिक रूप से उतने ही चैतन्य । जब मैंने उनसे उस महिला का जिक्र किया तो उन्होंने उसे तुरन्त बुला लाने को कहा । साथ खाने का आमन्त्रण भी दिया । मैं उनसे यह कह कर नीचे आया कि उन्हें ऊपर लाता हूं । वापसी पर महसूस हुआ कि उन्हें ऐसी परिस्थितियों में प्रार्थी जी से मिलाना ठीक नहीं । ये इतने कमजोर और बीमार हैं । इन्हें तकलीफ ही होगी । अतः वापस जाते जाते मैंने अपना इरादा बदल लिया । महिला से उनके बीमार होने की बात कही । कुछ वैसे भी वह अब कार से उतरने की इच्छुक न थी । मैं एकदम कार में बैठ गया । वापस जाकर प्रार्थी जी से यह भी न कहा कि हम जा रहे हैं सोचा, मैं तो आता ही रहता हूं, कभी भी मिल लूंगा ।

वह "कभी भी" फिर कभी न आया । मेरा कुल्लू से स्थानान्तरण हो गया । जिस दिन मैंने कुल्लू का कार्यभार छोड़ा, उसी दिन वहां प्रार्थी जो की शोक सभा थी । शोक सभा में चंद ही लोग थे । वे भी आकाशवाणी व अखबार में नाम आने के इच्छुक ।

अस्पताल रोड़ मण्डी (हि०प्र०)

पैदा कहां है ऐसे ... ...
'चांद' कुल्लवी से एक अन्तरंग बातचीत

– प्रेम कुमार 'नज़र'

नगर :

कुल्लू के एक शासक राजेन्द्रपाल ने नगर को पहले-पहल अपना निवास स्थान बनाया। उसके बाद करीब क़रीब साठ राजाओं ने नगर को नैकट्य प्रदान किया। कुल्लू से मनाली की तरफ सफर करते हुए मध्य में व्यास नदी के दूसरे किनारे तकरीबन साढ़े छह हजार फुट की ऊंचाई पर बसा हुआ खूबसूरत गांव नगर जहाँ इतिहास के अनेकानेक दौर सोए पड़े हैं। उत्तर में रोहतांग लाहौल की बर्फपोश चोटियां, पश्चिम में दृष्टि-सीमा तक फैली हुई खूबसूरत चाँदी, जिसके बीचोंबीच सांप की तरह बलखाती हुई व्यास नदी बहती है, पूर्व में देवदारों की पंक्तियों की पंक्तियां। एक तरफ बड़ा भंगाल के पहाड़ जो तेरह हजार फुट की बुलन्दी सर कर चुके हैं और संतुष्ट खड़े हैं—जी हां, नगर जी हुक्मी-रानी, सरबुलन्दी और खूबसूरती का प्रतीक है।

9 जुलाई, 1981

मैं पतली कूल से नगर की तरफ जाने वाली सड़क पर चल निकलता हूं। एक बेनाम सी कशिश मेरे पैरों को बल खाती हुई सड़क पर आप से आप लिये जा रही है। दृष्टि आश्चर्यचकित है। चित्ताकर्षक दृश्य मुझे कदम-कदम पर रोक रहे हैं लेकिन मुझे अपनी मंजिल पर पहुंचना है। गांव के निकट पहुंच कर दम लेने के लिये एक देवकाय देवदार की महकती छांव में बैठ जाता हूं। अचानक बहुत-सी संगीतमय आवाजों का झोंका मेरे कानों से टकराता है। मैं ग़ौर से उस गीत को सुनता हूं। दिल में एक ना-मालूम सी कसक जन्म लेती है। सारे जिस्म में बिजली-सी दौड़ती हुई महसूस होती है—ये कौन सा गीत है? उसका महल क्या है? उसका मतलब क्या है? मुझे अचानक वर्ड्सवर्थ की प्रसिद्ध नज्म 'सालीटरी रीवर' याद आ जाती है। मैं सड़क पर आगे बढ़ता हूं। चन्द क़दम पर मेरी मंज़िल मेरा इन्तजार कर रही है।

'सेवा सदन'—हुक्मरानी, सरबुलन्दी, खूबसूरती का सम्मिश्रण।

मैं यहां जनाब लाल चन्द प्रार्थी 'चांद कुल्लुवी' से मुलाकात की गरज से आया हूं। यूं तो जिन्दगी में अनेक बार उनसे मुलाकात हुई है मगर न जाने इस मुलाकात में क्या खास बात है जो मुझे अजीब से एहसास का शिकार बनाए हुए है।

मेरे अजीज दोस्त जिया सिद्दीक़ी ने लिखा था कि अब के जब भी मैं कुल्लू जाऊं, 'चाँद' साहब से एक तफ़सीलो मुलाक़ात करुं और उसकी रूदाद 'हिमप्रस्थ' के लिये भिजवाऊं। मैंने अपनी जिन्दगी में बेशुमार छोटी-बड़ी हस्तियों से मुलाकात की है मगर किसी के बारे में अपने संस्मरण लेखनी-बद्ध नहीं किये। शायद यही एहसास मेरा पीछा कर रहा है।

सीढ़ियाँ चढ़ कर बरामदे में प्रवेश करता हूं। 'सेवा सदन' सड़क के किनारे एक पुराना मकान है जिसको मरम्मत करवा कर नया बनाने की कोशिश की गई है। दोनों तरफ सेबों और आलूचों के पौधे हैं। आलूचे जवान हो चुके हैं, सेब अभी नौउम्री के दौरे से गुजरे रहे हैं। मेरी आवाज पर 'चांद' साहब के सबसे छोटे सुपुत्र बाहर आते हैं। खबर वही है जिसको मुझे आशंका थी, यानी 'चांद' साहब सख्त बीमार हैं और रोगी-शय्या पर पड़े हैं (ऐसे आदमी को रोगी-शय्या पर कभी नहीं पड़ना चाहिये)। मुझे छोटे से ड्राइंग रूमनुमा कमरे में बिठा कर अजीज अन्दर तशरीफ ले जाते हैं। मुझ गहरी नदामत का एहसास खाए जा रहा है। मैं बहुत बेवक्त आया। मैं कमरे की सारी खिड़कियाँ खोल देता हूं। फलों की महक से लबरेज तेज हवा के झोंके मेरे जिस्म से टकराते हैं। मेरी आंखों के सामने एक अनन्त घाटी फैल गई है जिसके सौंदर्य का वर्णन शब्दों की पकड़ से बाहर है। सड़क पार खेतों में धान की फ़सल बोई जा रही हैं। कुछ औरतें कमर के बल झुकी फ़सल बीजने में व्यस्त हैं। अरे हां! यही तो वो गीत है जो मुझे कुछ देर पहले सुनाई दिया था। मैं गीत में खो जाता हूं।

अचानक एक आवाज़ चौंका देती है—

"अरे आप! भई कमाल कर दिया......हा......हा......हा......हा......" (कहकहा जरूरत से ज्यादा ही लम्बा है)। फिर अचानक खांसी का दौरा, छाती पर हाथ मगर आंखों में तेज चमक, होंठों पर अर्थपूर्ण मुस्कान, झूलती हुई खूबसूरत दाढ़ी (टैगोर कट) पीछे की तरफ कंघी किये हुए शानों पर बिखरे बाल जो शायद अभी-अभी संवारे गए होंगे।

दाढ़ी और बालों का जिक्र चला है तो एक लतीफ़ा भी सुन लीजिये जो हमारे एक सितमजरीफ दोस्त की ईजाद हैं। चुनाव हो रहा था। मुहिम जोरों पर थी। प्रार्थी साहब अपनी कामयाबी को निकट से निकटतर ला चुके तो एक विरोधी ने उनके खिलाफ भाषण करते हुए कहा कि इस शख्स को हर्गिज वोट न दिया जाए क्योंकि इसका पता

नहीं चलता कि रहा है या जा रहा है।

"मुझे क्या मालूम था कि आपकी तबीयत इस क़दर खराब होगी, वरना........."
"अरे भाई, तुम्हारा मिलना, और फिर ग़रीबख़ाने पर मिलना......देखो मेरा सांस राहेरास्त पर आ रहा है।" (क़हक़हा, मगर लम्बा नहीं) रस्मी बातें......दोस्तों के क़िस्से ...और रस्मी बातें।

मैं आने का मक़सद बयान करता हूं—विनम्रता......और अधिक विनम्रता...... सशरीर विनम्रता। लेकिन जीत मेरी ही होती है। आप गाव तकिये के सहारे तक़रीबन आधे लेट जाते हैं। राज़ो-नियाज़ की जो बातें हुई, आप भी सुनिये! प्रारम्भ इस शेर से होता है—

खयालो-ख्वाब का इक जुदाई जहां हैं हम।
न शायरी, न फसाना, न दास्तां हैं हम॥

(मैं दिल ही दिल में कहता हूं कि आप सरासर झूठ बोल रहे हैं। आप ये तीनों हैं—शायरी भी, फ़साना भी, दास्ताँ भो।)

मैंने अभी पहला सवाल भी न किया था कि जवाब मिला—

प्रार्थी जी : कुल्लू घाटी के इस ऐतिहासिक गांव नगर में पण्डित टेकराम जी का घर। 26 मार्च 1916 के दिन इस संसार में आया। प्राइमरी तक शिक्षा गांव में हासिल की। हाई स्कूल ख़ास कुल्लू से पास करके सनातन धर्म कालेज, लाहौर में दाखिला लिया। धर्म प्रेमगिरी आयुर्वैदिक कालेज से श्री वैद्य कविराज (आयुर्वेद-स्नातक) की उपाधि प्राप्त की। कम उम्री व्यावहारिक प्रेक्टिस में बाधक थी। ललित कलाओं, विशेषत: संगीत से खास लगाव था। यही लगन खींचती-खींचतो फिल्म-नगरी तक ले गई। न्यू थ्येटर्स, कलकत्ता और न्यू इण्डिया कम्पनी, लाहौर की दो फिल्मों में हल्की फुल्की भूमिकाएं निभाई। फिर बीमार होकर वापस लौटा।

नज़र : गोया बीमारी से आपको पुरानी मैत्री है।

प्रा० : दोबारा फिल्म इण्डस्ट्री का रुख न किया। लेकिन लाहौर तो अपनी किस्मत में था हो। अब के एक नए रोल में नमूदार हुआ—एक मासिक उर्दू पत्रिका 'कांगड़ा समाचार' का सम्पादक बन कर। लेकिन आखिरकार एक साल सिसक कर पत्रिका दम तोड़ गई। मैं फिर वापस कुल्लू।

न० : ललित कलाओं से तो आप का संबंध समझ में आता है मगर ये राजनीति...?

प्रा० : (मुस्कुराहट) लाहौर से जब दूसरी बार कुल्लू आया तो अचानक समाजसेवा की भावना की भावना उभरी। ये सेवा करते-करते राजनीति की तरफ रुझान स्वाभाविक था। यहां यह बता देना मुनासिब होगा कि लाहौर में क़याम के दिनों में इन्क़लाबी पार्टी के कार्यकर्त्ताओं से संबंध स्थापित हो गए थे। इन्क़लाब के कीटाणु धीरे-धीरे मेरे भीतर भी प्रवेश करने लग पड़े थे। कुल्लू आकर सिर्फ एक ही धुन सवार रहती कि किस तरह मातृभूमि को गुलामी की ज़ंजीरों से आजाद किया जाए। ये १९३६ से १९३९ का ज़माना था। उससे पहले भी गांधी जी के विभिन्न आन्दोलनों में यथायोग्य हिस्सा लेता रहता था अभी स्कूल का छात्र ही था। कि मातृभूमि का दर्द कई बार दिल में टीस बन कर उठा। वो तो कहिये कि पढ़ाई-लिखाई में जरा अच्छा था इसलिए हैडमास्टर साहब ने पुलिस के हाथों में नहीं जाने दिया बल्कि खुद ही मुनासिब सजा देकर अपने चित्त को प्रसन्न किया। १९३७ में शादी के बधन में बांध दिया गया।

न० : यानी किसी जंजीर में तो जकड़े गए। तौक़ोसलासिला न सही, हल्कए-दामे-ज़ुल्फ़ ही सही।

प्रा० : पंजाब में सर सिकन्दर हयात खां और सर छोटू राम की हकूमत थी। एक बार सर छोटू राम कुल्लू के दौरे पर आए। मैं भी उनसे मिला। न जाने उन्हें मेरी कौन सी अदा भा गई कि मुझे पंचायत अफ़सर के ओहदे पर नामजद कर दिया और हम अफसर होकर सबसे पहले कांगड़ा और फिर देहरा गोपीपुर में नियुक्त हुए। वहां से नूरपुर पहुंचे। तबीयत में बेजारी आरम्भ से ही थी। अतः सरकारी नौकरी ज्यादा रास न आए। सरकारी मुलाज़मत के बाद धर्मशाला के चायबागान में मैनेजर हुए। यहां सियासी तौर पर खुल खेलने की कुछ आजादी थी। लिहाज़ा क्रांतिकारिता बरक़रार रही। 'हिन्दुस्तान छोड़ों' आंदोलन में बढ़-चढ़ कर हिस्सा लिया। १९४५ में पहले चुनाव हुए तो बन्दे को आर्गेनाइजर नियुक्त किया गया। चुनाव अभियान यथायोग्य चलाया और जमींमारा लीग के नुमाइन्दे की जमानत जब्त करवाई। (गहरी सांस लेकर) फिर भारत के इतिहास का सबसे ज्यादा अंधकारमय दौर शुरू हुआ—देश का बटवारा हिन्दू-मुस्लिम दंगे। दंगे दबे तो हम दोस्तों की मेहरबानी हुई। हम योल कैंप में नजरबन्द कर दिये गए जब रिहा होकर कुल्लू पहुंचे तो यहां का वातावरण ही बदला हुआ था। हमारा बेमिसाल स्वागत हुआ।

न० : आपने खुद पहला इलेक्शन कब लड़ा ?

प्रा० : 1952 में बतौर आज़ाद उम्मीदवार, कामयाब हुआ। फिर उसके बाद-तो पलट कर भी न देखा। हिमाचल सरकार में दस साल तक मन्त्रिपद सम्भाल कर अपने प्रदेश और अपनी प्रिय जनता की यथासम्भव सेवा करता रहा।

न० : आपकी जात से ताल्लुक रखने वाले दोस्तों और प्रशंसकों को ये तो मालूम ही

होगा कि आपके व्यक्तित्व के विभिन्न पहलू हैं लेकिन दो पहलू खास तौर पर प्रकट हैं—राजनीति और साहित्य। आप बताने का कष्ट करेंगे कि इनमें से आपको कौन सा अधिक प्रिय है ?

प्रा० : बड़ा टेढ़ा सवाल है। सच पूछिये तो मेरे लिए दोनो ही प्रिय हैं। जनता की सेवा करना भी उतना ही पावन है जितना कि आत्म-सन्तोष का सामान जुटाना। लेकिन मैं साहित्यिक राजनीति और राजनीतिक साहित्य के सख्त खिलाफ हूं।

न० : खैर साहब, ये तो आप पहलू बचा रहे हैं। अच्छा आप अपने साहित्यिक जीवन पर जरा विस्तार से प्रकाश डालिये।

प्रा० : जैसा कि मैं पहले भी निवेदन कर चुका हूं, ललित कलाओं से मेरा सम्बन्ध बहुत पुराना है। लेकिन जीवन अजीब उतार-चढ़ावों से गुजरता रहा—कभी शारीरिक त्रास तो कभी मानसिक अव्यवस्था। सृजनात्मक कार्य की ओर ध्यान देने का बहुत कम समय मिला। हाँ, एक बार इलैक्शन में हार हो गई थी, तब लिखने-पढ़ने का काफी समय मिला।

न० : यानी सृजनात्मक कार्य के लिये शिकस्त खाना जरूरी होता है।

प्रा० : ऐसा ही समझ लीजिये। मैंने १९५७ से १९६२ के पांच साल कुल्लू का इतिहास खंगालने में खर्च किये। इसका नतीजा खूबसूरत निकला—'कुलूत देश की कहानी'।

न० : बेशक, ये किताब कुल्लू की पवित्र धरती के लिए उपयुक्त श्रद्धांजलि है। आपकी ये कृति साहित्य में एक मील के पत्थर का स्थान रखती है। सुना था कि आप इस का दूसरा हिस्सा भी लिख रहे हैं ?

प्रा० : बल्कि लिख चुका हूं। अब तो सिर्फ उस पर फिर से नज़र डालना बाकि है। जब कभी मानसिक और शारीरिक फुर्सत होती है तो उसकी तरफ़ ध्यान देता रहता हूं। हां, आपको जानकर खुशी होगी कि कुल्लू भाषा की एक डिक्शनरी, जिसमें लगभग पच्चीस हज़ार शब्द हैं, पूर्णता के अन्तिम चरण से गुज़र रही है।

न० : ये तो आप अत्यन्त महत्वपूर्ण काम कर रहे हैं। बल्कि यूं कहूं कि आप ही इसे कर सकते थे, तो गलत न होगा। मेरे ख़याल में कुल्लू भाषा का शब्दकोष तैयार करके आपने इस मीठी जबान को अमर बना दिया है। मुबारक हो (प्रसन्नता से उनकी आँखे चमक उठती हैं)। अब ज़रा ये बताने का कष्ट कीजिये कि उर्दू शायरी की ओर आप कब उन्मुख हुए। शुरू मे किसी से अदबी मशवरे भी लिये ?

प्रा० : मेरा संबंध उर्दू ज़बान से बहुत पुराना है। धर्मशाला से प्रकाशित होने वाले

उर्दू पत्र 'जन्मभूमि' का तो अढ़ाई साल तक सम्पादक रहा। फिर देवभूमि 'हिमालय' और 'कुलूतकेसरी' का सम्पादन भी किया। उर्दू में शेर कहने की बाक़ायदा शुरूआत लाहौर के दिनों से ही हो गई थी। उन दिनों लाहौर एक बहुत बड़ा साहित्यिक केन्द्र था। उर्दू साहित्य की तो राजधानी ही समझिये। प्रारम्भ में जनाब 'गुलशन' नदौनवी और जनाब भगवान दास 'शोला' ने रहनुमाई की।

न० : आपकी शायरी के अध्ययन से एक बात साफ़ है कि आपकी प्रिय विधा ग़ज़ल ही है। इसकी कोई खास वजह ?

प्रा० : मेरा मिज़ाज लड़कपन से आशिक़ाना है (जोरदार क़हक़हा)। सब से बड़ी वजह ये है कि ग़ज़ल संगीत के बहुत क़रीब है और संगीत से जुनून की हद तक प्यार करता हूं। फिर मुझे ग़ज़ल में इख्तिसार (संक्षिप्तता) का पहलू बहुत अच्छा लगता है। वैसे नज्म और दूसरी विधाओं में भी लिखता हूं।

न० : ग़ज़ल उर्दू की अत्यन्त प्रिय विधा है, इसमें कोई शक नहीं, लेकिन पिछले दो दशकों से उर्दू ग़ज़ल ने एक नई रविश इख्तियार की है। पारम्परिक शैली, उपमाएं, प्रतीक, यहाँ तक कि वे शब्द भी जो अपनी अर्थगत उपयोगिता खो चुके हैं, नए शायरों ने अकसर छोड़ दिये है। गोया उर्दू ग़ज़ल एक नए सफर की तरफ रवाना हुई है। अब इसमें सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक और भावनात्मक अभिव्यक्ति की ज्यादा से ज्यादा क्षमता पाई जाती है। यूं कह लीजिये कि इसमें सारे समाज का प्रतिबिम्ब मिलता है। आपने ग़ज़ल की इस तब्दीली को कैसा महसूस किया है?

प्रा० : मैंने सिर्फ महसूस ही नहीं किया बल्कि कुबूल भी किया है। मुझे भी नई ग़ज़ल की ये अदा बहुत अच्छी लगी है। मैंने पूरी हिम्मत के साथ काफिले के साथ चलने की कोशिश की है। अब ये आप लोगों पर है कि आप मुझे भी अपने कारवां में शामिल रखें।

न० : वाह साहब, ये भी खूब रही। आप मीरे कारवां हो कर चलिये। अच्छा हुज़ूर, जरा हिमाचल की उर्दू शायरी पर भी इजहारे-ख़याल फ़रमाइये। क्या आप इसके वर्तमान स्तर से संतुष्ट हैं ?

प्रा० : आपने अजीब मुश्किल में डाल दिया। मैं तो खुद अपने आप को अभी विद्यार्थी ही समझता हूं। ये काम तो समीक्षकों का है। लेकिन एक बात ज़रूर अर्ज करूंगा कि हिमाचल की उर्दू शायरी किसी सूरत में भी दूसरे सूबों की उर्दू शायरी से कम दर्जा नहीं रखती। शायद इसकी वजह ये है कि दोस्तों ने अपनी कोशिशों से एक व्यापक साहित्यिक वातावरण तैयार कर दिया है।

न० : क़ताकलामो माफ़, इस माहौल को साजगार बनाने में आपका बहुत बड़ा हिस्सा है, आखिर ये आप तस्लीम क्यों नहीं करते ?

प्रा० : देखने वाले हज़ारों हैं जहां में लेकिन
बात बनती है तभी तूने अगर देख लिया

ये तो आपको ज़र्रानवाज़ी है। खैर, पिछले कुछ सालों से हमारा शिमला एक बहुत बड़े साहित्यिक केन्द्र के रूप में उभरा है। हम सबने मिल कर एक स्पष्ट साहित्यिक परम्परा की नींव रखी है। बड़े बड़े साहित्यिक समारोह, विचार गोष्ठियां और मुशायरे आयोजित किये हैं। हिन्दुस्तान के चोटी के अदीब और शायर हमारे साहित्यिक समारोह में शामिल होने में प्रसन्नता अनुभव करते हैं। आप जानते ही हैं कि 'बज़्मे-अदब' हिमाचल उर्दू जबान और अदब के प्रसार और विकास के लिए बहुत काम कर रही है। इसके साथ ही हिमाचल कला, संस्कृति तथा भाषा अकादमी भी अपना भरपूर सहयोग दे रही है। हमने हिमाचल की उर्दू शायरी को अवाम तक पहुंचाने के लिए दो काव्य-संग्रह भी प्रकाशित किये हैं और अब शायद तीसरे संग्रह की तैयारी है।

न० : ये तो वाक़ई बहुत अहम काम है जो यहां के शायर अंजाम दे रहे हैं। लेकिन बात चली थी हिमाचल की उर्दू शायरी पर इज़हारे-ख़याल की। आप ज़रा तफसील से बताने का कष्ट कीजिये।

प्रा० : देखिये जनाब, मैं अभी-अभी अर्ज़ कर चुका हूं कि हमारे यहां के शायरों का मक़ाम किसी तौर दूसरे शायरों से कम नहीं। यहां आधुनिक और पुराने का कोई झगड़ा नहीं बल्कि दोनों में एक सुन्दर समन्वय है; जैसे नगर में और ऊना में।

न० : ब उपमा है नगर और ऊना को। वाह-वाह !

प्रा० : हमारे शायरों में शबाब ललित, कृष्ण कुमार तूर, अरमान शहाबी, काहन सिंह जमाल, ज़िया सिद्दीकी, सुरेशचन्द्र शौक़, सागर पालमपुरी, कौशल नूरपुरी, डी. कुमार, आलम, आक़िल, ग़रज कि सभी की अपनी-अपनी वैयक्तिक विशेषता है। और फिर एक तरह से आप भी तो हिमाचली ही हैं। मैं तो आपको भी हिमाचल के शायरों में शुमार करता हूं।

न० : क्यों नहीं, मुझे हिमाचल से अपने सम्बन्ध पर हमेशा गर्व रहा है। अच्छा साहब, आप अदब में सियासत भी दाखिल करने की कोशिश करते हैं क्या ?

प्रा० : क्या मतलब ? (भवें तन जाती हैं)।

न० : मतलब यह कि आपने पिछले साल शिमला की एक साहित्यिक गोष्ठी में यह एलान किया था कि आप अपना काव्य-संग्रह बहुत जल्द प्रकाशित करने वाले हैं। उस वादे का क्या बना ?

प्रा० : (थोड़ी मुस्कराहट, थोड़ी विनम्रता, थोड़ी निश्चय की दृढ़ता) आप को जानकर खुशी होगी कि मैंने अपना कलाम मुरत्तब कर लिया है और अब जल्द ही उसे प्रकाशन के लिये भेज रहा हूं।

(मैं इन्तजार करूंगा। हम सब कर रहे हैं।)

प्रा० : (बाहर देखते हुए) नज़र साहब, इस जगह बैठ कर आपको ये महसूस नहीं होता कि ये सारी वादी, सशरीर पावनता है, अमर संगीत है? सुकून ही सुकून, सुकून ही सुकून......(प्रार्थी साहब की नजरें दूर कहीं खो गई हैं... शायद उन दृश्यों में जिनको विश्वविख्यात चित्रकार निकोलाई रोरिक ने अपने ब्रश से रंगों में क़ैद कर नगर की आर्ट गैलरी में हमेशा के लिये सुरक्षित कर दिया है) .....हमारे हिमाचल में ज्ञान-परक, साहित्यिक, सांस्कृतिक और ऐतिहासिक धरोहर खजानों के रूप में विद्यमान है। कमी है तो सिर्फ़ देखने वाली आंख की। हमारे लोक नृत्य, लोक संगीत, हमारी लोक कथाएं, हमारे मेले, हमारे तीर्थस्थान, हमारे प्राकृतिक दृश्य—हमारे प्रदेश की मिसाल कहां है? (भावुक हो जाते हैं)।

मेरी यह लम्बी मुलाक़ात उस व्यक्ति के साथ हुई जो जिस्मानी तौर पर बीमार है मगर ज़हनी तौर पर बेहद तवाना। जिसने अपनी लाग़र जान में सौ रोग पाल रखे हैं—ज्ञान, साहित्य, संगीत, देश-प्रेम, राजनीति, न जाने क्या-क्या। लेकिन बात-बात में जोरदार और लम्बे कहकहे लगाना उसकी तहजीब का एक हिस्सा है। अब यह जानना बहुत मुश्किल है कि उनके कहकहों में कब हास्य होता हैऔर कब व्यग्य। इस तवीलमुलाक़ात में भी बेशुमार क़हक़हे लगे, जिनका हिसाब रखना मुश्किल था।

६३-आर, माडल टाउन, होशियारपुर–१४६००१
(हिमप्रस्थ के नवम्बर १९८१ अंक से साभार)

बहुमुखी प्रतिभा के स्वामी–लाल चन्द प्रार्थी

-- मंगल चन्द ठाकुर

11 दिसम्बर, 1982 को श्री लाल चन्द प्रार्थी के निधन से प्रदेश ने एक बहुमुखी प्रतिभा के स्वामी को खो दिया है। वे समाज-सेवी, देश भक्त, स्वतन्त्रता सेनानी, राजनीतिज्ञ, कलाकार और साहित्यकार थे।

हमारे स्कूल के समय में कुल्लू ज़िला के एक मात्र हाई स्कूल में महन्त अनूपराम बहुत मेहनती, योग्य, अनुभवी और लोकप्रिय अध्यापक होते थे। जब कभी पढ़ाते हुए वे दुखी हो जाते तो खीज कर प्रायः कहा करते थे—"क्या करोगे पढ़कर। क्या करोगे लायक बन कर। हमारा एक शागिद है लालचन्द। हमेशा जमायत की पंक्ति में झोला खोले सब से आगे बैठता था। एक धांधुराम था जो हमेशा सब से पीछे। आज धांधुराम लाखों रूपयों की सम्पति का मालिक है। पैसों में खेलता है। और लालचन्द अभी उसके कन्धों से झोला नहीं उतरा है।"

आज महन्त अनूपराम जी नहीं हैं। वे तब भी नहीं थे जब प्रार्थी जी पहले विधान-सभा के सदस्य निर्वाचित हुए और बाद में मंत्री बने। अन्यथा महन्त जी को अपने शब्द और विचार बदलने होते उन्हें प्रसन्नता होती कि उनका योग्य शिष्य एक सफल राजनीतिज्ञ के रूप में सेवा कर रहा है। आज धांधुराम भी नहीं है। उन्होंने मनाली में आबाद हुए धनाढ्य अंग्रेज और बागीचों के स्वामी बैनन की संतान लड़की से शादी की थी और निस्सन्देह धन-धान्य में जीवन व्यतीत कर चुके हैं। कुछ वर्ष पूर्व रोहतांग पर एक जीप दुर्घटना में उनका निधन हुआ था। प्रार्थी जी भी हमारे बीच नहीं हैं। वरना वे इन पंक्तियों की पुष्टि या खण्डन करते।

परन्तु महन्त अनूपराम जी के शब्द प्रार्थी जी के एक योग्य शिष्य होने के द्योतक हैं। महन्त अनूप राम जैसे विद्वान और सख्त अध्यापक से केवल विशेष रुप से मेधावी शिष्य की ही प्रशंसा सुनी जा सकती थी और वे प्रायः यह उदाहरण दिया करते थे। प्रार्थी जी के योग्य होने का यह भी प्रमाण है कि उन दिनों केवल बहुत ही इनेगिने विद्यार्थी कुल्लू से लाहौर पढ़ने के लिए जा सकते थे और प्रार्थी जी उनमें से एक थे।

प्रार्थी जी सही मानों में समाजसेवक थे। बचपन से ही सेवाभावना उनकी रग-रग में समा चुकी थी। असहाय और जरुरतमंदों की वे सर्वदा सेवा के लिए तैयार रहते थे। इस उद्देश्य से उन्होंने स्कूल के दिनों में ही एक संस्था चलाई थी जिसका मुख्यालय उनका अपना गांव नगर था और उस मुख्यालय का नाम ही उन्होंने "सेवा सदन, नगर" रखा था। संस्था के इस नाम से वे बहुत देर बाद तक कार्य करते रहे। वे पहाड़ी जनता, विशेषतः कुल्लू निवासियों की कमज़ोरियों और अपने समाज की बुराइयों से भली भांति परिचित थे और इन्हीं बुराइयों को दूर करने का उन्होंने बचपन से ही बीड़ा उठाया था।

वस्तुत: इसी समाज सेवा की भावना से प्रेरित हो कर वे लाहौर गए थे। उस समय कुल्लू के कुछ और छात्र भी लाहौर में उच्च शिक्षा प्राप्त कर रहे थे। "कांगड़ा समाचार, लाहौर" पत्रिका के दिसम्बर, १९३३ के अंक के पृष्ठ ३६ पर प्रकाशित एक समाचार के अनुसार इन सब ने लाहौर में "कुल्लू पीपलज़ लीग" का गठन किया था, जिसके लाला दुर्गा दास गोयल बी०ए० अध्यक्ष थे। श्री देवी चन्द गुप्त (जो बाद में सनोडौन हस्पताल में मुख्यचिकित्सा अधिकारी के रुप में काम करते हुए कार दुर्घटना में स्वर्ग सिधारे थे) सैक्रेटरी, पंडित लाल चन्द प्रार्थी जाएंट सैक्रेटरी और श्री नीरत सिंह कंवर खजांची थे। इस संस्था के उद्देश्यों से ही इनकी समाज-सेवा और मनोकामनाओं का ज्ञान हो जाता है। संस्था के मुख्य उद्देश्यों में "उर्दू, हिन्दी, अंग्रेजी और कुलुई भाषाओं में देहात सुधार, शिक्षा, सभ्यता तथा स्वास्थ्य के सम्बन्ध में साहित्य प्रकाशित करना; कुल्लू के नौजवान लड़के और लड़कियों की जो लाहौर में शिक्षा, उद्योग और कला प्रशिक्षण प्राप्त करने के इच्छुक हों, हर सम्भव और आवश्यक सहायता करना और मार्गदर्शन देना, घटा (बैजनाथ के निकट) में राहदारी हटाना, कुल्लू के फलों के निर्यात में पोस्टल और रेलवे खर्च कम कराना, लाहौर तथा अन्य शहरों में कुल्लू की तंजारती वस्तुओं के लिए मार्केट पैदा करना तथा कुल्लू की पब्लिक, और विशेषतः कुल्लू के जिला और सरकारी कार्यालयों में काम करने वाले कर्मचारियों की प्रत्येक उचित शिकायत को कानूनी और शान्तिपूर्ण तरीकों से दूर करने के लिए जबरदस्त एजीटेशन करना था। इस पत्रिका के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि इसके कंवर टेढ़ी सिंह विद्यार्थी "कांगड़ा समाचार" के सम्पादक थे और प्रार्थी जी मुख्य कार्यकर्ताओं और उप-सम्पादकों में से एक थे।

कंवर टेढ़ी सिंह विद्यार्थी एम० ए० एल० एल० बी० भी कुल्लू के थे और वे कुल्लू देहात सुधार सोसाइटी के जनरल सैक्रिटेरी थे, और प्रार्थी जी इस संस्था के समय-समय पर विभिन्न पदों पर कार्य करते रहे। अपने इन साथियों के प्रति प्रार्थी जी ने अपनी पुस्तक "कुलूत देश की कहानी" के पृष्ठ १३ पर हम इन शब्दों में श्रद्धांजलि अर्पित की है :—

"इसी दौर में मैंने कुल्लू के आकाश पर कुछ सितारे उदय होते हुए देखे। कंवर टेढी सिंह, ठाकुर उत्तम सिंह, कर्नल खुशहाल

चन्द, भवानी चरण पराशर श्रौर डाक्टर देवी चन्द । ये
सितारे उभरे, शोले न बन पाए श्रौर बुझ गए। अगर बस
चले तो कुल्लू की धरती से पूछें तूने वे गंजहाए गिरामाया
क्या किए।"

आज इन पंक्तियों का सितारा स्वयं हमारे बीच नहीं है, परन्तु हमें अभिमान है कि वह सितारा उभरा भी, शोला भी बना, चमका भी और हमेशा के लिए अपना प्रकाश पीछे छोड़ गया है।

उन दिनों की परिस्थितियों के अनुसार प्रार्थी जी ने देहात सुधार के प्रति बहुत महत्वपूर्ण कार्य किए हैं। इन कार्यों में सबसे विशिष्ट कार्य शिक्षा का प्रचार-प्रसार था। कुल्लू क्षेत्र में शिक्षा के विस्तार में प्रार्थी जी का बहुत योगदान रहा है। अनपढ़ जनता में शिक्षा का प्रचार करने की दृष्टि से उन्होंने "ग्राम सुधार साक्षरता कमेटी" की स्थापना की थी। वे स्वयं इस कमेटी के मंत्री थे। मंत्री के रुप में उन्होंने प्रौढ़ शिक्षा के लिए एक प्राइमर और एक पाठय पुस्तक लिखी और प्रकाशित की थी। पाठ्य पुस्तक में उनकी ये पंक्तियां हम स्कूलों में प्रायः पढ़ा करते थे :—

हे भगवान दे बरदान काम देश के आऊं मैं।
दया निधान, बन विद्वान, विद्या पढ़ पढ़ाऊं मैं॥

ग्राम सुधार साक्षारता कमेटी के मंत्री के रुप में ही प्रार्थी जी ने सेवा सदन से विजय दशमी सम्बत् १९९६ विक्रमी (अक्तूबर, १९३९) को सचित्र बाल रामायण (कविता सहित) पाठकों को इन शब्दों के साथ प्रस्तुत की थी :—

निज गौरव का कुछ ज्ञान रहे।
हम भी कुछ हैं, यह ध्यान रहे॥
सब जाए अभी, पर नाम रहे।
मरणोत्तर गुंजित गान रहे॥

प्रार्थी जी अद्भुत संगठन-शक्ति के स्वामी थे। चाहे दल-गठन की बात हो या साहित्यिक अथवा कला मंच की; उनका व्यक्तित्व स्वतः संगठन का प्रतिरूप था। बचपन से ही अनेक संस्थाओं के संचालन से उन्हें संस्थाओं के संगठन का अनुभव था और उस

अनुभव से प्रार्थी जी ने पूरा लाभ उठाया था। वे साम्प्रदायिक मतभेदों की भावनाओं से कोसों दूर थे। साम्प्रदायिक समन्वय के जो गुण उनमें विद्यमान थे उन्हीं के कारण वे अपने क्षेत्र में राजपूतों का पूर्ण बहुमत होने के बावजूद भी चुनावों में जीतते रहे हैं। यहां भी उनकी संगठन-शक्ति ही विशेष रूप से कार्य करती रही है। उन्हें अपने इस गुण का एहसास था, इस लिए उस समय भी जब वे मन्त्री थे इस दिशा में सचेत थे। अपनी पूर्व परम्परा से प्रोत्साहन लेते हुए मन्त्री पद के समय भी उन्होंने "साहित्य एवं कला संगम" के नाम से नई संस्था स्थापित की थी और वे संस्था अन्तिम दिनों तक कार्य करती रही। विभिन्न सम्प्रदायों के बीच मैत्री भावना और पारस्परिक प्रेम जागृत करने के लिए वे हमेशा तैयार रहते थे।

पहाड़ी भाषा के महत्व को जिन नेताओं और विद्वानों ने ठीक परिप्रेक्ष्य में समझा और जांचा है उन में भूतपूर्व मुख्य मन्त्री डॉ. यशवन्त सिंह परमार जी पहले हैं और प्रार्थी जी दूसरे। वस्तुतः इस भाषा के महत्व को वही वास्तविक रूप से समझ सकते हैं जो पंजाब की राजनीति से भली प्रकार परिचित है और जिन्होंने उस राजनीति के परिणामों को भुक्ता है या जो उस राजनीति के भुक्त भोगीहैं। हिन्दी के साथ पहाड़ी की कहाँ प्रतिद्वन्द्विता हैं यह बात ये दोनों नेता एक नहीं अनेक बार, बल्कि हर सम्बन्धित मंच पर कह चुके हैं। उनकी यह धारणा थी और एक मत था कि "संस्कृत हमारी दादी मां है और हिन्दी पहाड़ी की सहोदर बहिन है।" इस लिए इनमें आपसी कोई संघर्ष नहीं है। जहाँ तक भाषाओं के मौलिक स्वरूप का सम्बन्ध है पहाड़ी का पंजाबी से भी कोई टकराव या झगड़ा नहीं है, परन्तु जिस प्रकार पंजाब ने भाषाओं को राजनीति का रंग दिया है उस स्थिति में यह स्पष्ट हो जाना चाहिए कि पहाड़ी क्या है और उसका स्वरूप क्या है। 1966 में पंजाब का पुनर्गठन अकालियों के एक लम्बे संघर्ष का परिणाम था और भूतपूर्व पंजाब के क्षेत्रों का विभाजन भाषा की बिना पर हुआ था और भूतपूर्व पंजाब के पहाड़ी क्षेत्र स्पष्ट रूप से भाषायी आधार पर पंजाब से अलग हो कर अपने पहाड़ी भाषी हिमाचल प्रदेश से मिलाए गए थे। इस लिए पहाड़ी भाषा की स्पष्ट सता को, जो ऐतिहासिक क्रम और भाषा वैज्ञानिक अध्ययन और समीक्षण से सिद्ध हो चुकी है, मानने और स्वीकार करने में किसी को भी संदेह नहीं हो सकता। पंजाब का पुनर्गठन नितान्त भाषायी आधार पर हुआ था और भाषा तथ्य पर लम्बे समय तक अध्ययन और विचारण के बाद ही पंजाब के पहाड़ी क्षेत्रों ने पुराने हिमाचल के क्षेत्रों से मिल कर विशाल हिमाचल प्रदेश का गठन किया था, और इस लिए हिमाचल प्रदेश में पहाड़ी भाषा के स्वतन्त्र अस्तित्व और विशिष्ट महत्व को नकारा नहीं जा सकता। इस भाषा के प्रचार-प्रसार के लिए प्रार्थी जी अंतिम दिनों तक प्रयत्नशील रहे। उनका यह स्पष्ट मत था कि भाषा बनाई जा सकती है। वह एक सरिता है उसे विकसित किया जा सकता है, सही दिशा की ओर मोड़ा जा सकता है और यह एक व्यक्ति का काम नहीं है। साहित्य के पनपने से भाषा का स्वरुप निखरता है। इसी लिए

उन्होंने हिम-भारती पत्रिका को विशेष रूप से पहाड़ी के विकास प्रसार के लिए स्वीकृत और प्रकाशित करवाया था। व्यक्ति के व्यक्तित्व के निर्माण में मातृभाषा के महत्व को जानते हुए प्रार्थी जी को पहाड़ी से यह मोह था, हालांकि स्वयं वे उर्दू के उच्च शायर और विद्वान साहित्यकार थे।

प्रार्थी जी पक्के पहाड़ी थे और पहाड़ी कहलाने में गर्व अनुभव करते थे। हिमाचल प्रदेश क्षेत्र के लोग पुराने समय से लेकर प्रायः पहाड़ी या पहाड़िया के नाम से तिरस्कृत होते रहे हैं। उनके लिए पहाड़ी या पहाड़िया हमेशा अपमानित शब्द के रूप में प्रयुक्त होता था। हिमाचल प्रदेश में पंजाब का क्षेत्र मिलाने के तुरन्त बाद ही प्रार्थी जी ने सबसे पहले पहाड़ी या पहाड़िया की हीन भावना के निष्कासन का बेड़ा उठाया। इसी हीन भावना में ग्रस्त होने के कारण कुछ विद्वान और नेता हिमाचल की भाषा का नाम 'पहाड़ी' के हक में नहीं थे और इसे बदल कर "हिमाचली" नाम देना चाहते थे। यह विषय लम्बे समय तक चर्चाधीन रहा कि हिमाचल की भाषा को पहाड़ी नाम रहने दिया जाए या बदल कर हिमाचली नाम दिया जाए। मैदानों से लगते क्षेत्र के जो लोग पहाड़ी या पहाड़िया के नाम से अधिक अपमानित हुए महसूस करते थे वे इस भाषा को पहाड़ी कहाने में आपत्ति उठाते रहे। यह बात लिखित रुप में भी विद्यमान है। राज्य भाषा संस्थान द्वारा तैयार की गई प्रथम शब्दावली में ये दोनों शब्द दर्शाए गए हैं—"पहाड़ी" कोष्टक में और "हिमाचली" कोष्टक से बाहर "हिन्दी—हिमाचली (पहाड़ी) शब्दाबली।" केवल प्रार्थी जी के प्रयत्नों और सुदृढ़ मत द्वारा ही पहाड़ी शब्द से हीन भावना धीरे-धीरे दूर हुई और पहाड़ी कहने में गर्व अनुभव किया जाने लगा। उन्होंने अपनी एक लम्बी कविता द्वारा पहाड़ी नारा दिया और इस हीन भावना से निकाल कर सम्मान प्रदान किया :

असां पहाड़ी, पहाड़ी म्हारा देस ओ।
चम्बा, कुल्लू, कांगड़ा, किन्नौर इक देस ओ॥
ऊना, सिरमौर म्हारा हिमाचल प्रदेस ओ।
इक बोल चाल, इक आंगण दुआर ओ॥
इक म्हारे सुपने दा छोटा संसार ओ।
इक म्हारे रसम, रिवाज इक म्हारा भेस ओ।
असां पहाड़ी, पहाड़ी म्हारा देस ओ॥

प्रार्थी जी का व्यक्तित्व पहाड़ी संस्कृति का प्रतिरुप था। वे पहाड़ी संस्कृति को आर्य सभ्यता का वास्तविक अवशेष समझते थे। उनके अनुसार आर्यों के देश सप्त सिन्धु और आर्यावर्त्त का मूल भाग वह क्षेत्र है जिसमें अब हिमाचल प्रदेश स्थित है। वे अपनी पुस्तक "कुलूत देश की कहानी" में लिखते है—"हिमवन्त, हिमवान, हिमालय—हिमाचल

का वह भू-भाग है जिसका सीधा सम्बन्ध है सृष्टि की रचना से, जहां प्रकृति की उथल-पुथल में डोलते पर्वतों में से अन्तिम पर्वत को आर्यों के आदिदेव वृत्रहन्ता इन्द्रने कील कर स्थित किया था और तब उसका नाम पड़ा इन्द्रकील पर्वत"। इस संस्कृति की रक्षा करना और इसकी विशिष्टताओं का विकास-प्रसार हमारा उत्तर दायित्व है। यह आर्य के महान् ऋषियों मनु, जमदग्नि, वसिष्ठ, गौतम, मृगु, शृंग, परशुराम, व्यास, माण्डव्य, पराशर की धरती है। यह "महासू" महाशिव की तपोभूमि है। नटराजराज की क्रीडास्थली है। इस धरती का अंग-अंग नाचता है।

पहाड़ी संगीत, नृत्य और नाट्य रीति-रिवाजों, देवी-देवता की पूजन-पद्धति में हमारी प्राचीन विशिष्ट परम्पराएं मुरक्षित हैं। बीसवी सदी के छठे दशक के आरम्भ में जब पहाड़ी क्षेत्र के मेलों के अस्तित्व को मिटने का खतरा पैदा हो गया था तो प्रार्थी जी ने मेलों के अग्रगण्य दशहरा की मिटती हुई मर्यादा को सुरक्षित रखने और विकसित करने का बीड़ा उठाया था। इस तथ्य को मानने में किसी को संकोच नहीं होना चाहिए कि प्रार्थी जी के प्रयत्नों के फलस्वरूप ही कुल्लू दशहरा का वर्तमान स्वरूप जो स्वतन्त्रता के तुरन्त बाद समाप्त सा हो गया था, स्थानीय, राज्य और राष्ट्रीय स्तर से गुजरता हुआ आज अन्तर्राष्ट्रीय लोक-नृत्य समारोह का रूप धारण कर चुका है। वर्तमान कला-केन्द्र जो खुले रंग-मंच का अपने आप में एक आदर्श है, प्रार्थी जी के प्रयत्नों और कला-प्रियता का परिणाम है। इसके आरम्भिक चरणों में उन्होंने कितने विरोध और जटिल परिस्थितियों का मुकाबला किया समय उन घड़ियों को भूला चुका है। एक बार उनके आलोचकों ने विधान-सभा में उन पर लांछन लगाया कि प्रार्थी ने हमारी महिलाओं को भी मंच पर नचाया है। जब वे उत्तर देने के लिए खड़े हुए सच-मुच उनकी आंखों में आंसू थे। उनका गला भर गया था और उस स्थिति में पहाड़ी संस्कृति और उसकी सुरक्षा की जो भूमिका बांधी उससे उनके अपने साथी तो क्या आलोचक भी एक बार उनसे शतशः सहमत हुए थे। उन्होंने कहा था कि यह दोष वह लोग लगाते है जो संस्कृति और संस्कृति के महत्व को नहीं जानते, जिस देश की संस्कृति मर जाती है वह राष्ट्र कभी जीवित नहीं रह सकता। इकबाल ने जब "कुछ बात है कि हस्ती मिटती नहीं हमारी, सदियों रहा दुशमन दौरे जमां हमारा" कहा है तो उसके सामने केवल एक मात्र संस्कृति थी। इस संस्कृति की खातिर मैं स्वयं मंच पर नाचा हूं" तालियों की गड़गडाहट में प्रार्थी जी ने तब कहा था। प्रार्थी जी तब मंच पर नाचे हैं, जब इस क्षेत्र में विशेषतः कुल्लू में, नृत्य-कला लगभग समाप्त हो रही थी। लोक-नर्तकों में हीन भावना फैल रही थी और सचमुच नाचने वालों की कमी हो गई थी। इस तरह उन्होंने पहाड़ी संगीत-नाच के गिरते हुए रूप को उठाकर एक उज्ज्वल स्थान पर ला खड़ा किया है।

पहाड़ी संस्कृति का सम्मान करते हुए वे राष्ट्रीय धारा से पृथक नहीं हुए हैं। वे वास्तव में पहाड़ी संस्कृति को भारतीय संस्कृति का अभिन्न अग समझते थे। वस्तुतः भारतीय संस्कृति के मौलिक गुण धर्म अर्थ, काम मोक्ष की भावना पहाड़ी संस्कृति के मौलिक आधार हैं और इसी परिप्रेक्ष्य में वे पहाड़ी संस्कृति की बात करते थे। मूल

रुप में प्रार्थी जी भारतीय संस्कृति के पुजारी थे। उसके उपासक थे। भारतीय चिकित्सा पद्धत्ति को बहुत श्रेष्ठ और ऊंचा स्थान देते थे, और कई वर्षों तक वे अखिल भारतीय आर्यु वैदिक कांग्रेस के अध्यक्ष भी रहे। हिमाचल में जहाँ भाषा एवं संस्कति विभाग तथा हिमाचल कला, संस्कृति और भाषा अकादमी को उनका बहुत बड़ा एहसान चुकाने को है, वहां आयुर्वेदिक चिकित्सा प्रणालीके प्रदेश में नए स्वरुप और नयी लोक प्रियता का श्रेय भी उन्हीं को जाता है।

प्रार्थी जी के जीवन के अन्तिम दिन सन्तोष और सकून में व्तीत नहीं हुए। ऐसा प्राय: जीवन में हुआ करता है, उनकी स्थिति में यह कोई अपवाद नहीं था। उन्हें इस बात का पूर्ण एहसास था, यह उनकी गजल के शेरों से स्पष्ट होता है :—

खुशी की बात मुकद्दर से दूर है बाबा।
कहीं नज़ाम में कोई फतूर है बाबा।।

भी बहार में बैठे हैं हम ग्रलम व-किनार।
जरा बता कि यह किसका कसूर है बाबा।।

घटाएं पी के भी सहरा की प्यास रखता हूं।
न जाने प्यास में क्या सरूर है बाबा।।

कभी तो कोई इसे जोड़ पाएगा शायर।
ग्रभी तो शीशा-ए दिल चूर-चूर है बाबा।।

मेरा वचूद तेरे शौक का नतीजा है।
इसी लिए तो यह साये से दूर है बाबा।।

छुपा-छुपा के मैं रखूं इसे कहां ए चांद।
मताए जिंदगी पेशे हजूर है बाबा।।

हाई स्कूल, भूठी
ज़िला कुल्लू (हि०प्र०)

लाल चन्द प्रार्थी–क्या थे-क्या नहीं थें

– चेत राम वर्मा

लगभग 1940 की बात है जब मैं प्राईमरी कलास में पढ़ा करता था और प्रार्थी जी नौकरी छोड़ कर जंगे आजादी में कूद पड़े थे। उन्होंने इलाका कुल्लू में आज़ादी के परवानों की एक पार्टी बनाई थी, जिस का नाम रखा था, "हिमालय संघ"। गांव जगत सुख उस पार्टी का केन्द्र था। स्वर्गीय कुजे लाल जगत सुख निवासी प्रेजिडैण्ट और स्वर्गीय लाल दास बैरागी जनरल इन्चार्ज। यही पार्टी वाले आज़ादी की मस्ती में झूम कर एक अनोखा राग गाया करते थे, जो प्रार्थी जी ने खुद बताया था और जिस के बोल यूं थे :—

एक नया संसार बसा दे एक नया संसार।
एक नया संसार कि जिसमें जनता का हो राज ॥

कि जिस में धरती हो आबाद।
जहां सुरक्षित हो नर नारी और जीवन हो आज़ाद ॥

एक नया संसार बसा दे एक नया संसार।

यह थी वह कुल्लू में जंगे-आजादी की प्रार्थी जी की पहली लहर, जिस ने बाद में एक तूफान का रूप धारण किया और कई मनचले जवान अपना सब कुछ कुर्बान करके इस में कूद पड़े।

प्रार्थी जी का सियासी पहलू भी बहुत शानदार रहा। स्वर्गीय राजा भगवन्त सिंह को मुतहिदा पंजाब की लौजस्लेटिव असम्बैली में इलाका कुल्लू की तरफ से नमाईदा बनाने में प्रार्थी जी का बढ़ चढ़ कर हाथ रहा। 1945 में ठाकुर बेली राम को एम. एल. ए. बनाने में प्रार्थी जी भी आगे आगे रहे। फिर 1952 से 1957 तक, 1962 से 1967 तक, 1967 से 1972 तक और फिर 1972 से 1977 तक प्रार्थी जी बतौर एम. एल. ए. इलाका कुल्लू की निमायंहदगी करते रहे। मौजूदा हिमाचल में कुल्लू के पहले और वाहिद पूरे वजीर प्रार्थी जी ही थे।

बतौर लीडर प्रार्थी जी कितने दिलेर और साफ गो थे इस की एक मिसाल दर्ज है। लगभग 1950-59 की बात है। जब स्वर्गीय जवाहर लाल नेहरू का भारतवर्ष में बोल बाला था। स्वर्गीय यू. एन. ढेवर कांग्रेस पार्टी के प्रेजिडैण्ट थे। पांच साला प्लानों की हर तरफ चर्चा थी। प्लान की कामयाबी का हर जलसे में बढ़ चढ़ कर जिकर किया जाता था। स्वर्गीय ढेवर जी कुल्लू मनाली के दौरे पर आ रहे थे। उनएजाज में कुल्लू मनाली में बहुत बड़ा जलसा हो रहा था जिस में प्रार्थीजी शामिल थे। उस मौका पर प्रार्थी जी ने अपनी तकरीर के दौरान एक शेर पांच साला प्लान की कामयाबी पर कहा था। उस के बोल यूं है :—

रौशनी लूट ली ऊंचे-ऊंचे मीनारों ने
खाक के ज़र्रे में वही तारीकी बाकी है।

भारतवर्ष के कांग्रेस प्रैजिडैण्ट की मौजूदगी में, गवर्नमैन्ट और कांग्रेस पार्टी के जलसे में पांच साला प्लान की कामयाबी को असली तस्वीर इतनी दलेरी और साफगोई से सिर्फ प्रार्थी जी ही खींच सके थे। कितने दिलेर और निडर थे प्रार्थी जो।

प्रार्थी जी कविराज भी थे और कवि भी। कुल्लू ज़वान में बहुत मशहूर और हर दिल अजीज (लोक प्रिय) गीत उन्ही का बनाया हुआ है जिस के बोल अनमाल हैं :—

देशा-देशान शोभला कुल्लू देश प्यारा
आसे सी एई रे, तीतरु चाकरू ए वगीचूड़ म्हारा

इसी तरह लगभग 1960 की बात है। प्रार्थी जी अमृतसर में अपने एक वहुत करीबी दोस्त के यहाँ ठहरे थे। मैं उन दिनों अमृतसर में ही सरकारी नौकरी करता था। मैं भी प्रार्थी जी से मिलने वहाँ गया। बातों-बातों में कुल्लू वादी के प्यार, तड़प और जलन के ज़ज़्बों में आकर प्रार्थी जी ने एक शेर कह दिया जिस का तालुक इलाका कुल्लू के इतिहास और उस की खोज के बारे में था। बोल यूं थे :—

खुर्दो जनूं ने मिल कर उठाये बहुत हिजाब
लेकिन चमन का राज़ अभी तक चमन में है।

शेर उर्दू ज़ुबान में था और अलफाज़ मुश्किल मतलब बहुत गहरा था, बहुत देर तक इसी मौज़ू पर ले दे होती रही। आखिर इस शेर के आधार पर याद न प्रार्थी जी

ने एक मुकम्मल नाकाबिलेफरामोश और तारीकी मिसालों से भरपूर किताब लिखी जिस का नाम है "कुल्लूत देश की कहानी"। और मज़कूरा वाला शेअर इस किताब की पहली सफा में दर्ज है। प्रार्थी जी एक बहुत ऊंचे और सुलझे हुये कलाकार थे। लगभग 1954-55 ई० की बात है। सारे भारतवर्ष में भी भारत सेवक समाज के कैम्प लग रहे थे। ऐसा ही एक कैम्प मनाली में भी प्रार्थी जी की निगरानी में बतौर एम. एल. ए. चल रहा था। कैम्प में एक दिन कुल्लू राग और नाच का मजाहिरा हो रहा था और प्रार्थी जी इस में वेश-पेश थे। इत्तफ़ाकिन बम्बई से एक फिल्मी टीम जिस के लीडर गालबन पृथ्वी राज कपूर थे, मनाली आयी हुई थी। वह टीम भी इस कैम्प में आ धमकी प्रार्थी जी की जिन्दा दिली, राग गाने का ढंग और नाचने के अन्दाज को देख कर स्वर्गीय कपूर जी ने अपनी टीम की साथियों से आला एक्ट्र और एकट्रेस से मुखातिब हो कर कहा था।

"………देखिये! इस जवान के 'स्वर' में स्रोज हैं और दिल में चलन है। नाचते वक्त इस का अंग-अंग नाचता है। मस्ती से झूम रहा है। यह पैदायशी कलाकार है और आप सब नक्ली………।" क्या बात थी उस महान् कलाकार की, जिस ने हमें उस वक्त छोड़ दिया जब उन की बहुत जरूरत थी। हिमाचल सरकार ने प्रार्थी जी की कला की पूरी कदर की। नतीजा के तौर पर कुल्लू में आज इन्ट्रनैशनल कला केन्द्र बना हुआ है। हिमाचल में आर्ट और कल्चर एक पूरा महकमा चल रहा है, जिस की बदौलत हिमाचल के कलाकार अब विदेशों में अपने आर्ट और कला का मुजाहिरा करने जाते रहते हैं। हाल ही में एक टीम नार्वे और इग्लैण्ड गई थी जिस में एक कलाकार गाँव वाशंग इलाका कुल्लू का भी था। उस की जवानी प्रार्थी एक देवता थे। जिस की बदौलत उस गरीब-हरिजन देहाती की कीमत पड़ी और वह अपने ढोल के साथ जहाज में उड़ता हुआ कई देशों की सैर करता रहा जिस की कल्पना उस कलाकार के ख्वाब में भी नहीं थी। इस लिये उस के लिये प्रार्थी जी देवता थे।

मगर सब से बढ़ कर प्रार्थी जी हमदर्द इन्सान थे। जब पहली बार सं. 1967 ई. में हिमाचल प्रदेश के वज़ीर बन कर कुल्लू आये तो स्वागत के लिए ढालपुर मैदान में इलाका कुल्लू की जनता वेजारी में बेताबी से खड़ी थी। एक से बढ़ कर एक आगे हो रहा था। मगर वाह रे प्रार्थी जी आप सब को छोड़ कर अपने लड़कपन के दोस्त स्कूल के कलास फैलो से बग़लगीर हुये जो उस वक्त महकमा जंगलात में सिर्फ कारपैन्टर की नौकरी करता था। यह थी इन्सानियत की इन्तहा … …। प्रार्थी जी चले गये-सेहत बिगड़ती गई जिसके जिम्मेदार बहुत हद तक वह खुद थे। खुले दिल से वह इन गल्तियों को मानते थे। मगर देर बहुत हो गई थी-आखिर चले गये।

जब तक जिन्दा रहे; कुल्लू के लोगों के दिलों पर, कुल्लू के हर पहलू की खोज और तरक्की पर, हिमाचल की आर्ट और कल्चर पर, हिमचल प्रदेश की सियास्त पर इलाका कुल्लू में इन्तहाई आला पोजिशन पर छाये रहे। कहने वाले चाहे कुछ भी कहें। आज के कुल्लू के निखार में प्रार्थी जी का ही बहुत बड़ा योगदान है।

प्रार्थी जी कहा करते थे कि अपने इर्द-गिर्द छाये हुये अन्धेरे को अपनी आत्मा की ज्योति जगा कर ही दूर किया जा सकता है। कितने अनमोल बोल हैं? किस तरह यह सब कुछ हासिल करने के लिए प्रार्थी जी को तप और त्याग की चक्की में से गुजरना पड़ा। यह एक लम्बी दास्तां है और हमारे हाथों में पड़ी हुई यह पुस्तक सब कुछ लिखने ब्यान करने के लिए बहुत छोटी। लिहाजा मौका मिला तो इस विषय पर फिर कभी लिखूंगा।

जगत सुख निवासी

शेरे कुल्लू

श्री लाल चन्द प्रार्थी

– नरेन्द्र कुमार

श्रद्धेय श्री लाल चन्द प्रार्थी जिन्हें कुल्लू के जनमानस में पनार्थी, साहित्य जगत में "चान्द कुल्लवी" के नाम से जाना जाता है का जन्म "देवधारा" कुल्लू जिले के व्यासा के किनारे बसे गांव नगर में सन् १९१६ में एक साधारण ब्राह्मण परिवार में हुआ। श्री प्रार्थी जी ने बाल्यवस्था से ही अपने जीवन संघर्ष को स्वीकारा था। बचपन में ही उनके अन्दर का कलाकार, साहित्यकार बाहरी तथा परिवारिक झमेलों को तोड़ कर उड़ाने भरने लगा था। उन्होंने जब जवानी की दहलीज पर कदम रखा तो परतन्त्रता की बेड़ियों में जकड़े अपने देश की दुर्दशा को देख कर इनका कलाकार मन विद्रोह कर उठा। वे कलाकार ही नहीं थे, उनके साहित्य में भी एक ताकत थी और संगीत प्रेमी के साथ-साथ वे स्वयं में एक क़ुशल संगीतज्ञ भी थे। मैं जब अपनी बाल्यवस्था में था तो उन्हें अक्सर महफिलों में भाग लेते हुए मैंने स्वयं देखा है। वे यदि महफिल में होते तो महफिल की रौनक ही कुछ और होती। बचपन के उन दिनों में महफिल में प्रार्थी जी की परिस्थिति का जब हमें पता चलता तो हमारी ख़ुशी का पारावार न रहता और सुबह तक खत्म न होने वाली उन महफिलों में जहां कमरा तो लोगों से भरा होता ही, साथ ही लोग दरवाजे और खिड़कियों पर भी उनके गानों जिनमें भजन, गज़लें और पहाड़ी गीतों की बहुलता होती का आनन्द लेते। प्रार्थी जी कभी हरमौनियम और कभी तबला लिए उस महफिल में आनन्दित दिखाई देते। हमारे घर के सम्बन्ध उनके साथ बहुत ही मधुर थे। जब मैंने होश सम्भाला प्रार्थी जी को एक राजनेता के रुप में पाया। तब मैं आठवीं कक्षा में हुआ था और वह हिमाचल प्रदेश के नए-नए मन्त्री बने थे। आयु में अन्तर के कारण उस समय उनसे अधिक बात करने का साहस न जुटा पाता, बात केवल दुआ सलाम तक ही सीमित रहती। लेकिन जब बचपन पीछे छुटा और कुछ समझने लायक हुआ तो सन १९७३ से १९७७ तक उनके साथ ही रहने का संयोग मिला। तब उन्हें करीब से देखने और समझने का भी मौका मिला। मैंउनके साथ शिमला में उनकी कोठी बैनमोर में रहता था। प्रार्थी जी का जीवन बहुत ही सरल और सादा था। वे जब अपने निवास पर होते तो सुबह उठते अपने काम से निवृत हो कर आधा या एक घण्टा पूजा में बैठते। उस समय तक उनके निवास पर मिलने

वालों का तांता लगा रहता कोई कमरे में बैठे होते कोई बाहर लान में, पूजा से उठ कर प्रार्थी जी सभी आए हुए मिलने वालों से मिलते लेकिन मिलने वालों की भीड़ दस घर पर ही बजा देती । कार्यालय के बाद शाम को घर आते तो मिलने वाले फिर उनका बेकरारी से इन्तजार कर रहे होते। बेशक उनका स्वास्थ्य कुछ ठीक न भी हो वे उनसे मिलते। खास कर उन लोगों से कभी भी मिलना नहीं भूलते जो कलाकार, साहित्यकार होते। वे उनसे बैठने और आराम से बैठकर बात करने के लिए कहते। सभी मिलने वालों से फारिग होकर वे आराम से उनसे बातचीत करते। कभी यदि कोई कलाकार, साहित्यकार जिसकी कृतियों से हिमाचल की छवि का मुख उज्जवल हुआ हो तो वह उससे मिलकर आनन्द विभोर हो उठते और उसके लिए सब कुछ कर गुजरने के लिए उतावले हो जाते । रात गए जब मिलने वालों से निबट जाते तो डाक को बारी-२ से पढ़ते और उसके बाद फाईलों को देखते। खाना आदि खा कर अपना लिखने पढ़ने का काम करते जिस दिन काम से काफी थकाकट महसूस करते तो बिस्तर पर बैठे-२ माला फेरते रहते उन्हें रात देर तक बैठने की आदत थी। अक्सर उनका स्वास्थ्य खराब रहता था लेकिन उसकी परवाह किए बिना वे रात-रात भर कलाकारों, साहित्यकारों, और आयुर्वेदाचार्यो के साथ चर्चा किया करते। इन लोगों के लिए उनके मन में बड़ा आदर और मान था।

अपने मन्त्री काल में उन्होंने हिमाचल प्रदेश में दो विभागों को जन्म दिया 1. भाषा एवं संस्कृति विभाग, हिमाचल कला-संस्कृति एवं भाषा अकादमी 2. आयुर्वेद निदेशालय। उन्होंने इन विभागों में प्राण डालने में अपना तन और मन न्यौछावर कर दिया। वे अपनी पहाड़ी संस्कृति पर बड़ा गौरव करते। उन्होंने अपनी संस्कृति को न केवल भारत में ही बल्कि विदेशों तक पहुंचाने में एक अहम भूमिका निभाई कुल्लू का कला मंच इसका साक्षी है। वे जब भी किसी साँस्कृतिक या साहित्यिक कार्यक्रम में भाग लेते तो वे एक मन्त्री के नाते नहीं बल्कि वहां उन साहित्यकारों और कलाकारों के साथ उन का साथी बन कर। यही कारण था कि हिमाचल प्रदेश का हर साहित्यकार व कलाकार उन्हे अपना प्रेरक समझता था। प्रार्थी जी अपनी पहाड़ी भाषा के प्रबल समर्थक थे जब कभी श्री नारायण चन्द पराशर, एम. पी. उनके पास आते तो इस विषय पर रात-रात तक चर्चा करते। आज हिमाचल प्रदेश में हजारों पुस्तकें अपनी पहाड़ी भाषा में छप कर पाठकों तक आ गई हैं उन्हीं की प्रेरणा का परिणाम हैं।

वर्ष 1977 से उन्होंने राजनीति से सन्यास ले लिया और अपने लेखन पाठन के कार्य को जारी रखा। लेकिन उनका स्वास्थय उनके कार्य के आड़े आता रहा। उनकी यह खासियत थी कि वे जहां कहीं भी रहते खुश और हंसमुख रहते उनका हंसने व बात बात में बात को और रोचक बनाने का अपना ही अन्दाज था। वे विधान सभा में बैठक में कवि सम्मेलन, मुशायरे में कहीं भी होते अपनी ओजस्वी वाणी से उसमें जान डाल देते। गत वर्ष दुशहरे के अवसर पर मैं कुल्लू उनसे होस्पीटल में मिला था। वह उन दिनों

अस्वस्थ थे, लेकिन मन और दिमाग फिर भी उनके तरोताजा थे। मैं अपने बीबी बच्चों के साथ था। पहले वे मजाक करते रहे और हास्पीटल का वह कमरा उनके कहकहों से गूंज उठा। उसके बाद जब मैंने जाने के लिए ईजाजत मांगी तो उन्होंने 8 बजे रात फिर आने के लिए कहा। मैं फिर आठ बजे उनके पास उसी कमरे में हाजिर हुआ फिर बातों का सिलसिला शुरू हुआ बातचीत का विषय भाषा, संस्कृति और कला सम्बन्धी विकास हेतु किए जा रहे कार्यों तथा उन द्वारा लिखे जा रहे साहित्य पर ही था। उनके आखिरी दो-चार कार्य करने मैं अवश्य समझता था जो उस वक्त हो नहीं पाए, चलो अगर वक्त मिला तो घर बैठे जितना हो सकेगा करूंगा, क्योंकि यह कार्य मैं आवश्यक मानता हूं। रात के 11.30 बज चुके थे तो मैं उठने को हुआ लेकिन उनके मनोभाव से लगा कि उन्हें उठना अच्छा नहीं लगा, अभी शायद वह और कुछ अपनी वाणी से उडेलना चाहते थे, जब मैं उठ ही गया था तो उन्हें कहना पड़ा अच्छा जा रहे हो तो जाओ रमणीक में ठहरे हो न। इस वक्त तो ठीक है लेकिन अगले वर्ष तुम हमारे पास ठहरोगे। क्योंकि उन दिनों कुल्लू उनके मकान की मरम्मत हो रही थी। मुझे क्या पता था कि अगले वर्ष का वह दिन अब कभी भी नहीं आएगा। जब मैं उनके कमरे से बाहर आया तो अनायास ही मुझे भी काफी बुरा सा लगा। शिमला में उनकी हृदय विदारक मृत्यु का समाचार मिलने पर मुझे विश्वास ही नहीं हो पा रहा था कि कुल्लू जनमानस के मसीहा'' शेरे कुल्लू'' तथा साहित्य जगत के ''चान्द कुल्लवी'' कुल्लू को ही नहीं समस्त हिमाचल प्रदेश के साहित्यकारों, कलाकारों और संगीतज्ञों की महफिलों को विरान कर 11 दिसम्बर 1982 को सब को अलविदा कह गए हैं। प्रार्थी जी अब नहीं है केवल उनकी यादें ही बाकी हैं। हम सभी की उनको यही सच्ची श्रद्धांजली होगी कि हम उनके द्वारा चलाए और सुझाए गए कार्यों को सही रूप दे जिस से उनकी आत्मा को शान्ति मिले।

गांव व डाकखाना नगर
ज़िला कुल्लू, (हि०प्र०)

अज़ीम शायर, अज़ीम इनसान

-- शबाब ललित

कालीदास, तुलसी, टैगोर, इक़बाल, मेहरूम, जोश मलसियानी और मुनव्वर लखनवी को जन्म देने वाले इस मुकद्दस हिन्दोस्तान में एक अच्छे शायर का तसव्वर यक़ीनन एक अच्छे इनसान का तसव्वर रहा है। जनाब लाल चन्द प्रार्थी 'चान्द कुल्लवी' की ज़िन्दगी और शायरी भी इसी तसव्वर का अमली सबूत है। इन की शख्शियत को पुराने वक्तों की शराफ़त वज़ादारी खुश इखलाक़ी मिलन सारी, दोस्त नवाज़ी, हमदरदी, फराखदिली और सादगी ने एक बेपायां कशिस अता की थी। और इसे एक अज़ीम शायर की फितरी खूबियों के मुतवाज़न इम्तज़ाज ने और भी चार चांद लगा दिए। इनसान दोस्ती अपने अज़ीज़ों और चाहने वालों के काम आना, हर सूरत इनका दिल रखना, दोस्तों की कमज़ोरियों और कोताहियों की परदापोशी और कुशादादिली से उनकी मदद करना क़वाएद ओ ज़वानित की हदूद को फलांग कर भी मुसतहिक लोगों की दस्तगीरी करना, उनकी आली ज़रफ़ी और जुर्रतमंदी के ग़म्माज़ रहे और उनके चीदा ओसाफ, उनकी खुश मज़ाकी और खुश गुफतारी, ज़राफ़त और हाज़िर जवाबी शोखी और चुलबुलाहट के साथ ही उन को हकीमाना मतानत और पुरस्कार लब-ओ-लहजा, उनका तक़रीर करने का खूबसूरत अन्दाज और अवाम का नब्ज़ पर हाथ रखने की ज़हानत, यह सब बातें इन्हें अपने बेशतर सियासी हम असरों से मुमताज़ करती थीं।

अवाम में प्रार्थी साहिब का मक़बूलियत का यह आलम था कि जब उन्होंने पहली मरतबा आज़ाद उम्मीदवार के तौर पर पंजाब असेम्बली का चुनाव लड़ा तो कुल्लू उन दिनों ज़िला कांगड़ा की एक तहसील थी जो पंजाब का हिस्सा था, उस जमाने में कांगड़ा में काँग्रेस के उम्मीदवार को हरा कर असेम्बली का मेम्बर बनना एक नामुमकिन बात समझी जाती थी, लेकिन प्रार्थी साहिब वोह पहले आज़ाद उम्मीदवार थे जिन्होंने यह मोजजा कर दिखाया, अावाम ने हुक्मरान पार्टी के एक बाअसर और दौलतमन्द उम्मीदवार के मुक़ाबले में प्रार्थी साहिब पर एतिमाद का इज़हार किया। बाद में प्रताप सिंह कैरों जैसे शातिर और दूर अन्देश सियासतदान ने भी प्रार्थी साहिब की मक़बूलियत और उनके मक़ाम-ओ-मर्तबा को पहचाना। सन 1966 में जब कुल्लू दीगर पहाड़ी इलक़ों के हमराह हिमाचल में मदग़म हुआ तो डॉ० यशवन्त सिंह परमार वज़ीरे आला हिमाचल प्रदेश ने भी प्रार्थी साहिब की हर दिल अज़ीज़ी और उनकी मुदब्बराना सिफ़ात का

एतराफ करते हुए उन्हें बतौर एक सीनियर वजीर अपनी वज़ारत में शामिल कर लिया और वोह मुसलसल ग्यारह बरस तक वज़ारत में रहकर अवाम की खिदमत करते रहे।

प्रार्थी साहिब से मेरी दोस्ती का आगाज़ उस जमाने में हुआ जब वोह कुल्लू से एक हफ्त रोज़ा परचा "कुल्लू वैली" निकालते थे। उनकी मुदब्बराना सलाहियतों और ज़ोरे-क़लम का तो मैं तभी से कायल था, वोह अकसर अपने परचा में अशाअत के लिए मेरे कलाम के लिए इसरार करते रहते थे। शे'र ओ शायरी, मक़ाला नवीसी, मौसीकी रक़्स (लोक नाच व नाटी वगैरह), ड्रामा वगैरह में वोह बचपन ही से दिलचस्पी रखते थे। इस तरह स्टेज से उनका नाता लड़कपन के दिनों से जुड़ गया था। और इस तरह वोह अवाम के दिलों से बहुत क़रीब थे, अच्छी शायरी पढ़ने और सखुन फ़हमी के शौक़ ने उन्हें रफ़ता रफ़ता शे'र कहने की तरफ़ भी मायल किया और मुसलसल मश्क़ ओ मशाअला की बदौलत वोह बहुत जल्द पहाड़ी और उर्दू के एक बा-शऊर शायर की हैसीयत से उभर कर अवाम के सामने आए। अफ़सोस के उनको समाजी और सियासी मसरूफ़ीयात ने उन्हें इतनी फुर्सत न दी के वोह अपना कोई शायरी मजमुआ शाया करके कारईन तक पहुंचा सकते फिर भी अपनी लातादात मसरूफ़ीयात के बावजूद उन्होंने सैंकड़ों गज़लें कहीं, सैंकड़ों मुशायरे करवाए, हिमाचल और दूसरी रियासतों की सैंकड़ों अदबी महफिलों और मुशायरों की सदारत की, सैंकड़ों आलिमों और क़लमकारों की सरपरस्ती की। वोह बुनियादी तौर पर एक शायर और एक कलाकार थे, सियासी मसरूफियात और सरकारी फ़ायलों के अम्बार के दरमियान भी इनके अन्दर का शायर जिंदा व पाइन्दा सदाबहार और जवान रहा। जदीद शायरों के हल्क़ा में जनाब प्रार्थी ने 'चान्द कुल्लुवी' के नाम से एक मुनफ़रिद और मुमताज मक़ाम हासिल किया।

हिमाचल में प्रार्थी साहिब के दम-क़दम से उर्दू और पहाड़ी ज़ुबान व अदब ने क़ाबिले रशक फ़रोग़ पाया, भाषा विभाग की तशकील उनकी देख रेख में हुई और दस ग्यारह बरसों के उनके ज़माना वज़ारत में पहाड़ी ज़ुबान घुटनों के बल चलती हुई, एक मासूम बच्ची से एक मुकम्मिल निक सुक दोशीज़ा बनी जिसके हुस्त-ओ-शबाब से इल्म दोस्त और अदब नवाज़ हल्के मसहूर-ओ-शशदर रह गए। पहाड़ी भाषा के शायरों और अदीबों को खुद एतिमादी की। दौलत और अपने पांव पर खड़े होने का हौंसला प्रार्थी साहिब ही ने अता किया। सन् 1977 में जब वज़ारत से बाहिर आने पर भाषा विभाग उनसे छुटा तो पहाड़ी और उर्दू दोनों ज़ुबानें हकूमत की अदम तवज्जोही का शिकार होने लगीं। जो थोड़ी बहुत इमदाद और सरपरस्ती इन ज़ुबानों को बाद में मिली भी वोह उस वक्त के बेदार मगज़ और आली ज़र्फ़ डायरेक्टर भाषा विभाग सुरेन्द्र नाथ वर्मा साहिब के दम कदम से मिली या हिमाचल के उर्दू-दोस्त गवर्नर नवाब अमीनुद्दीन अहमद खां की बदौलत।

हिन्दी की ताज़ीम प्रार्थी साहिब मां की हैसियत से करते थे क्योंकि यह हमारी क़ौमी ज़ुबान है और हमारे मुक़द्दस ग्रन्थों की भाषा संस्कृत से क़रीबतर है। उनकी मशहूर तारीखी तसनीफ़ 'कुलूत देश की कहानी' हिन्दी ही में शाया हुई। उनकी अदीम-उल-फ़ुर्सती ने उन्हें अपनी पहाड़ी और उर्दू शायरी की कोई किताब शाया करने के लिए वक़्त ही नहीं दिया, लेकिन पहाड़ी ज़ुबान से प्रार्थी जी के प्यार का जवाज़ मुख़्तालिफ़ था, खाह यह प्यार इनके हरीफ़ों की नज़र में सियासी मसलेहत और नारेबाज़ी ही ठहरा हो लेकिन प्रार्थी साहिब की नज़र में जो भाषा हमें मां के दूध के साथ अता होती है और इन्सान के ज़ुबान-ओ-लब से उस वक़्त अदा होती है जब वोह पहली बार बच्चे की हैसीयत में बोलना सीखता है, वोह भाषा सबसे मुक़द्दस और मोहतरिम है। अगर इन्सान उसके तेईं वफ़ादार नहीं और उस मादरी भाषा के प्यार से मुनकिर है तो वोह अपने वतन की किसी भी शैय से मुहब्बत नहीं कर सकता। कुल्लू से ३० अप्रैल, सन् १९७८ ई० को लिखे गए अपने एक खत में प्रार्थी साहिब मुझे लिखते हैं, "कई दिनों से सोच रहा था आपको लिखूं, दरीं हालात मेरी तरफ़ से खामोशी के लिए वजह जवाज़ मौजूद है—आपने अपनी खामोशी को नई तखलीक़ इरसाल करके तोड़ दिया है, खुदा करे हम दूर रहते हुए भी नजदीक रहें। नई तसनीफ़ (भागसू दे नौ नोटरीं) पर, जो पहाड़ी में है और जिसका मुस्तक़बिल अब तक़रीबन मखदूश हो चुका है मैं आपको मुबारिकबाद देता हूं—इसलिए खास तौर पर के आपने अपने पहाड़ी होने का दावा बज़ोरे क़लम तसलीम करवा लिया है। इसमें आपका अन्दाजे बयां ज़ुबान की बरजस्तगी हलावत और बुनियादी पहाड़ी रंग क़ौस-ए-कज़ह बनकर उभरते नज़र आते हैं—अल्लाह करे ज़ोरे क़लम और ज्यादा—उम्मीद है उर्दू की मानिन्द आप पहाड़ी को भी अपनी ज़रखेज़िए तबा से मालामाल करते रहेंगे—अफ़सोस इस अमर का है के पहाड़ी अदीबों और साहित्यकारों को अब सरकार की तरफ़ से अदीब और साहित्यकार तसलीम नहीं किया जा रहा और सारी तवज्जोह हिन्दी की जानिब मबज़ूल कर दी गई है। हाले के हिमाचल के हिन्दी शो'रा को भी शो'रा नहीं माना जा रहा—मालूम नहीं जिन लोगों ने पहाडी में इतना जबरदस्त बुनियादी काम किया है वो कब तक खामोशी से यह मज़ाक सहते रहेंगे। खैर आगे-आगे देखिए होता है क्या—।"

पहाड़ी भाषा के लिए प्रार्थी साहिब के दिल में मुहब्बत का जो अथाह जज्बा मौजज़न था और जो जबरदस्त मदद उनके दिल में था वो मजकूश बाला सतूर से रौशन है। सिर्फ पहाड़ी ज़ुबान ही से क्या, इन्हें पहाड़ की हर शैय से गहरा प्यार था। पहाड़ी लोक कथाएं, पहाड़ी लोक गीत, पहाड़ी लोक नाच, पहाड़ी मुसव्वरी, पहाड़ी मेले, पहाड़ी कल्चर और रवायात सबकी बक़ा ओ फ़रोग़ को उन्होंने अपना ईमान समझा। कांगड़ा स्कूल ऑफ़ पेंटिंग, पहाड़ के तारीखी मन्दिरों, इबादतगाहों, इमारात और मूर्तियों के बक़ा-ओ-तहफ़ुज़ा की जानिब भी उनकी तवज्जोह रही। यही नहीं बल्के क़दीम अलूम-ओ-फ़नून आयुर्वेद, तिब्ब, ज्योतिष, पहाड़ी आर्ट सभी की उन्होंने सरपरस्ती की। बतौर

बजीरे सेहते आमा उन्होंने आयुर्वेद के शो'बा को भी तरक्की देने की हर मुमकिन कोशिश की।

आइए इस अज़ीम इनसान और अज़ीम शायर की उर्दू तख़लीक़ात का एक सरसरी जायज़ा लें जो उर्दू अदब के गनजीनें में एक बेश बहा इज़ाफ़ा हैं। जनाब लाल चन्द प्रार्थी 'चान्द कुल्लूवो' ने बेशतर ग़ज़लें ही कही हैं। उनकी पचासों ग़ज़लें मेरी नज़र से गुज़री हैं। हिन्दोस्तान के मेयारी उर्दू रसायल 'तहरीक' 'शायर' 'बीसवीं सदी' वग़ैरह में इनका कलाम शाया होता रहा है। रोज़ मर्रा की गुफ़तगू में भी प्रार्थी साहिब निहायत सलीस और शुस्ता उर्दू बोलते थे। इनके लब-ओ लहजा की वही नरमी और हलावत इनके क़लाम की इम्तियाज़ी खसूसियत है। इसमें उनकी फ़ितरी शौखी और चुलबुलाहट को भो दखल रहा है ओर इन खसूसियत ने इनके अशआर को जादू असर बना दिया है शे'र की खूबी यह है कि इधर शायर की जुबान से अदा हो और उधर सुनने वाले के दिल में उतर जाए। इस तरह की दिलकश और पुरतासीर अशार उनके कलाम में जगह जगह मिलते हैं मसलन :—

तेरे इस चांद से माथे पे पसीना कैसा ?
अजनबी कोई तेरे ख्वाब में आया तो नहीं ?

पानी किसी हसीं की नज़र से गुज़ार दो।
यह भी है इक तरीका कशीदे शराब का ।।

दिल वोह शीशा के देखें तो नजर लगती है।
मैं छुपाता ही रहा तूने मगर देख लिया ।।

संगे लरज़ां है या जवानी है।
उम्रे रफ्ता की मेहरबानी है ।।

उम्रे रफ्ता की याद और मौसमे शबाब के रंगीन वाक़यात ओ सानेहात चाँद साहिब की जिन्दगी का अनमोल सरमाया रहे हैं। हुस्न परस्ती और शे'र गोई का चोली दामन का साथ रहा है। शायर की आंख हुस्न शनासी होती है और उसका ज़हन जमालियात का वजदान रखता है। फ़ितरत का हुस्न हो या इन्सानी चेहरों का खुदा के नूरानी जलवों का या इनसानी सीरत ओकिरदार का शायर उस हुस्न को महसूस करता और इसे शे'र के हसीन पैकर में ढाल देता है। इस तरह एहसासे हुस्न से शायर को कैफ़ ओ सरूर मिलता है। वोह अपने क़ारी को भी इसमें हिस्सादार बना लेता है। चांद कुल्लुवी ने जिन्दगी को जीने की तरह जिया इसी लिए जवानी के रंगीन दिनों और पुरनिशात लम्हों की याद उनके अशआर में जावजा करवटें लेती दिखाई देती है।

क्या कहें उमर को माज़ी से तकाज़ा कैसा ! उन दिनों जिन्दा थे हम और खता करते थे। खाई हैं सब ने लग्ज़गीं रौह हयात में। कोई भला नहीं है तो किस को बुरा कहें। "ऐ साकिनाने कूचा दिलदार देखना"। मक्कतल में आज है सरे फेहरिस्त किस का नाम ? महफिल में इक निगाह ने औकात खोल दी। कुछ लोग खास-खास थे कुछ लोग आम-आम

इश्क एक आलमगीर ज़ज्बा है। 'चांद' साहब कि कलाम में जहां इश्के-मुहाज़ी के किस्से और रंगीनी शबाब के अफसाने हैं। वही उन के साथ-साथ इश्के हकीकी के रमूज़ जान व हयान के इसरार रूह और जिस्म के तालुक की असल हकीकत इन्सान और खालिक के वाहमी अज़ली अब्दी रिश्ते का उन का तसॅव्वर और हयात व मौत के फिलसफे का कामिल वजरान भी कारी को चौंकाते हैं। कुछ अशआर इन मूज़ामीन पर देखिए :—

ऐ शरफे जिस्म व जान वो दिल तुझे न आएगा यकीन।
मैं जान हूं वह जान जिसका अकस्र वापिसीं नहीं ।।

मिल गये संगम पर आकर और समुन्दर हो गये।
एक दरया रूह का था एक दरया जिस्म का ।।

जो सो रहा है लिपट कर अना के दामन से।
जगा के देख वह मेरा शऊर है बाबा ।।

फना से दूर सितारों की वादियों से हमें।
वह कौन है जो बुलाता दिखाई देता है ।।

किसी भी सम्मत से राहे फिरार क्या ढूढें।
हिसारे ज़ात की दीवार गोल है यारो ।।

इसी नूह के बीसओं शआर जो फिलसफाये जिन्दगी की तरजमानी कहते है उनकी गज़लों में जा-बजा मौजूद हैं। लेकिन चांद साहब ने जो भी बात कही है जदीद लहजे में कही है। उर्दू गज़ल की रवायात का एहतराम करते हुये उन्होंने जदीद रुजहानात और नए शेरी असालीव को भी नजर अन्दाज नहीं किया। उनके कलाम को खायती कलाम नहीं कहा जा सकता। उन्होंने अपने अशआर में तसलीम किया है कि :—

"नये शऊर के तपते हुये अलाओ में। हर एक जिस्म पिघलता दिखाई देता है।"

और इस दावे की तसरीक में उन के अशआर में नये इस्तआरों और अलादम का इस्तेमाल माजूदा दौरे की नाआसूदगी और इखलाक़ी कदरों के ज़वाल का मात्तम अकसर व वेशतर दिखाई देता है। मसलन् ये इशआर :—

यह कैसी भीड़ है वे चहरगी की नगरी में।
खुद अपना चहरा ही अपना नहीं लगे हैं मुझे ।।
एक नशतर हैं कह चुभता है हर इक सांस के साथ।
कोई जिर्राह रगेजां में समाया तो नहो ।।

नये दौर में भाई चोर और मुहब्बत का फुकदान, इन्सान की जंग पसन्दी, समाजी नावरावरी और गरीबों का इस्तहसाल और इन्सानी तहजोव को वरवादी के आसार उन की रूह को डसते रहे और उन के मुतल्लिक अपनी तशवीश और झुंझलाहट का इजहार चांद साहब ने अपने इशआर के ज़रीये किया, मुलाहाज़ हो :—

गर ज़मी वालों को आसूदेगा मंजूर नहीं, आसमां से कोई दुमदार सितारा मांगे।
बज़्म हस्ती के सिफीने को डुवोने के लिए, बहरे जुलमाते फना से कोइ धारा मांगे।।
खुशी की बात मुकद्दर से दूर है बाबा, कहो निज़ाम में कोई फतूर हैं बाबा।
भरी बहार में बैठे हैं हम अलम-बकनार ,ज़रा बता कि यह किस का कसूर हैं बावा ।।
शोले शवनम से हमकलाम हैं आज, लोग कहते हैं रुत सुहानो है।

11 दिसम्बर 1982 ई० को एक मनहूस घड़ी ने उस जानजानां को हम से छीन लिया, जो एक अच्छा शायर था और एक सच्चा इन्सान, जो यारों का यार था और दुश्मनों का दाना दुश्मन, जो सोलहा साल तक कई तरह के जिसमानी रोगों का तख्ता-ए-मशक बना रहा लेकिन अपनी मसलसल अलालत के बावजूद हकूमत के इन्तजामिया मुआमलात निपटाने में चाक व चोवन्द रहा और अवाम की तकालीफ के अज़ाला के लिये हर घड़ी कमरवस्ता और वर-सरे-अमल। उसको बागो-बहार तबीयत की शिगुफ्तगी कामयाबी और शिकस्त में यकसां बरकरार रही। रज़म व बज़म में वह एक सा दम-खम रखता था। वजारत छोड़ने के बाद भी जिस की जिन्दा दिली और ऊलोल-अज्जमी में फर्क नहीं आया। जो मौत से हिरासां नहीं था बल्कि मौत का ज़िकर अपने अशआर में जिन्दा दिली, शोखी और बे बाकी से करता था। इन अशआर को देखिये :—

"जिन्दगी तेरा तमाशा देखने आये थे हम,
खुद तमाशा बन गये हैं आज तेरे सामने।
रू-बरू हो के भी अब तुझ से यहदूरी कैसी,
इस तफावुत का सबब सांस का पर्दा तो नहीं।

टूटने से पेशतर 'चांद' को यह इलम है,
क्या इरादा रूह का क्या नतीजा जिस्म का ।
हर साल जन्म दिन का उजाला हुग्रा किया.,
ग्राती रही कुछ ग्रौर क़रीब जिन्दगी को शाम।
छुपा-छुपा कि मैं रखूं इसे कहां ऐ 'चांद',
मनाहे जिन्दगी तेरे हजूर है बाबा ।

और विल आखिर 'चाँद' ने गुजस्ता 11 दिसम्बर को अपने इस शेयर के मुताबिक मताहे जिन्दगी बाबा के हजूर में पेश कर दी । जान जां आफरीं के सुपर्द कर दी । आज हिमाचल में उर्दू और अहले-उर्दू खुद को यतीम महसूस करते हैं। वही एक शखशीयत थी जिस ने उर्दू के अहले-कलम को हिमाचल में मुनज्ज़म और मुतहिद रखा । जो पहाड़ी अदीबों की चारा साज़ मुहिसन और मुरब्बो थी और सभी जवानों के अहले कलम जिस को दिल से प्यार करते थे ।

इस जानसोज हकीकत के तसॅव्वर से दिल भर आता है कि हिमाचली अदीबों के इस मुहिसन का उर्दू कलाम और पहाड़ी नज़में जो जगह-जगह बिखरी पड़ी हैं शाये हो कर अवाम तक नहीं पहुंच सकी हैं। अगर भाषा विभाग और हिमाचल भाषा अकादमी अपने बानी और मॅरव्वी इस अज़ीम कलम कार और सियास्तदान के उर्दू और पहाड़ी कलाम को यकजा कर के किताबी सूरत में शाये कर दे तो यह इस अजीम हस्ती के तेईं एक मनासिन खिराजे यक्कीदत होगा । और हम सभी अहले-कलम पर एक एहसान। आं जहानी प्रार्थी साहिब के नाम पर भाषा विभाग अगर कोई लाईब्रेरी ही कायम कर दे या कम-अज़-कम हिमाचल के राईटर्ज होम का नाम ही उन के नाम पर रख दे तो यह भी हक शनीसा होगी ।

इस मिकाले की आखरी सतूर सुर्पदे कलम करते हुये न जाने क्यों आज जनाब कुल्लवी का एक सादा लेकिन पुरतासीर शेअर मेरी ज़बान पर बार-बार आ कर मेरी आँखों को बे-अखत्यार नम किये देता है। यह शेअर भी है एक पेशगोई भी और एक हकीकते हाल भी :—

हम न होगे तो चमन होगा उदास,
बूये गुल हाथ मलेगी, सुन लो ॥

क्षेत्रीय प्रचार ग्रधिकारी, शिमला-३

लाल चन्द प्रार्थी–एक जीवन्त व्यक्तित्व

– डॉ० बंशी राम शर्मा

प्रार्थी जी का व्यक्तित्व बहुमुखी था। वे प्रतिबद्ध प्रकार के व्यक्ति थे। मात्र जीने के लिए कार्य करना उनका स्वभाव नहीं था बल्कि वे कुछ कर गुजरने के लिए लालायित रहते थे। अपनी संस्कृति तथा भाषा के लिए उन्हें असीम मोह था। जब वे मन्त्री नहीं रहे तो उन्हें इस बात का पश्चाताप था कि उनकी योजनाएं कार्यान्वित नहीं हुई। पहाड़ी भाषा के विकास के लिए उन्होंने हिमाचल कला-संस्कृति-भाषा अकादमी के अध्यक्ष के रुप में सभी बोलियों की प्रवेशिकाएं लिखने की योजना बनाई थी। कुल्लुई का शब्दकोष बनाने का उनका बड़ा स्वप्न था और उसके लिए उन्होंने हजारों शब्द इकट्ठे किए थे। आयुर्वेद के क्षेत्र में वे उल्लेखनीय कार्य करने की धुन में रहते थे। अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन के अध्यक्ष के रुप में उन्होंने आयुर्वेद पर एक वृहद् ग्रन्थ तैयार करने की योजना बनाई थी और इस ग्रन्थ के सम्पादन में इन पंक्तियों के लेखक को भी सम्मिलित करने का सुझाव दिया था और दो कुलियों के द्वारा आयुर्वैदिक सम्मेलन पत्रिका की पुरानी प्रतियां उपयुक्त सामग्री के चयन हेतु मेरे पास भेज दी थी परन्तु बाद में यह कार्य भी अधूरा रहा। उनके अध्यक्ष पद के दौरान शिमला में एक विशाल आयुर्वैदिक सम्मेलन हुआ और इस अवसर पर प्रकाशित स्मारिका में हिमाचल प्रदेश की प्राचीन प्लास्टिक सर्जरी विद्या के सम्बन्ध में एक खोजपूर्ण लेख लिखा था। कवि सम्मेलनों व लेखक गोष्ठियों में वे अस्वस्थ होते हुए भी जिस प्रकार जम कर बैठते थे उससे उनकी प्रतिबद्धता के प्रति श्रद्धा उत्पन्न होती है। अनेक बार उनके इस प्रकार के व्यवहार से शीघ्र उठ कर जाने की आदत वाले व्यक्तियों को संकोचवश असुविधा हो जाती थी। अपने विभागों के अधिकारियों व कर्मचारियों की आलोचना के प्रति रक्षा करना तथा उन्हें प्रोत्साहित करना उनके स्वभाव का बड़ा गुण था। शिकायत प्राप्त होने पर भी वे मुस्कराते हुए कह देते थे, "यह बात मेरे जेहन में है, मैं इसकी खुद छानबीन करुंगा, आप निश्चिन्त रहें।" अकादमी के कार्यालय परीमहल में वे सप्ताह में एक बार आते थे और घण्टों वहां बैठ कर संस्कृति व भाषा के क्षेत्र में किए जा रहे कार्य के प्रति रुचिपूर्ण चर्चा करते थे। अकादमी की बैठकों में साहित्यिक वातावरण रहता था और उनके ठहाकों से कमरा गूंजता था। अस्वस्थ रहते हुए भी वे कभी मायूस नहीं होते थे। बात बात पर उन्मुक्त ठहाका

लगाना उन के स्वभाव का विशेष गुण था। उनकी इस जिन्दादिली के कारण उनकी महफिल हमेशा गर्म रहती थी।

वे हिमाचल की भूमि से असीम प्यार रखते थे। प्रथम नवम्बर 1966 को हिमाचल में पंजाब के कुछ क्षेत्र मिलाए गए। अठारह मार्च 1967 को विधान सभा की बैठक अस्थायी अध्यक्ष श्री गुमान सिंह चौहान की अध्यक्षता में हुई। इसमें श्री चौहान ने कहा—"माननीय सदस्यगण आज हिमाचल प्रदेश के इतिहास में एक महत्वपूर्ण अध्याय का आरम्भ हम कर रहे हैं। पुराने हिमाचल प्रदेश और नए हिमाचल प्रदेश की जनता द्वारा चुने हुए मैम्बरों का आज यह मिलन और यहां पर एकत्रित होना, यह हिमाचल प्रदेश के राजनैतिक, हिमाचल प्रदेश के आर्थिक और सामाजिक इतिहास में एक नया अध्याय हम जोड रहे हैं। मुझे पूर्ण आशा है कि इस सदन के अन्दर और इस सदन के बाहर हम सद्भावना और आपसी सहयोग के साथ हिमाचल प्रदेश की परम्पराओं और मर्यादाओं को सुरक्षित रखते हुए हिमाचल प्रदेश को और समृद्ध बनाने के लिए प्रयत्नशील होंगे।" जिन परम्पराओं और मर्यादाओं की रक्षा का आह्वान अस्थायी अध्यक्ष महोदय ने किया उनकी रक्षा के लिए प्रार्थी जी ने बाद का सारा समय लगा दिया। वे हिमाचल के व्यक्तित्व के लिए पहाड़ी भाषा और संस्कृति को रीढ़ की हड्डी मानते थे। उनका कथन था कि हिमाचल प्रदेश का निर्माण ही इन दो बातों के दृष्टिगत हुआ है। प्रदेश के दो बड़े नेता डॉ. यशवन्त सिंह परमार तथा श्री लाल चन्द प्रार्थी इस सम्बन्ध में एक ही विचार धारा के थे, यही कारण है कि जब भी हिमाचल के हितों की बात सामने आई, उन्होंने अपने स्पष्ट चिन्तन को मुखरित किया। 18 मार्च 1967 को 54 निर्वाचित तथा तीन मनोनीत सदस्यों को शपथ दिलाई गई। सूची में श्री प्रार्थी जी का नाम तीसरे स्थान पर था तथा केवल 'लालचन्द' लिखा हुआ था।

20 मार्च, 1967 को स्वास्थ्य मन्त्री के रूप में उन्होंने श्री देसराज महाजन के अध्यक्ष पद पर चुने जाने के बाद सदन में प्रथम भाषण दिया। उन्होंने अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा—"अध्यक्ष महोदय, मैं आपको यह पद ग्रहण करने पर बधाई देने के लिए तो खड़ा हुआ ही हूं लेकिन कुछ ऐसी बातें भी इस सदन में आई हैं जो आनी नहीं चाहिए थीं। हकीकत यह है कि रिवायत यों है और होती है पर पार्टी के लीडर साहिबान जो बधाई देते हैं वह पार्टी की ओर से तसव्वर होती है और हमारा यही ख्याल था कि यही कन्वैन्शन चलेगी लेकिन बहरहाल वह कन्वैन्शन नहीं रही और इस में कोई बुरी बात भी नहीं है कि कोई अपनी तरफ और पार्टी की तरफ से कुछ कहे तो कोई बुरी बात नहीं अच्छी बात है लेकिन आज की यह कार्यवाही बधाई तक ही सीमित रहनी चाहिए थी।" उन्होंने आगे कहा—"स्पीकर साहब, मैं तो यों कहूंगा और एक शेर अर्ज़ करुंगा कि:—

हम तो अकेले ही चले थे जानिबे मंज़िल,
लेकिन लोग सब आते गए और कारवां बनता गया

तो यह कारवां बनता गया। अध्यक्ष महोदय, आपका पद एक सब से बड़ा पद है और इसमें कोई शक नहीं कि आज आपकी ज़िम्मेदारी ज्यादा बड़ी है। जो पीछे विधानसभा थी वह इसका एक छोटा सा रुप थी लेकिन अब जो पंजाब के हिस्से इसमें शामिल हुए हैं हिमाचल प्रदेश में आकर के और एक नया हिमाचल प्रदेश हमारे सामने आया है और इस नए हिमाचल की जो पहली विधानसभा बैठी है और उस विधान-सभा के स्पीकर हैं तो यह दूसरा पहलू है इस तसवीर का। तो जहां तक हमारा इलाका विशाल हुआ है हिमाचल विशाल हुआ है वहां हम यह समझते हैं कि आपकी शान में भी इज़ाफ़ा हुआ है और आपकी ज़िम्मेदारी में भी इज़ाफ़ा हुआ है।"

१८ जुलाई, १९६७ को बजट पर बहस का उत्तर देते हुए उन्होंने हिमाचल की समस्याओं की ओर संकेत करते हुए कहा था—'दो चार मैम्बरान इधर से उधर मिल गए हैं और कम से कम एक मैम्बर तो ऐसे हैं जिनका मसबोलेन आज भी मुतहदा पंजाब है और पंजाब को विशाल करने का आज भी उनका प्रोग्राम है। तो स्पीकर साहब जब ऐसे मैम्बर उधर हैं तो वे क्या काम करेंगे, वे तो विशाल पंजाब या महा पंजाब बनाने की कोशिश करेंगे तो यह बिल्कुल सीधी सी चीज़ है और वे कर सकते हैं और करेंगे। पिछले दो चार महीनों में अखबारों में ज़िला कांगड़ा को जहन्नुम और दोजख की भट्टी कहा जा रहा है और ज़िला कांगड़ा को उछाला जा रहा है।......और ऊना के अम्ब के इलाके में एक बाकायदा तहरीक चलाई गई है, दस्तखती मोहिम, कि हिमाचल में खाने को नहीं मिलता है' और पंजाब में खाने को मिलता है और यह भी बातें देखने में आई हैं जिन से यह साफ होता है कि कुछ बाकायदा लोग इधर से उधर भेजे गए हैं जो लोगों में आहिस्ता आहिस्ता हैजान पैदा करें और कुछ कुल्लू में लोग आए हैं टूरिस्ट बन कर और यह कहते हैं कि भाई हमने यहां रह कर क्या लेना है, चलो वापिस। तो ये सब चीज़ें 'खुली चलाई जा रही हैं और इनसे किसी को इनकार नहीं हो सकता।

हमें तो महज़ अफसोस इस बात का है कि इल्ज़ाम हम पर आता है कि हम सहयोग नहीं मांगते।' एक वक्ता ने अपने भाषण में उनकी दाढ़ी का जिक्र भी किया था जिसका उत्तर उन्होंने इस प्रकार दिया—"अब मैं अपनी दाढ़ी की तरफ आ रहा हूं। मेरे एक भाई ने दाढ़ी का ज़िक्र किया था यहां यह दाढ़ी तो स्पीकर साहब, ऋषियों की देन है और वे ऋषि जिनकी हम और मेरे कामरेड भाई भी औलाद हैं। इस दाढ़ी से वाबस्ता तो बड़ी बड़ी ऊंची और महान् ख याल हैं:—

दीदाए दिल को नूर बख्शा है,
जिन्दगी को ग़रूर बख्शा है,
नाज़ है मुझ को अपनी दाढ़ी पर
जिसने मुझ को शऊर बख्शा है

और यह शऊर बख़्शने वाली दाढ़ी है । गालिबन बात शुरू हो गई थी दाढ़ी की तो मैंने ज़िक्र किया । कहां खुराक का मसला था और कहां हमें दाढ़ी में उलझा दिया और अगर मैं उल्टा मूंछों में उलझा दूं तो क्या बनेगा ।"

20 जुलाई 1967 को भाषण करते हुए एक ऐसी घटना घटी जिससे प्रार्थी जी के मजाकियापन और हाज़िर-जवाबी का परिचय मिलता है । उन्होंने कहा—"तो अध्यक्ष महोदय, मैं इतेफाक करता हूं श्री जय विहारी जी की बात से··· ·····' ऐसा सुनना था कि श्री जय बिहारी लाल खाची, जिनसे उनकी तर्कपूर्ण नोक झोंक चलती थी, बोले —'जनाब, मेरा नाम जय बिहारी लाल है, जय बिहारी नहीं ।' उन्होंने एकदम उत्तर दिया—'मुआफ कीजिए, मैं तो अब नहीं कहूंगा लेकिन मेरे माननोय सदस्य ......ने तो आपको खाची लाल कह दिया था ।' सदन में इन शब्दों से वातावरण झूम उठा ।

22 अप्रैल 1971 के दिन बजट पर बहस का उत्तर देते हुए श्री प्रार्थी जी ने राजस्व मन्त्री के रूप में जो भाषण दिया था वह उनके व्यक्तित्व का संकेत देता ।' उन्होंने कहा था— 'हमारे अपोज़ीशन को जिन्दा रहना चाहिए फॉर दि सेक आफ स्मूथ रनिंग आफ डेमोक्रेसी । जब तक अपोज़ीशन ठीक नहीं चलती है, डमोक्रेसी अच्छी तरह से जनाब नहीं चल सकती' । यह भी मैं बात इस लिए नहीं कह रहा हूं कि उनको पिच करुं बल्कि यह मोरेल एस्टेबिलिश होना चाहिए ताकि अपोज़ीशन ज़िन्दा रहे, खूब मजबूत रहे और उनसे हम भी रोशनी लें, 'क्योंकि रोशनी मिलती है ।' उन्होंने आगे कहा—'मैं तो सिर्फ एक बात अर्ज़ करुंगा और वह जो फाज़ल दोस्त खाची जी हैं उनकी तकरीर बड़ी दिलचस्प होती है । मैं बड़ा पसन्द करता हूं । सभी उनकी प्रूडेंसी की, उनके ख्यालात की तारीफ करते हैं । इसमें कोई शक नहीं है और इस दफा उनकी तकरीर शुरू हुई रिट्रीट से । एक बात आ गई इनके ख्याल में क्योंकि इतेफाक से हमारी महबूबा रहनुमां श्री मति इन्द्रा गांधी शिमला में आ गईं और रिट्रीट में ठहरी हैं तो अलफाज़ की हेरा फेरी से उस रिट्रीट का ऐसा नकशा बान्धा कि अब वह सोशलिज्म में रिट्रीट करेंगी, अब यह मास्को से रिट्रीट करेंगी या जो भी जिस तरह से ही रिट्रीट करेंगी ········ लेकिन जो रिट्रीट लफ्ज़ है, एक तो लफ्ज़ महज़ रिट्रीट इटसेल्फ है जिसका मतलब होता है वापिसी और एक होता है रिट्रीट जिसके माने होते हैं To treat them again ········ अध्यक्ष महोदय, हिन्दी हमारे सामने आती है, पण्डित नेहरू जब थक गए हिन्दोस्तान में काम करने के बाद शुरू में तो वह पहली बार 1942 में कुल्लू आए और 10-15 दिन कुल्लू में रहे । मेरे दिल में एक ठीक धारणा है कि यह देवताओं का देश है और वह यहां रह जाने से या अनजाने से उसके बाद वह ताकत वहां मिली जब वह यहां से वापिस गए तो उन्होंने क्विट इण्डिया का नारा लगाया और 9 अगस्त को वह ताकत लेकर हिन्दोस्तान को आज़ाद कराया और उसके बाद जब फिर थकावट महसूस की तो 1958 में फिर आए और फिर कुल्लू में रहे 1960 में फिर यहां रहे ।.........इससे ज्यादा

खुशकिस्मती और क्या हो सकती है हिमाचल प्रदेश की कि हिन्दोस्तान के नेता जिन्होंने हिन्दुस्तान की काया पलट की और इन्कलाब लाए चाहे वह पं. नेहरू हों, चाहे इन्दिरा गांधी हों, जब जब आराम की जरूरत पड़ती है हिन्दोस्तान को, दुबारा दुरूस्त रास्ते पर लाने की जरूरत पड़ती है, इन रीएक्शनरी फोरसिज़ को ट्रीट करने की जरूरत पड़ती है तो हिमाचल प्रदेश की देवभूमि में आकर रैस्ट लेते हैं, आराम करते हैं और यहां देवताओं की ताकत हासिल करते हैं ·········इस पर अध्यक्ष महोदय मेरे से एक शेर बन गया ·········

जो ठंढे हो कर लेटे है वह हीट की बाते करते हैं।
जो डिफीट के ज़ख्मों को भर न सके ॥
वह रिट्रीर की बातें करते हैं।

गालिब ने कहा है :—

गालिब हमें न छेड़ वे जोशे शौक से बैठे हैं।
हम तहैया ये तूफां किए बैठे हैं ॥

ऐसी अनेक घटनाएं उनके राजनैतिक जीवन से उद्धत की जा सकती हैं जब उनकी हाज़िर जवाबी ने वातावरण को अचानक बदल कर रंगीन बना दिया। अनेक बीमारियों से ग्रस्त रहने के वावजूद भी कभी उनके चेहरे पर उदासी नहीं आती थी और साहित्यकारों व कलाकारों की संगति में तो वे सब व्याधियां भूल जाते थे। जीवन में उनकी सफलता के रहस्य उनकी ज़िन्दादिली तथा ईश्वर के प्रति असीम आस्था थी। प्रत्येक साहित्यकार की तरह वे लम्बी योजनाएं बनाकर उन पर कार्य करने की कोशिश करते थे परन्तु ये योजनाएं आगे ही आगे बढ़ती जाती हैं जिनका पूरा किया जाना किसी भी व्यक्ति के लिए सम्भव नहीं होता। प्रार्थी जी के व्यक्तित्व को रुपायित करने के लिए हमारे पास शब्दों का अभाव रहेगा परन्तु उन्होंने जो छाप अपने लेखन, चिन्तन तथा मार्गदर्शन द्वारा हमारे मनों पर छोड़ी है, वह निश्चय ही म ुर, स्नेहिल तथा जीवन्त है।

-२६/४, ब्राकहर्स्ट
शिमला-१७१००२

कलाकारों को तलाशता कलापारखी

ओम सुजानपुरी

होली के पावन अवसर पर मैंने अपने हाथ से बनाए कुछ मिट्टी के खिलौने और हस्त चित्रों की प्रदर्शनी कुछ अर्जित करने की दृष्टि से लगा रखी थी। स्कूली शिक्षा पूरी करने के बाद निर्धन परिवार से सम्बन्ध रखने वाले मुझ बेरोज़गार के पास और कोई आजीविका का साधन भी न था। मेले में पधारे लोग मेरी इन कृतियों को देखते और चलते जाते। इस बीच अपने काफिले के साथ लम्बी दाढ़ी रखे एक वृद्ध पुरुष ने भी मेरी इस छोटी सी प्रदर्शनी के अहाते में प्रवेश किया और प्रत्येक कृति को विशेष रुचि से देखा और इनके बारे में मुझसे कई सवाल किये। ये वृद्ध पुरुष थे स्व० लाल चन्द प्रार्थी। वे उस समय हिमाचल सरकार में भाषा एंव संस्कृति मंत्री थे और हिमाचल अकादमी के अध्यक्ष भी। मेरे इन खिलौनों और चित्रों को देखकर तत्काल कहा था मैंने तो समझा था कि हिमाचल में केवल एक ही कलाकार है चन्दूलाल। परन्तु मुझे आज पता चल सका है कि काँगड़ा शैली की परम्परा को चलाए रखने में ऐसे युवा कला कार भी जुटे हैं। इनके इस कथन से ही मेरा उत्साह सौ गुणा बढ़ गया था। लेकिन मुझे क्या मालूम था कि एक कला पारखी ने मुझे कलाकार के रूप में हृदय से स्वीकार कर लिया है। वे मुझे हिमाचल अकादमी में कलाकार के रुप में काम कराने का आश्वासन देकर अपने साथ ही शिमला ले आए और मुझे कलाकार के तौर पर अकादमी में नियुक्त भी करवा दिया। यही नहीं मेले के अवसर पर उन्होंने मुझे पुरस्कृत भी किया और बाद तक समय समय पर मार्गदर्शन भी करते रहे। कला और कलाकरों के प्रति उस महान कला पारखी की अभिरूचि को भुलाया नहीं जा सकता।

हिमाचल कला-संस्कृति-भाषा अकादमी शिमला-२

गुलहाए अकीदत

-- कुंवर अभय राज सिंह 'शाद'

जिस कदर थी लाल चन्द जी प्रार्थी में खूबियां।
है कहां मुमकिन कि मुझ से हो सकें वो सब बयां॥

जिस के दम से बन गया रश्के इरम ये गुलसितां।
हो गया जन्नत नशी, हाय वो खुद ही बागवां॥

बेबहा जो लाल था, अफसोस हमने खो दिया।
ऐसा कोहेनूर, पैदा होगा कुल्लू में कहां॥

उनका प्यारा नाम मेरे होंठ पर आते ही ये।
ले रही है बोसा, मेरे नुत्क का मेरी जुबां॥

थी जबी उनकी हमेशा हो, शिकन न आशनां।
इक मुसलसल सा तबस्सुम उनके रूख पर था अयां॥

कहकहे थे गूंजते, उनके हमेशा बज्म में।
खूब थे शीरी सुखन, के खूब थे जादू बयां॥

फूल से झड़ते थे गोया, बात जब करते थे वो।
काबिले सद नाज थे वो शायरे शीरी बयां॥

कुल्लू के संगीत को बख्शी उन्होंने दिलकशी।
नाटियों की भी उन्हीं के दम से है रंगीनिया॥

वो विजारत के बुलन्द रूतवा पे भी होते हुए।
खन्दा पेशानी से मिलते थे हर इक से बेगुमां॥

ये हलीमी इन की सारी, ये मुहब्बत खुशदिली।
सब के सब ये हम नशीं थे उनकी अजमत के निशां॥

ये शिफा खाना, कला केन्द्र भी उनकी देन है।
वो न होते कालिजे कुल्लू भी फिर होता कहां॥

ता कयामत उनको भूलेंगे नहीं अहला-ए-वतन।
'शाद' कहते हैं इसी को तो हयात-ए-जाबिदां॥

कौखैं राहुआ प्रार्थी महारा

– इन्द्रदेव शर्मा शास्त्री

कौखैं राहुआ प्रार्थी महारा ।
कुल्लू घौरै रै सर्गा रा तारा ॥

गरीवा रा गाभरू नगरा हुआ ।
जुनो विथैथी वडा हुआ ॥
कुणोए वुझू थी ऐई कुल्लू वणाणा ।
कुल्लू धौरा रा भाग जगाणा ॥

ठारह करड़ू रा गूर सो महारा ।
कौखै राहुआ प्रार्थी महारा ॥
ऐई कुल्लू रै सर्गा रा तारा ।

सादै रौही आ इज्जत वणाई ।
सु:खै दु:खै रौ परुआहा नी डाही ॥
झेलदा रौहू आई ऐ खाई ।
हौसी खेलीआ जिन्दगी नभाई ।

रौंदा ढाऊए कुल्लू सारा
कौरवै राहुआ प्रार्थी महारा
ऐई कुल्लू रै सर्गा रा तारा

सवी री बुझी झरी दाह
सवी वै देआथी नेक सलाह
मेरा कुल्लू केरदै निकता शाह
प्रार्थी थो महारा पक्का व शाह

कौरवै हौला सौ प्यारा नियारा
कौरवै राहुआ प्रार्थी महारा
ऐई कुल्लू रै सर्गा रा तारा

स्कूल कौलज़ प्रार्थी ऐ वणाए
दाही दु:खी वै हस्पताल वणाए
सेऊ सड़का देश वणाए
चमचमांदं लट्टू बकाए

जुगा वं राहुआ कुल्लू रा सहारा
कौरखै राहुआ प्रार्थी महारा

शाबाश तेरी कारागजारी
कैंडी थी शोभली कलाकारी
ढौगा पाँदीए सड़का वणाई
कुल्लू घौरा वै जहाज़ा चलाई

वौणै वुटै सजाई धारा
कौरवै राहुआ प्रार्थी महारा
कुल्लू घौरै रै सर्गा रा तारा

हौडंणै फिरनै वै जगह वणाई
तीर्थं स्थानै री मशूहरी कराई
देऊ देवते न वशाहा ढाऊ
आपणा वौक्त शोभला नभाऊ

कौसी वै नी वोलू वरा फिआड़ा
कौख राहुआ प्रार्थी महारा
कुल्लू घौरा रा सर्गा रा तारा

सेऊएै रै वुटड़ू लाणै धियाए
कुल्लू घौरै रै भाग जगाए
ढवुए कमौणै रै ढंग वणाए
कारा-जीपा न हौंडदै लाए

कौम केरना रा थी ढंग नियारा
कौखे राहुआ प्रार्थी महारा
ऐई कुल्लू रै सर्गा रा तारा

सवी री बुझा थी रीझ खीज़
प्रार्थी थी महारी कुल्लू री चीज़
दिलै री वुझण वुझणू आला
नाँडै टाटै री शुणनू आला

सोमसी

कौमदा जाखणू सवी रा प्यारा
कौखै राहुआ प्रार्थी महारा ॥
ऐई कुल्लू रै सर्गा रा तारा।

कलाकेन्द्र याद बणाई।
रिति रिवाजे री निऊंण डाही ॥
निऊंण ढाई आपू तैं लाई।
सवी रै मनै री मना न डाही ॥

देऊआ देवी रा सौ प्यारा।
कौखै राहुआ प्रार्थी महारा ॥
कुल्लू घौरै रा सर्गा रा तारा।

देश वदेशा न पार्टी मंगाई।
कुल्लू दशहरै न धूम मचाई ॥
कुल्लू घौरै री इज्जत बणाई।
केवड़ी केरी ती तुम्ब बटाई ॥

रोंदा ढाऊ ढोल नगारा।
कौखै राहुआ प्रार्थी महारा ॥
ऐई कुल्लू रै सर्गा रा तारा।

चोलै टोपै कुल्लू नचाऊ।
ढोलै नगारै कुल्लू जगाऊ ॥
देश वदेशा न नां डाहू।
डाला रा चिड़ वी लेरे रुआऊ ॥

हटीआ नी ऐंदा प्रार्थी दवारा।
कौखै नौढा प्रार्थी महारा ॥
ऐई कुल्लू रै सर्गा रा तारा।

राग रंग शैहर बणाए।
ड्रामै तमाशै लौका न रिहाए ॥
जगह-जगह कलब वणाए।
प्रार्थी-प्रार्थी केरदै डाहे ॥

एक हौणा रा लाऊ थी नारा।
कौखै राहुआ प्रार्थी महारा ॥
ऐई कुल्लू रै सर्गा रा तारा।

हौसदी काखीए कौम वणाए।
सवी लोका न तमाशे रिहाए ।।
गरीव गूरव नोकरी लाए।
रोजगारी रै ढंग वणाए ॥

दसू आसा वै शोभला कनारा।
कौखै राहुआ प्रार्थी महारा ॥
कुल्लू घौरा रा सर्गा रा तारा।

जौखै कौखै धाक थी महारी।
हौआ थी महारो खड़ी कियाड़ी ॥
पूजाँ थी तिन्हाँ वै विन्दरा सारी।
तिन्हां लाईआ थी इज्जत महारी ॥

हर जगह पोड़ा थी फुलै री हारा।
कौखै राहुआ प्रार्थी महारा ॥
ऐई कुल्लू रै सर्गा रा तारा।

ऐंडै की शोभलै भाषण लाणै
दिलड़ू खोलीआ शुणदै डाणै डाहणै
एक-एक शब्द दिला न पाणै।
मिट्ठी बभानीए आपणै वणाणै ॥

किवै राहुआ हौला सौ लशकारा
कौखै नौठा प्रार्थी महारा ॥
कुल्लू घौरै रै सर्गा रा तारा।

आजादी री तेईए लड़ू थी खूब।
सन संतालो न लाई थी जूब ॥
ढालपुरा रा वुटा नशाण।
तेईवै हेरा स जाण नजाण ॥

इनकलावा रा लाऊ थी नारा।
प्रार्थी थी शेर कुल्लू रा महारा ॥
कौखै राहुआ प्रार्थी महारा।
कुल्लू घौरे रै सर्गा रा तारा ॥

राहुआ ऐई बगीचै रा माली।
प्रार्थी वाज़ी हुआ बगीचड़ू खाली ॥
रोंदी लागी कुल्लू री माटी।
हीणे हुए प्रार्थी घाटी ॥

गैला केरना रा थी ढंग नियारा।
कौखै राहुआ प्रार्थी महारा ॥
ऐई कुल्लू रै सर्गा रा तारा।

सब गैला केरी थी पुरी।
एक रौही थी मना न धुरी ॥
मनाली न लारज़ी सड़क बणाणी।
दोहरै पासै थी गड्डी चलाणी ॥

कूण देला मना रा भारा।
कौखै राहुआ प्रार्थी महारा ॥
कुल्लू घौरा रा सर्गा रा तारा।

इन्द्रै देवै रै ढ़णूई थोड़ी।
अर्ज मेरी स हौथड़ू जोड़ी ॥
जन्म तिन्हारा ऐई कुल्लू न लोड़ी।
तिन्हारी आत्मा वै शान्ति लोड़ी ॥

प्रार्थी होरा वै जै जै कारा।
प्रार्थी होरा वै जै जै कारा ॥

रा. मा. पा. दियार कुल्लू
हि. प्र.

पुस्तक समीक्षा

अगर शामिल न हो किस्सा हमारा...।

--तुलसी रमण

पुस्तक : कुलूत देश की कहानी
लेखक : स्व. लाल चन्द प्रार्थी
प्रकाशक : नील कमल प्रकाशन, कुल्लू-हि. प्र.

स्व. लाल चन्द प्रार्थी जी की बहुचर्चित पुस्तक 'कुलूत देश की कहानी' पर उनके मरणोपरान्त हिमाचल अकादमी द्वारा 'इतिहास परम्परा' विधा के अन्तर्गत पिछले दिनों 'हिमाचल साहित्य पुरस्कार (प्रथम)' प्रदान किया गया। वैसे भी प्रदेश की सांस्कृतिक गतिविधियों के दिग्दर्शक प्रार्थी जी की इस एक मात्र पुस्तक की ओर उनके स्वर्ग सिधारने के बाद इधर के सांस्कृतिक लेखन से अध्ययन और लेखन के स्तरों पर जुड़े लोगों का ध्यान आकर्षित होना स्वभाविक ही है। इस दृष्टि से उनकी इस पुस्तक की नये सिरे से चर्चा होनी ही चाहिए।

प्रार्थी जी के व्यक्तित्व का अक्स उनके इस कृतित्व में निसन्देह देखा जा सकता है। पुस्तक के प्रारम्भ में 'लेखक के उद्‌गार' के अन्तर्गत स्व. प्रार्थी जी का अपनी माटी और पारम्परिक संस्कृति के प्रति अगाध प्रेम का परिचय मिल जाता है। लोक जीवन और संस्कृति का आजीवन मंथन करने के पश्चात् उन्होंने इस पुस्तक में बहुविध लोक तत्वों को जुटाकर 'गागर में सागर' की उक्ति को चरितार्थ किया है। हिमालय से निकलती नदियों के पावन तटों पर अनेक ऋषि मुनियों के तप एवं त्याग को कहानी, आर्यो-अनार्यो, कोल-किरात-कनैत व खश आदि जातियों की कहानी, भृगु-भारद्वाज, व्यास-वशिष्ट, कात्यायन-कार्तिक, कपिल-कण्व व कणाद आदि मंत्र दृष्टाओं की कहानी वास्तव में महज़ कुलूत देश (कुल्लू)) की कहानी नहीं अपितु उस विस्तृत सप्त सिन्धु क्षेत्र की कहानी है जहां आदि सभ्यता के पनपने के अवशेष मिलते हैं। भारत के उत्तर में स्थित उस हिमावत की कहानी है जो केवल हामटा की चोटी नहीं बल्कि सम्पूर्ण हिमावत (हिमालय) है। समूची भारतीय सामासिक संस्कृति की आधारक कहानी है। विद्वान लेखक द्वारा इसे 'कुलूत देश कीकहानी' नाम देना अपनी माटी से विशेष लगाव का प्रकटीकरण ही है। युवा पीढ़ि को यह पुस्तक समर्पित करते हुए लेखक ने

जिस स्वाभिमान का संदेश दिया है सारी पुस्तक में उसी तेवर में अपनी गौरवमयी संस्कृति का उद्घोष हुआ है।

वक्रोक्तिमयी भाषा सजीव अभिव्यक्ति प्रदान करती है। अनेक पुस्तकों के उदाहरणों से आई नीरसता का निवारण उर्दू के सरस शेरों को प्रस्तुत करके चतुरता से किया गया है। आद्योपान्त निरन्तर रोचक प्रसंगों की श्रृंखला स्वरूप इस पुस्तक में कथा जैसी रोचकता बनी रहती है।

अपने स्वभाववश लेखक ने विषय से बाहर दखल करते हुए लोक भाषा के अनेक शब्दों के निर्वचन देते हुए उन शब्दों के अन्तरतम में निहित भावों की अभिव्यक्ति को स्पष्ट करते हुए शब्द व्युत्पत्ति को सामने रखने का प्रखर अनुमति द्वारा प्रयास किया है। लेकिन ऐसे कुछ अरमानों से सहमत नहीं हुआ जा सकता। विशेषतया लेखक ने जिस तरह क्षेत्र शब्द को खश जाति से जोड़ने का प्रयास किया है. 'बीफे री बीस' कहावत द्वारा आकाशीय विद्युत से इतर किसी (जल) विद्युत के ज्ञान की बात कही है और हिमावत का अभिप्राय हामटा की चोटी पर ही केन्द्रित करना चाहा है. ऐसे अनुमान अनुसंधात्मक दृष्टि के अनुकूल नहीं कहे जा सकते। ऐसे भी अनेक प्रसंग आते हैं जहां लेखक ने अपने मत को सुरक्षित रखते हुए अनुमान के आधार पर अनुसंधित्सुओं को नये रास्ते की ओर संकेत किये हैं। लेकिन इस सब के बावजूद अधिकांश संदर्भों में अकाट्य प्रमाण देकर नई बातों पर भी रोशनी डाली है।

इसी पुस्तक में लेखक ने जहां एक ओर जमदग्नि को सतयुग के अंत में तथा उसके पुत्र परशुराम को दूसरे युग में नेता माना है वहां रामायण काल को द्वापर तथा महाभारत काल को त्रेता युग भी स्वीकार किया है। युग विभाजन के इस असमंजस के अतिरिक्त पुस्तक में 'किरातार्जुनीयम्' को कालिदास विरचित मान कर जहां कनिष्ठिकाधिष्ठित कवि कालिदास; अनामिका सार्थवती बभूव' वाली उक्ति को अधिक बल दिया है, वहीं 'भारवेरर्थ गौरवम्' की अवहेलना करके बेचारे महाकवि भारवि को कवियों की पक्ति से ही हटा दिया है।

इस तरह के बृहद् ग्रंथ के लिए सामग्री जुटाने के दुष्कर कार्य में मत वैभिन्य भी स्वभाविक है और छोटी-छोटी त्रुटियां रह जाना भी आश्चर्य की बात नहीं। लेकिन लोक तत्वों का एक ही पुस्तक में इतनी मात्रा समावेश कर पाना निःसन्देह सराहनीय है। इससे भी बढ़कर लेखक की अपनी भाषा, कला एवं संस्कृति के प्रति आस्था सराहनीय है जो इस पुस्तक के हर पृष्ठ में छलकती जाती है। इसी भावना से ओत-प्रोत प्रार्थी जी के भीतर का कवि 'हिमालयी संस्कृति को समूची भारतीय संस्कृति की आधारक सिद्ध करते हुए संसार की समस्त सभ्यताओं को संबोधित करते हुए ठीक ही कहता है :—

अगर शामिल न हो किस्सा हमारा।
तुम्हारी दास्तां कुछ भी नहीं है॥

भाषा एवं सस्कृति विभाग (हि०प्र०) शिमला-१७१००१

पुस्तक–समीक्षा

-- बलजिन्नाथ पण्डित

मैंने श्री लाल चन्द जी प्रार्थी की "कुलूत देश की कहानी" को पढ़ा। इस पुस्तक से हिमाचल प्रदेश के अतीत इतिहास पर काफी प्रकाश पड़ता है। यह प्रदेश तो अभी अभी एक राज्य के रूप को धारण कर गया है। प्राचीन युगों से लेकर यह एक छोटे छोटे देशों का समूह था। अत: इसके उन अंगों को कहानियां भी भिन्न भिन्न ही हैं। परन्तु माननीय लेखक महोदय ने अपनी लेखनी के कलानैपुण्य से उन अनेकों कहानियों को इस तरह से एक ही सूत्र में बांध कर प्रस्तुत किया है कि वह परस्पर भेद-भाव को निमग्न करके एकरूपता में प्रकट हो गई है।

माननीय लेखक महोदय ने कुलूत देश के प्राचोन इतिहास की अनेकों प्रकारों से बिखरी हुई असंख्य कड़ियों को वैदिक और पौराणिक में वाङ्मयसे, प्रसिद्ध इतिहास ग्रन्थों में से, विदेशीय यात्रियों के लेखों में से, सुप्रसिद्ध शोध ग्रन्थों में से तथा अनेकों लोक परम्पराओं में से एकत्रित करके कलात्मक शैली में एक साथ गूंथ कर सुसमन्वित रुप में प्रस्तुत किया है।

यद्यपि "कुलूत देश की कहानो" को वर्तमान ढंग के शोध प्रबन्धों में गिना नहीं जा सकता है, फिर भी इस बात में कोई सन्देह नहीं कि शोध कार्य करने वालों को इस ग्रन्थ से पर्याप्त मात्रा में उपयोगी सामग्री मिल सकती है। इस ग्रन्थ में जिन दुर्लभ ओर अप्रसिद्ध शोध ग्रन्थों का उपयोग किया गया है, उन के प्रति इस में काफो ऐसे संकेत मिलते हैं जिनमें शोध कर्त्ताओं का पथ प्रदर्शन हो सकता है।

किसी भी देश के अतीत के इतिहास की खोज करने वाले प्रथम प्रयास में छोटी मोटी त्रुटियों का आना स्वाभाविक ही है। परन्तु विद्वान लोग उन त्रुटियों की ओर ध्यान न देकर गुणों का ही आदान करते हैं। इस दृष्टि से "कुलूत देश की कहानी" पर विचार किया जाए तो विद्वान के हृदय में श्री प्रार्थी की इस 'साधना' के प्रति अवश्य ही एक अपूर्व आदर के भाव का उदय होगा।

इस पुस्तक में कुलूत देश की जिस कहानी को कहा गया है वह कहानी इतने यत्न से भी अभी अधूरी ही रह गई है, क्योंकि प्रागैतिहासिक युग से आरम्भ होकर ऐतिहासिक

युग के प्रारम्भिक भाग तक ही पहुंच पायी है। कितना ही अच्छा होता यदि प्रार्थी जी इस कहानी के अग्रिम भाग को भी इसी तरह की लग्न से जोड़ कर उसे वर्तमान युग तक पहुंचा पाते।

भारत के सिद्ध सम्प्रदायों में जिस सुप्रसिद्ध श्री विद्या की उपासना की परम्परा अनादि काल से आज तक अविच्छिन्न गति से चलती आ रही है उस श्री विद्या के त्रिकोणाकार तीन मुख्य केन्द्रों में से जो पश्चिम का केन्द्र है वह कुलूत देश के भीतर विद्यमान जालन्धर पीठ (वर्तमान कांगड़ा) है। आचार्य अभिनव गुप्त जैसे महासिद्धों के ज्ञानदाता गुरू श्री शम्भुनाथ इसी पीठ के तात्कालिक गुरू थे। श्री बालकनाथ आदि सिद्ध पुरूषों का सम्बन्ध भी इसी सिद्ध पीठ के साथ होना सम्भव है। यदि माननीय लेखक महोदय के क्रम को जारी रखते हुए कोई विद्वान कुलूत देश की कहानी के शेष भाग में इस विषय पर भी यथा सम्भव प्रकाश डालते तो यह कहानी और भी चमक उठती और हिमाचल प्रदेश का आत्म गौरव विशेष उत्कर्ष को प्राप्त करता।

संस्कृत विभाग हि. प्र.
विश्वविद्यालय शिमला-५

हिमाचली सुरम्य धरती की गुण-मूर्ति

स्वर्गीय श्री लाल चन्द प्रार्थी-कुछ संस्मरण !

सुरेंद्र नाथ वर्मा

काल चक्र कितनी तेज गति से घूमता है। यूं लगता है जैसे अभी कल ही तो उन से परिचय हुआ था और बारह तेरह बर्ष पलक झपकते यूं गुजर गए कि अपने साथ उस महान् व्यक्तित्व को भी साथ ले गये जिनका नाम श्री लाल चन्द प्रार्थी था।

मैं उन दिनों धर्मशाला में नियुक्त था। हिमाचल प्रदेश में दहेली से स्थानान्तरण पर 1967 में आया था। आते ही मुझे वहां की धरती, मनमोहक प्राकृतिक दृश्य तथा सीधे सादे लोग बहुत भले मालूम हुए थे। यूं लगा था कि मैं इस धरती का जाया हूं और शताब्दियों बाद स्वदेश लौट रहा हूं। धर्मशाला में ही मैंने कांगड़ा कल्चरल सोसायटी की स्थापना की थी और उसी के तत्वावधान में ही एक पत्रिका का प्रकाशन भी आरम्भ किया था, जो पहाड़ी, हिन्दी तथा उर्दू तीनों भाषाओं का संगम थी। प्रार्थी जी उन दिनों हिमाचल के भाषा, कला एवं संस्कृति विभाग के मंत्री थे। पत्रिका "हिममुमन" के प्रथम अंक के लिए शुभकामना सन्देश भेजने हेतु मैंने उनसे आग्रह किया था। उनका सन्देश तो आया ही साथ में यह पैगाम भी कि पार्थी जी कांगड़ा जिला के दौरे पर आ रहे हैं और मैं दाढ़ रैस्ट ह'ऊस में उन से मिलूं।

मैं गन्तव्य स्थान पर यथा समय पहुंच गया परन्तु प्रार्थी जो काफो बिलम्ब से वहां पधारे। देहलो से आकर हिमाचल के किसी भी मन्त्री के साथ साक्षात्कार का यह मेरा प्रथम अवसर था। कुछ और लोग भी रैस्ट हाऊस में उनकी प्रतीक्षा कर रहे थे। प्रार्थी जी से मुलाकात हुई। मेरे पत्र को उन्होंने सम्भाल कर रखा था और मेरी सुन्दर हस्तलिपि की उन्होंने प्रशंसा की, और फिर कई बातें हुई। मुझे महसूस हुआ कि जैसे उस बावकार शख्सियत को मैं सदा से जानता हूं। एक मन्त्री और अधिकारी के मध्य की औपचारिकतायें पल भर में धराशायी हो गई और यूं हिमाचल के एक मन्त्री से नहीं, स्वयं श्री लाल चन्द प्रार्थी के साथ निजी सम्बन्धों का श्री गणेश हुआ।

"हिम सुमन" का अंक भी प्रकाशित हो चुका था। मैंने प्रार्थी जी से निवेदन

किया कि प्रथम अंक का विमोचन वे स्वयं अपने करकमलों द्वारा करें जिसे उन्होंने सहर्ष स्वीकार किया। अपनी तमामतर व्यस्तताओं के बावजूद भी प्रार्थी जी महाविद्यालय में पधारे जहां एक संक्षिप्त समारोह का आयोजन किया गया था। श्री लाल चन्द प्रार्थी के वहाँ आने तथा कांगड़ा कलचरल सोसायटी के पदाधिकारियों से मुलाकात सभी के लिए बहुत प्रोत्साहित करने वाली थी।

तीसरा अवसर तब आया जब १९७० में धर्मशाला ही में मैंने एक कुल हिन्दो मुशायरे का एहतमाम किया था। समारोह स्थल रोशनियों से जगमगा रहा था। उस मुशायरे में अली सरदार जाफरी, निदा फाजली, कैफी आजमी, जान निसार अख्तर, ऐवाज सिद्दीकी और उर्दू साहित्य के दूसरे प्रसिद्ध जाने माने कविगण सम्मिलित हुए थे। धौलाधार के रम्य प्रिरिप्रेक्ष्य में उस रात उस ऐतिहासिक मुशायरे का आयोजन हिमाचल के साहित्य व इतिहास में एक चिरस्मरणीय घटना थो। प्रार्थी जी उन दिनों कुछ अस्वस्थ थे। उन्हें दमे की शिकायत रहती थी। मैंने उन्हें अध्यक्षता के लिए आमंत्रित किया था। उस तारीखी अदबी महफिल को देख तथा मंच पर पधारते ही उनका सांस की तकलीफ जाती रही और क्षण भर में मैंने ऐसा परिवर्तन देखा कि एक नया और चाक चौबन्द लाल चन्द प्रार्थी मंच पर उपस्थित था। उर्दू साहित्य के इतने महान कवियों से उनका पहला निजो परिचय था। हमारे आग्रह पर प्रार्थी जी ने अपनी एक गज़ल तरन्नुम में सुनाई थी। सभी उपस्थित श्रोतागण तथा वे कवि भी जिन के नाम का सिक्का उर्दू साहित्य में चलता था, प्रार्थी जी को शख्सियत तथा कलाम से बहुत प्रभावित हुए थे।

यह वह युग था जब तीन चार वर्ष पूर्व ही अर्थात १९६६ में पहाड़ी भाषा के आधार पर राज्यों का पुनर्गठन हुआ था ओर विशाल हिमाचल की स्थापना हुई थी। उस समय के राजनोतिज्ञों में स्वर्गीय डा० यशवन्त सिंह परमार तथा स्वर्गीय श्री लाल चन्द प्रार्थी सचमुच ही पहाड़ो भाषा तथा संस्कृति के प्रबल समथकों के रुप में अग्रणी थे। प्रार्थी जी बहुमुखी प्रतिभा वाले व्यक्ति थे साहित्य, कला एवं भाषा के प्रति उनका समर्पण पूर्ण रुपेण तथा अनन्य था। उन दिनों तथा उसके पश्चात आज तक भी हिमाचल की सांस्कृतिक धरोहर के प्रति उनको सी लगन तथा समर्पण वाला व्यक्ति मैंने राजनोति में प्रवेश करते नहीं देखा।

1972 में मेरा तबादला हुआ और मैं बतौर सब डिवीजनल मैजिस्ट्रेट कण्डाघाट आ गया। प्रार्थी जी से इतने आत्मीय सम्बन्ध बन चुके थे कि शिमला से चण्डीगढ़ जाते हुए अथवा लौटते हुए वे कण्ड घाट विश्रामगृह में कुछ समय के लिए अवश्य रुकते-चाय पान होता तथा अपनी ताजा तरीम गज़लों को सुनाते। उन दिनों सचमुच ही वे काफी उत्प्रेरित से जान पड़ते थे और बहुत सुन्दर गज़लों का सृजन किया था उन्होंने।

एक शाम मैं शिमला से वापस लौटा ही था कि फोन की घंटी बजी, ट्रंक काल थी। दूसरी ओर श्री लाल चन्द प्रार्थी के निजी सचिव श्री बिहारी लाल सूद थे। बोले प्रार्थी जी ने याद किया है। मैंने पूछा कि क्या मुझे पुनः शिमला आना होगा। कहने लगे उसकी आवश्यकता नहीं। प्रार्थी जी स्वयं अगले दिन चण्डीगढ़ जाते हुए 11 बजे कण्डाघाट विश्राम गृह पहुंचेंगे तथा मैं उनसे वहां मिलूं। अगले दिन ठीक 11 बजे प्रार्थी जी वहां पधारे। आते ही फरमाने लगे कि मैं आपको शिमला ले जाना चाहता हूं। स्पष्टीकरण के रूप में बोले कि भाषा-कला-संस्कृति विभाग एवं अकादमी में एक ऐसे व्यक्ति की आवश्यकता है जो उनका ठीक एवं समुचित मार्गदर्शन कर सके तथा इन संस्थाओं के कार्य को नई दिशा दे सके। यह बात मेरी कार्यक्षमता में आस्था का प्रतीक थी। इससे पूर्व धर्मशाला में साढ़े पाँच वर्षों के आवास के दौरान भाषा एवं संस्कृति विभाग से अलग अपने निजी स्तर पर भाषा, कला, संस्कृति के पोषण हेतु जो प्रयास मैंने किए थे, प्रार्थी जी उन से अवगत थे। अतः बोले—आपको कोई आपत्ति तो नहीं? भला मुझे क्या आपत्ति होती और फिर उन्होंने जब इतने स्नेह तथा अपनेपन से कहा तो फिर इन्कार की गुंजाईश ही नहीं रही थी मेरे लिए! मैं स्वयं भी इस क्षेत्र में अपनी सेवाओं से आत्म-सन्तुष्टि प्राप्त करता रहा था। और फिर यह प्रस्ताव उस महान व्यक्ति ने रखा था जिनके लिए मेरे मन में बहुत आदर तथा स्नेह था—अतः आपत्ति का कोई कारण नहीं था। शिमला वापस जाकर प्रार्थी जी ने यह सुझाव मुख्यमंत्री डॉ० यशवंत सिंह परमार को स्वीकृति हेतु भेजा और प्रथम जून 1974 को मैंने शिमला जा कर भाषा-कला एवं संस्कृति विभाग के निदेशक के तौर पर कार्यभार सम्भाल लिया।

उन दिनों भाषा-कला-संस्कृति विभाग का कार्यालय परिमहल में स्थित था। परिमहल तब एक भूत बंगला सा लगता था बाहर से चारों ओर वीरानी टपक रही थी। भवन भी खस्ता हालत में था। विभाग तथा भवन से मेरा पहला परिचय काफी निराशाजनक था परन्तु आगामी साढ़े तीन वर्ष बहुत ही सर्जनात्मक सिद्ध हुए। प्रार्थी जी के मार्ग-दर्शन में तथा उनकी प्रेरणा से उस दौरान अधिकारियों तथा कर्मचारियों की सीमित सख्या के बावजूद भी बहुत उपलब्धियां रहीं—पहाड़ी भाषा में निबंध, कहानी, कविता, एकांकी इत्यादि, उस समय के राज्यपाल श्री एस० चक्रवर्ती की निजी दिलचस्पी के फलस्वरूप शिमला राज्य संग्रहलय की स्थापना, निकोलिस रोरिक शताब्दी समारोह तथा रोरिक स्मारिका का प्रकाशन, हिमाचली महा कार्य "लाटी शेर जंग तथा हिना डड्र" नाटक का मंचीकरण—जिसका उद्घाटन स्वयं डॉ० परमार ने किया था। उन साढ़े तीन वर्षों में एक भी अवसर ऐसा नहीं आया जब प्रार्थी जी ने मुझे किसी आपत्तिजनक कार्य के लिए कहा हो।

विभाग तथा अकादमी की प्रत्येक गतिविधि में प्रार्थी जी स्वयं रुचि लेते। भाषा-कला-संस्कृति विभाग, अकादमी तथा आयुर्वेद विभाग लाल चन्द प्रार्थी की हिमाचल को देन हैं। इन तीनों संस्थाओं के पौधे उन्होंने स्वयं लगाए तथा उनके हजार जतन से

सींचा। उन दिनों का वातावरण भी अनुकूल नहीं था और उनकी प्रगति हेतु हर कदम पर प्रार्थी जी को दखल देना पड़ता। प्रशासनिक स्तर पर भी काफी विरोध था क्योंकि उन दिनों कुछ उच्चाधिकारियों को इस सराहनीय कार्य से अलर्जी सी जान पड़ती थी। इस बीच परीमहल का काया कल्प आरम्भ हुआ। मैंने सारे स्टाफ के सहयोग से परीमहल के प्रांगण का भू-दृश्य निर्माण तथा भवन का उद्धार कराया। प्रार्थी जी को इस स्थान से ऐसा लगाव हो चला था कि प्रायः वे अपनी राजनीतिक गतिविधियों से पीछा छोड़ कर वहां आ बैठते। फिर तो यह भी हुआ कि मिलने वालों की न खत्म होने वाली भीड़ से दूर अपनी सारी सरकारी फाइलों के निपटाने के लिए कई-कई दिन वे परीमहल में आ विराजते। वे कहा करते थे, मुझे यहां आ कर सभी तनावों से दूर मन को शान्ति प्राप्त होती है।

इस दौरान प्रार्थी जी की वाणी पर स्वयं सरस्वती का निवास था। उनके मन की काव्य भूमि में सर्जनात्मकता के बीज प्रस्फुटित होते तथा लगभग प्रति दिन एक गज़ल हो जाया करती थी। गजलें सचमुच बहुत ही स्तरीय तथा प्यारी थीं। उन्होंने मुझे तथा श्री मनोहर शर्मा सागर पालमपुरी को यह शुभ कार्य सौंपा था कि हम गज़लों को एकत्रित करके, चयनित शेअरों का चित्रण करा के मसौदा प्रकाशनार्थ तैयार करें। इस विषय में कुछ प्रगति हुई भी थी, परन्तु यह कार्य वे अपने जीवन काल में पूरा नहीं कर सके। हिमाचल प्रदेश तथा विशेषतया भाषा-कला-संस्कृति विभाग एवं अकादमी को प्रार्थी जी के प्रति यह सच्ची श्रद्धांजली होगी यदि उनकी गजलों का सचित्र संकलन अब भी प्रकाशित हो सके। मुझे पूर्ण विश्वास है कि इस कार्य से उनकी आत्मा को बहुत राहत मिलेगी।

श्री लाल चन्द प्रार्थी एक इन्सान, दोस्त, कलाकार, उच्चकोटि के उर्दू के गजलगो शायर, संगीत के मर्मज्ञ ज्ञाता तथा पहाड़ी भाषा एवं साहित्य विकास के समर्पित समर्थक तथा एक महान अदब व अदीब नवाज थे। अपने पुराने मित्रों के प्रति बहुत सौहार्द एवं स्नेह रखते थे। हिमाचल का एक छोटे से छोटा कलाकार तथा साहित्यकार भी उन तक सीधे पहुंच सकता था। बहुत से पहाड़ी कवियों तथा साहित्यकारों को प्रार्थी जी ने अपनी प्रेरणा तथा प्रयासों से गुमनामी की गुफा से बाहर निकाला। कुल्लू दशहरा को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर लाने तथा ख्याति प्रदान करने का श्रेय भी प्रार्थी जी को जाता है। आज प्रार्थी जी हमारे मध्य नहीं है—परन्तु मेरा अपना विश्वास है कि कुल्लू का कला केन्द्र, भाषा-कला-संस्कृति विभाग, अकादमी तथा आयुर्वेद विभाग उन द्वारा स्थापित कीर्ति स्तम्भों के रूप में सदा उनको स्मृति को ताज़ा रखेंगे। ऐसे महान व्यक्ति रोज़ रोज़ जन्म नहीं लेते परन्तु कालान्तर में समय की रेति पर उनके पद चिन्ह आने वाली पीढ़ियों का पथ प्रदर्शन अवश्य करते रहेंगे। प्रार्थी जी के विराट रूप में कला, संस्कृति, भाषा हिमाचल के प्रति अगाध प्रेम तथा अपनी मिट्टी से जुड़े रहने की इच्छा का बहुत सुन्दर समावेश था।

आयुक्त पर्यटन परिवहन शिमला-३

स्व. श्री लालचन्द प्रार्थी मेरी नज़र में

--प्रो० नारायणचन्द पराशर

श्री लालचन्द प्रार्थी का स्मरण आते ही एक व्यक्ति की अपेक्षा एक आन्दोलन की तस्वीर सामने उभर आती है। पहाड़ी भाषा, साहित्य तथा संस्कृति के आन्दोलन का सूत्रपात स्व० श्री प्रार्थी जी द्वारा ही सम्पन्न हुआ। कुल्लू जिले के नगर ग्राम में उत्पन्न हुए। यह बालक एक दिन सारे पंजाब प्रान्त को इतना झकोर देगा कि पहाड़ी संस्कृति का गुप्त स्वर फिर मुखर हो उठेगा सदियों की खामोशी के बाद—यह किसे मालूम था। डॉ० यशवन्त सिंह परमार के साथ मिलकर उन्होंने जिस स्वप्न को साकार किया वह हमारे लिए एक वरदान सिद्ध हुआ। न केवल पंजाब के कांगड़ा, कुल्लू, लाहुल-स्पीति तथा अन्य पहाड़ी क्षेत्र हिमाचल प्रदेश में शामिल हुए अपितु। नवम्बर, 1966 से पहाड़ी भाषा, साहित्य तथा संस्कृति का युग भी आरम्भ हुआ।

मुझे श्री लालचन्द प्रार्थी के दर्शन पहली बार 1962 में हुए जब वह एक बार पहले विधायक रहने के बाद पुनः पंजाब विधान सभा में पहुंचे थे। कांगड़ा के 9 विधायकों में से एक, परन्तु पहाड़ी संस्कृति के एक सशक्त प्रवक्ता भी थे। श्री रूपसिंह फूल हमीरपुरी के साथ मिलकर पहाड़ी भाषा और साहित्य की समृद्धि करते रहे तथा राजनीति से प्राप्त शक्ति के द्वारा इस चमन को सींचते रहते थे।

मैं भी पहाड़ी भाषा तथा साहित्य के सन्दर्भ में ही नहीं अपितु पर्वतीय ज़िलों के विकास पर भी उनसे प्रेरणा प्राप्त करता रहता था। उनकी सब से बड़ी खूबी थी कि वह अपने प्यार से जिसे भी एक बार अपनाते थे, उसे कभी छोड़ते नहीं थे। उन्होंने जिसे भी मित्र तथा स्नेहपात्र बनाया था, वह सभी यथावत उनके कृपापात्र बने रहे। मैंने उनसे पहले पंजाब विधान सभा के होस्टल में भेंट की थी और पहाड़ी में बातचीत करने के कारण मैं उनका उसी दिन से प्रशसक बन गया। यह रिश्ता उनके जीवन के अन्तिम दिनों तक कायम रहा।

राजनीतिक जीवन के चरम शिखर पर वह हिमाचल प्रदेश सरकार के मन्त्री बन गए। उन्होंने 1966 से ही यह बीड़ा उठा लिया कि पहाड़ी भाषा तथा संस्कृति के आन्दोलन की गति तीव्र की जाए। भाषा संस्थान की कल्पना तथा भाषा सलाहकार समिति की स्थापना इसी धारणा के अनुसार उठाया गया एक कदम था। शिमला का 1970 में

में सम्पन्न लेखक सम्मेलन—जिसमें प्रदेश भर के पहाड़ी, हिन्दी, उर्दू तथा संस्कृत के विद्वानों का उचित सम्मान मिला—इसी शृंखला की एक कड़ी थी। इसी प्रकार 30 सितम्बर, 1970 के दिन हिमाचल प्रदेश विधान सभा द्वारा पहाड़ी भाषा को प्रदेश के लोगों की मातृभाषा के रुप में मान्यता देने तथा इसकी समृद्धि तथा प्रोत्साहन हेतु कला, संस्कृति और भाषा अकादमी की स्थापना हेतु अपनाया गया प्रस्ताव इस दिशा का महत्व-पूर्ण कदम था। यह स्वभाविक ही था कि वही हिमाचल कला, संस्कृति, भाषा अकादमी के संस्थापक, अध्यक्ष तथा प्रदेश के पहले भाषा मन्त्री बने।

डॉ० यशवन्त सिंह परमार के नेतृत्व में प्रदेश के राजनैतिक जीवन में कांग्रेस पार्टी की भूमिका को अधिक सशक्त बनाने तथा पहाड़ी संस्कृति को प्रबल प्रोत्साहन देने के लिए श्री लालचन्द प्रार्थी की सलाह से मुझे भी लोकसभा के लिए हमीरपुर संसदीय क्षेत्र से कांग्रेस प्रत्याशी बनाया गया। उन्हीं दिनों 25 जनवरी, 1971 के दिन हिमाचल प्रदेश को पूर्ण राज्य का दर्जा भी देकर प्रधानमन्त्री श्रीमती इन्दिरा गांधी जी ने शिमला पहुंचकर भारत के 18 वें राज्य का उद्घाटन किया तो पहाड़ी लोगों की किस्मत सुधरने में एक क्रान्तिकारी युग का शुभारम्भ हुआ।

उन्हीं दिनों पहाड़ी भाषा को मातृभाषा के रुप में हिमाचलियों द्वारा अपनाने हेतु 1971 की जनगणना शुरू हुई। नई दिल्ली में बसन्त पंचमी (31 जनवरी) के दिन 15 हजार हिमाचलियों ने एक स्वर में श्री लालचन्द प्रार्थी की अध्यक्षता में यह प्रस्ताव पास किया कि वह पहाड़ी भाषा को अपनी मातृभाषा स्वीकार करते हैं तथा उन्होंने हिमाचल के 34 लाख लोगों से इस हेतु एक स्पष्ट अपील की। दिल्ली में रहने वाले हिमाचलियों की एक दर्जन से अधिक सामाजिक तथा सांस्कृतिक संस्थाओं ने इस प्रस्ताव को अपना प्रबल समर्थन दिया। इसी सन्दर्भ में हिमाचल पहाड़ी साहित्य सभा (पं०) दिल्ली की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण थी। इसकी स्थापना 9 मई, 1969 के दिन श्री धनीराम, आई. ए. एस. की अध्यक्षता में हुई थी।

उस समय पहाड़ी भाषा के सम्बन्ध में निहित स्वार्थों द्वारा तीव्र भ्रान्ति उत्पन्न की गई। इसको हिन्दी की विरोधी और डोगरी की सौत कहा गया। कुछ हताश राजनीतिज्ञों ने "पहाड़ी से पहाड़ी मुण्ड" और "डोगरी से डोगरा वीर" का नारा भी लगाया। परन्तु जनगणना से सिद्ध हो गया कि 'पहाड़ी' लोगों की माता के दूध में मिली अमरवाणी है जिसे भुलाना किसी षड़यन्त्रकारी के बस का रोग नहीं था।

यह आन्दोलन चला और इसके कालान्तर शिमला से पहाड़ी भाषा में हिमभारती तथा दिल्ली से हिमधारा का प्रकाशन आरम्भ हुआ। हिमधारा के वीर अंकुर ने जब अपनी मातृभाषा में अपने सैनिक शहीदों तथा वीरों का सम्मान भुरंज विकास खण्ड के

प्रमुख स्थान और हिमाचल के प्रथम विक्टोरिया क्रास विजेता नायक लाला के जन्म स्थान पर हिमाचल प्रदेश के निर्माता डॉ० यशवन्त सिंह परमार ने श्रीमती लाला के हस्तों में भेंट किया तो सैनिक वीरता की हुंकार पहाड़ी भाषा के मधुर संगीत से और रसीली हो गई।

प्रार्थी जी जीवन के अन्तिम दिनों तक पहाड़ी भाषा तथा आयुर्वेद के लिए तड़पते रहे। जब हमारी पार्टी चुनाव हार गई और प्रार्थी जी जब मन्त्री न रहे तो उन्होंने मुझ से यही इच्छा व्यक्त की। मैं अपने प्रिय अनुज के रूप में सुझाव देता हूं कि मेरे लगाये हुए दोनों पौधों-पहाड़ी भाषा तथा आयुर्वेद को सींचते रहना मैं अपनी ओर से इस दिशा में जितना सम्भव हो सकता है करने का प्रयत्न कर रहा हूं।

प्रार्थी जी न केवल एक सफल राजनीतिज्ञ थे पर एक सफल लेखक भी थे। 'चान्द कुल्लवी' के नाम से वह पहाड़ी तथा उर्दू में भी अपनी स्मृति की अमिट छाप लगा चुके हैं। प्रसिद्ध कविता "हिमत केरिया अपणे देसा री किस्मत बणाणीं असाँ" अत्यन्त लोकप्रिय सिद्ध हुई। उर्दू की प्रसिद्ध पत्रिकाओं में उनकी अनेक कवितायें छपती रही। परन्तु हिन्दी गद्य लेखक के रूप में भी उन का योगदान कुछ कम नहीं। उनकी प्रसिद्ध पुस्तक "कुलूत देश की कहानी" जहां उनकी विद्वता को एक झलक दिखाती है वहां पर्वतीय संस्कृति के प्रति उनकी गहन निष्ठा का भी एक चित्र प्रस्तुत करती है। पहाड़ी भाषा तथा साहित्य के लिए वह न केवल सरकार की शक्ति का सहारा लेना उचित समझते थे बल्कि वह पहाड़ी साहित्य संगम जैसी संस्था शिमला में स्थापित करके इस आन्दोलन को और भी तीव्र करना चाहते थे।

मेरी नजर में प्रार्थी जी न केवल पहाड़ी संस्कृति के प्रबल उद्घोषक तथा महाराजा संसार चन्द, पहाड़ी गांधी बाबा कांशीराम तथा डॉ. यशवन्त सिंह परमार के स्वप्नों को साकार करना चाहते थे अपितु वह प्रदेश के प्रत्येक व्यक्ति से यह आशा करते थे कि वह इस दिशा में अपनी पूरी शक्ति लगा दें। उनका संदेश सभी पहाड़ी भाषा, साहित्य, कला तथा संस्कृति के इसी एक शेर में झलकता था जिसे वह स्वयं गुनगनाया करते थे :-

शबे गम के अन्धेरे से न घबरा ए मुसाफिर।
तेरे लिए बेताब है आगोश सहर का॥

संसद सदस्य,
९, महादेव रोड़, नई दिल्ली

सोमसी

हिमाचल प्रदेश के धन्वन्तरि स्व. लालचन्द प्रार्थी

-- धनोराम शर्मा

स्व. श्री लाल चन्द प्रार्थी जी के साथ मेरी प्रथम भेंट बन्दे मातरम् के कार्यालय अनारकली लाहौर में सन् 1933 में जब कि आप श्री कविराज प्रथम वर्ष में एस डी. आयुर्वेदिक कॉलेज और मैं डी. ए. वी. आयुर्वेदिक कालेज में वैद्य कविराज द्वितीय वर्ष में पढ़ता था। उस समय आज़ादी की लहर बहुत जोर पकड़ चुकी थी। सुप्रसिद्ध देश भक्त नेताओं ने हमारी विचार धारा को नैशनल कांग्रेस की ओर बदल दिया था और बहुत से अन्य छात्र भी हमारी टोली में आ मिले थे। प्रोग्राम के बाद, अवकाश के बाद, या रविवार को लारैन्स गार्डन या गोल बाग में इकट्ठे होकर स्वतन्त्रता विषय पर ही कविताएं, गीत और गज़लें गाई जाती थी। प्रार्थी जी भी कविताएं, गज़लें सुनते और सुनाते थे। उनकी कोयल जैसी मधुर ध्वनि देश भक्त प्रेमियों को रोने पर विवश कर देती। उनके मधुर कण्ठ की अब भी याद आती है।

श्री प्रार्थी जी योग्य छात्रों में से थे। आयुर्वेद चिकित्सकों की दशा देख और आए दिन सरकार द्वारा लगे प्रतिबन्धों से उन्हें बहुत दुख होता। वह कहा करते थे कि जब भारतवर्ष आज़ाद होगा तो आयुर्वेद आजाद होगा। अतः वैद्यों को अवश्य इस संग्राम में आहुति डालनी चाहिए। प्रार्थी जी की गज़लों की प्रेरणा से पार्टी के सदस्यों में नेशनल कांग्रेस की तन - मन से सेवा करने की भावना और भी प्रबल रूप धारण कर लेती।

प्रार्थी जी जो भी कहते वह कर दिखाते थे। श्री कविराज की उपाधि प्राप्त करने के बाद वह कुल्लू चले गए और जिला पंचायत आफिसर की नौकरी कर ली किन्तु उन्होंने आए दिन अंग्रेजों की हकूमत से तंग आकर नौकरी से त्याग पत्र दे दिया। इसके पश्चात उन्होंने ज़िला काँगड़ा के कांग्रेस का प्रधान पद सम्भाला। थोड़े दिनों के बाद इन को जेल जाना पड़ा। मैंने वैद्य वाचस्पति श्रेणी में प्रवेश किया। सन् 1936 में मैंने उपाधि प्राप्त करने के बाद फिर लोयर बाजार शिमला में प्रैक्टिस आरम्भ की। श्री प्रार्थी जी से यहां भेंट होती रही। सन् 1947 में प्रार्थी जी पंजाब में विधायक निर्वाचित हुए। वह वहां नारायण भवन में रहते थे। हम प्रायः हर रोज़ मिलते थे। सन् 1949 में उन्होंने सरकार द्वारा आयुर्वेद यूनानी एक्ट स्वीकार कराया और इस विज्ञान की उन्नति के लिए बोर्ड ऑफ आयुर्वेद यूनानी सिस्टम ऑफ मैडोसन पंजाब की

स्थापना हुई । इस बोर्ड में मैंने सदस्य के नाते प्रार्थी जी की आशाओं के अनुरूप कार्य करने की कोशिश की। सन् 1966 में कुल्लू, कांगड़ा, ऊना हिमाचल में मिले। श्री प्रार्थी जी विधायक के रूप में हिमाचल विधान सभा में शामिल हो गए। इनकी योग्यता, दूरदर्शिता तथा देश भक्ति के आधार पर हिमाचल के निर्माता डा. यशवन्त सिंह परमार ने इन्हें अपने मन्त्री मण्डल में लिया तथा स्वास्थ्य विभाग इन्हें सौंपा गया। सन् 1968 में श्री प्रार्थी जी ने आयुर्वेद यूनानी चिकित्सा को उन्नत करने के लिए एक्ट सरकार द्वारा स्वीकृत करा के, वैद्य, हकीमों का एक बोर्ड घोषित किया। बोर्ड के सदस्यों ने मुझे उपप्रधान नियुक्त किया। इस प्रकार प्रदेश के वैद्य, हकीम रजिस्टर हुए। सन् १९७३ में श्री प्रार्थी जी को स्नेह सम्मेलन सोलन में वैद्य समाज ने हिमाचल प्रदेश का अध्यक्ष चुना और मुझे महामन्त्री। प्रार्थी जी की छत्र-छाया में सब ज़िलों में मण्डल स्थापित हुए जिनका सम्बन्ध हिमाचल आयुर्वेद सम्मेलन से किया। इस सम्मेलन का सम्बन्ध अखिल भारतीय आयुर्वेद महा सम्मेलन देहली से हुआ। इसी दौरान भारत सरकार ने भारतीय चिकित्सा केन्द्रीय परिषद् में श्री प्रार्थी को सदस्य मनोनीत किया। आपको परिषद् ने रजिस्ट्रेशन कमेटी का प्रधान निर्वाचित किया। आपकी योग्यता को देखते हुए भारतवर्ष के वैद्यों ने पाँडीचेरी में ४८वें अखिल भारतीय आयुर्वेद महा सम्मेलन का अध्यक्ष चुना। जिस से आयुर्वेद विज्ञान की उन्नति करने का समय मिला। सन् १९७७ में सब वैद्य समाज का गठन करके ४९वाँ अखिल भारतीय आयुर्वेद सम्मेलन कराया जिसका उद्घाटन भारतवर्ष के भूतपूर्व प्रधान मन्त्री श्री मोरार जी देसाई से कराया। इस में मुझे स्वागत मन्त्री पद देकर सेवा का समय दिया। इस सम्मेलन में भारत वर्ष के बड़े-बड़े वैद्य विद्वान पधारे थे। मुझे भी हिमाचल प्रदेश से भारत सरकार ने भारतीय चिकित्सा केन्द्रीय परिषद् का सदस्य घोषित किया था। इस नाते हमें इकट्ठे इस चिकित्सा पद्धति के लिए काम करने का समय मिला। श्री प्रार्थी जी ने स्वास्थ्य मन्त्री पद सम्भालते ही प्राईवेट रियासतों के समय की डिस्पेंसरियों को सरकारी घोषित किया। किन्तु दिल के अरमान देसी चिकित्सा के उन्नति के स्वप्न पूरे न हुए। जैसा वह चाहते थे, वह मुझे कहते थे कि जब तक स्वतन्त्र रुप में हाई पावर डवैलपमैंट बोर्ड स्थापित नहीं होता, आयुर्वेद अपने यौवन पर नहीं आ सकता। युगों से इस पर प्रहार हो रहे हैं। श्री प्रार्थी जी के विचार पूर्ण रुप से फल न ला सके कि इन को काल ने घेर लिया। आप हिमाचल प्रदेश के धन्वन्तरि थे। आयुर्वेद जगत इन को भूल नहीं सकता।

सुदर्शन औषधालय,
११२, लोअर बाजार, शिमला, हि॰ प्र॰

संस्मरण

मूर्तिकार की दृष्टि में प्रार्थी जी

-- प्रो० एम० सी० सक्सेना

जब कभी मैं मूर्ति की कल्पना करता हूं तो एक चेहरा मानस पटल पर उभर आता है। ठीक रविन्द्र नाथ टैगोर के समान मुखाकृति वाला और फिर उन्मुक्त अट्टहास में वह कुल्लू की घाटियों में खो जाता है। यह कलाकार हृदय वाला व्यक्ति था स्व. श्री लाल चन्द प्रार्थी।

श्री लाल चन्द प्रार्थी से मेरा परिचय सन् १९६८ में शिमला में एक विचित्र घटना द्वारा हुआ—शिमला नगर निगम के हाल में मेरी कला प्रदर्शनी आयोजित हुई, जिसका उद्घाटन उनके कर कमलों द्वारा होना था, आमन्त्रण पत्र प्रकाशित हो चुके थे, उसी समय सहसा उन्हें कुल्लू जाना पड़ा वहाँ हमारी वर्तमान प्रधान मन्त्री व कांग्रेस के वरिष्ठ नेता पधारे थे उनका टेलीफोन आया कि वे जीप खराबी के कारण २ घण्टा देर में आयेंगे। मैंने बताया कि मैं एक बालक से प्रदर्शनी का उद्घाटन ठीक निश्चित समय पर करवा रहा हूं, वे बुरा न मानें और यदि कला में उनकी रूचि है तो दूसरे दिन पधारें मैं स्वागत करुंगा—उद्घाटन बालक द्वारा हो गया—मुझे आशा थी कि वह एक राजनीतिज्ञ है शायद ही आये किन्तु दूसरे दिन वे पधारे और बुरा मानने के स्थान पर मेरे दृढ़ विचार से प्रभावित हुए। ऐसा उदाहरण मिलना कठिन है मुझे लगा कि वह एक कलाकार को कितना महत्व देते हैं।

एक बार वह बोले कि वे मेरे द्वारा अपने पिता का तैल चित्र बनवाना चाहते हैं, मेरा आग्रह था कि इस के लिए वे राजनीतिज्ञ दबाब नहीं डालेंगे और जब मैं चित्र तैयार कर लूगां तो स्वयं मेरे कला कक्ष पधार कर ले जायेंगे। वैसे ही हुआ। एक दिन उनका फोन आया कि वे मेरे घर पर मिलना चाहते हैं। वे पधारे उनके हाथ में एक कुल्लू शाल व टोपी सम्मान में थी। बड़े विनम्र स्वभाव से बोले कि वे उपहार स्वयं लेकर आये हैं मैं लेने से मना न करूं। सच में उनके हृदय

में एक कलाकार के लिये कितना सम्मान था यह मैं आज भी स्मरण कर रोमांचित हो जाता हूं ।

उन्होंने बड़े चाव से अपनी मूर्ति मुझ से बनवाई और बोले वे एक साधारण व्यक्ति के सम्मान स्वयं मेरे यहां से ले जायेंगे—वे इस बीच काफी अस्वस्थ रहे जब इस बीच में शिमला में मिले तो बोले मैं स्वयं ही अपनी मूर्ति लेने आऊंगा । खेद है कि वे हमारे बीच नही हैं। किन्तु मुझे उनके पुत्र ने बताया कि वे अपने वसीहत नामे में लिख गये हैं कि कुल्लू में यदि उनकी कोई मूर्ति लगे तो वह मेरे हाथ से बनी हो—ऐसा कला प्रेमी हृदय वाला राजनेता इतिहास में कदाचित ही मिलेगा ।

वे प्रायः कहा करते थे कि मैंने जीवन में बहुत कुछ सीखा किन्तु चित्रकला अथवा मूर्तिकला नहीं सीख पाया - राजनीति त्याग कर वे इसे भी कभी रसपान करना चाहेंगे । अपनी उर्दू शायरी को गालिब नामा के समान वे चित्रित करवाने के लिए आकुल थे जिसे व्यवस्थित करने को वे सागर पालमपुरी का नाम लिया करते थे। कभी-कभी वे अपनी मानवीय दुर्बलताओं के किस्से मुझे सुनाने लगते थे और कहते कि किस तरह वे जीवन में एक साधारण व्यक्ति से एक राज नेता बने-लोग उन्हें हर समय घेरे रहते वे शायर, कवियों और कलाकारों के जैसे मसीहा थे ।

एक बार अखिल भारतीय मुशायरे में वे सदर थे और सारे शायर अपनी रचनाएं पढ़ चुके। मेरा नाम भी था किन्तु मेरा नाम संयोजक महोदय भूल गए थे। जब अन्त में संयोजक ने कहा कि अब सदर साहिब अर्थात प्रार्थी जी अपना कलाम पढ़ेंगे-मैं पास ही मंच पर बैठा था मैंने उनसे कहा अभी एक शायर रह गए हैं वह बोले कौन है बुलाओ, मैंने अपना उपनाम बताया कि "तस्कीन" साहब बाकि हैं, वे खिल खिलालकर हंस पड़े और मैं आमन्त्रित किया गया । उनका यह मानवीय पक्ष मैं कभी नहीं भूल सकता, मेरे बाद फिर उन्होंने अपना कलाम पढ़ा। एक चित्रकार की प्रदर्शनी देखने वे शिमला टाऊन हाल में गये वहां मैं मिल गया—बोले क्या बन रहा है मैंने कहा एक शेर ढ़ाल रहा हूं वे बोले मेरी शेर- मैंने कहा नहीं सब शायरों की शेर है। उन्होंने इस मूर्ति को देखने के लिए अपने सारे राजनैतिक कार्यक्रमों को रद्द कर दिया और निश्चित समय पर आये ।

इतने व्यस्त जीवन में भी वे एक सच्चे प्रेमी के रूप में मेरे कला पक्ष पर पधारे। यह मूर्ति दौलत सिंह पार्क की घड़े वाली मूर्ति थी, जिसे देखकर मुझे आज भी उनकी याद आती है ।

वे अतिसरल एक विशाल हृदय वाले मानव थे जिसकी तुलना में उनका राजनेतापन छोटा पड़ जाता है। वे सब का हृदय अपनी सरल मुस्कान से जीत लेते थे।

उनके पश्चात लगता है की हिमाचल ने एक कला प्रेमी खो दिया। कलाकारों कवियों व शायरों को मिलने के लिये वे हर समय तत्पर रहते थे। जिस विचारधारा को वे साकार करना चाहते थे वह नियति को मन्जूर नहीं था। वे एक शिल्पी थे जो समय को तराश कर इस प्रदेश को कुछ मूर्तिरूप देना चाहते थे।

मूर्तिकार-शिमला

एतावज्जन्म साफल्यं यदनायत्तवृत्तिता ।
ये पराधीन जन्मानस्ते चेज्जीवन्नि के मृताः ।।
— यहीं तक जन्म की सफलता है कि स्वाधीन वृत्ति हो ।
जो पराधीन जीवन वाले हैं, यदि वे जीवित हैं तो मरा कौन है ?

-व्यास

यद्यत्परवशं कर्म तत्तद्यत्नेन वर्जयेत् ।
यद्यदात्मवशं तु स्यात्तत्तसेवेत यत्नतः ।।
—जो कार्य पर वश में हो उन्हें प्रयास से त्याग दें।
जो अपने वश में हो, उन्हें प्रयास से पूर्ण करें।।

-मनुस्मृति

प्रार्थी जी बहुमुखी प्रतिभा के स्वामी थे

-- ईश्वर दत्त बाली

स्वर्गीय लाल चन्द प्रार्थी बहुमुखी प्रतिभा के स्वामी थे। ऐसा लगता था कि हिमाचल प्रदेश के लोगों की संस्कृति एवं जीवन का रूप स्वाभाविक रूप में उन में विद्यमान हो। वे उन इने-गिने उच्च राजनीतिज्ञों में से एक थे जिन्होंने राजनीति को ही जीवन का ध्येय न बना कर, मानव मूल्यों को जीवित रखने एवं अपनी पुरातन संस्कृति आज के जीवन के साथ समन्वित बनाये रखने के लिए समर्पित हो कर कार्य किया। प्रार्थी जी के अन्तिम दिनों में मेरा उन से निकट सम्बन्ध रहा। जब कभी भी मैं उन से मिला मैंने उन में नया उत्साह और लग्न देखी और कभी भी उन्हें निराश नहीं पाया। पिछले वर्ष जब वह जीवन और मृत्यु के बीच लड़ाई लड़ रहे थे, आक्सीजन उन्हें चढ़ रही थी उस अवस्था में भी मैंने देखा उन के चारों ओर पुस्तकें बिखरी पड़ी थी और जब भी उन्हें कुछ आराम मिलता वह पढ़ना और लिखना आरम्भ करते। उन की मृत्यु से दो महिने पहले जब मैं उन से मिला तो वह तीन पुस्तकें लिख रहे थे—पहली पुस्तक कुलूत देश की कहानी का दूसरा भाग जिस का पहला भाग वह पहले प्रकाशित कर चुके थे, दूसरी पुस्तक पहाड़ी भाषा का शब्द कोष और तीसरी पुस्तक उर्दू शायरी पर थी। उन की ये तीनों पुस्तकें अधूरी रही और वह असंख्य मित्रों और कला प्रेमियों से विदा लेकर हम से सदा के लिये अलग हो गये। उन्हें आयुर्विज्ञान में अथाह रूचि थी उन्होंने मुझ से अन्तिम इच्छा व्यक्त की थी कि उन्हें राजनीति में विशेष रूचि नहीं रही बल्कि वह अपने जीवन के शेष दिनों को हिमाचल प्रदेश में आयुर्वैदिक संस्थान स्थापित करने तथा हिमाचल प्रदेश की महान् पुरातन संस्कृति के विकास के लिए समर्पित करना चाहते हैं।

उन द्वारा लिखित पुस्तकों से भास होता है कि उन्होंने कितनी गम्भीरता से इतिहास और अनेकों पुरातन ग्रन्थों का अध्ययन किया और कैसे हिमाचल प्रदेश के लोगों की महान् संस्कृति का वर्णन किया हिमालय का वर्णन करते हुए अपनी पुस्तक कुलूत देश की कहानी में लिखते हैं।

"तुझ से कुछ जन्नते आदम का निशां मिलता है।
यह दिलावेज सकूं और कहां मिलता है ॥"

कितना प्यार था उन्हें इस मिट्टी से यह उन की इन पंक्तियों से स्पष्ट है।

"पत्थर की मूरती में समझा है तू खुदा है।
खाके वतन का मुझ को हर जर्रा देवता है" ॥

श्री प्रार्थी जी की पुस्तकों में भाव, भाषा और रचना शैली का अनूठापन स्पष्ट लक्षित होता है। परिष्कृत और सुसंस्कृत भाषा इन के हृदय की विशालता और भावना को व्यक्त करती है। इन की रचनाओं में करूणा, भावुकता और सरलता का सम्मिश्रण है और मानव जीवन का स्वाभाविक और सजीव चित्रण मिलता है। इन की रचनाओं से प्रकट होता है कि प्रार्थी जी ने हिमालय के हर कण में सुन्दरता का आभास पाया और महाकवि भट्टि की तरह उस सौंदर्य का वर्णन किया :—

न तज्जलं यन्न सुचारू पंकज न पंकजं तदयदलीन षट्पदम्।
न षट् पदो ऽसौ न जुगुञ्ज यः कलं न गुंजितं तन्न जहार यन्मन. ॥

अर्थात् ! इस सुहावनी शरद् ऋतु में ऐसा कोई सरोवर नहीं है जिस में सुन्दर कमल न खिले हों ऐसा कोई कमल नहीं जिस पर भ्रमर न बैठे हों। ऐसा कोई भौंरा नहीं जो गूंज न रहा हो और ऐसी कोई गुञ्जार नहीं जो मन को हर न लेती हो। पहाड़ी संस्कृति, कला एवं भाषा के लिए प्रार्थी जी की मृत्यु रात्रि एवं चन्द्रमा के वियोग की भांति है। श्री प्रार्थी जी की शोभा की केवल स्मृति रह गई है अपितु उन का अमर सन्देश संस्कृति, कला एवं पहाड़ी भाषा के उत्थान में हमेशा प्रेरणा देता रहेगा। उन की रचनाओं में भाषा की प्रौढ़ता एवं अर्थ गौरव उन के पांडित्य की याद दिलाता रहेगा और साहित्य प्रेमियों के हृदय को उन की रचनाए हमेशा सरस करती रहेंगी।

उदय बिल्डिंग,
संजौली, शिमला-६

श्री लाल चन्द प्रार्थी जी

-- लोकनाथ मिश्रा

श्रो प्रार्थी नाशाय कुलूत-राज्ञः
समाहूतो यो रघुवंशनाथः ।
सुसज्जितोऽ सौविजयोत्सवे रथे
तं देवदेवं शरण प्रपद्ये ।।

श्री प्रार्थी जी कुल्लू जनपद रूपी आकाश मण्डल के देदीप्यमान नक्षत्र रहे। जिन्होंने अज्ञानान्धकारावृत इस कुल्लू पर अपनी दिव्य दृष्टि डाली। जिस से इधर छिपे हुए स्थानीय इतिहास रूपी रतनों को खोज निकाला और सब के सामने रख दिया है। इस से पर्वत प्रदेश के सभी प्रशासकों तथा विद्वानों की आखें खुल गई हैं। दिन प्रति दिन नष्ट होने वाले स्व स्थानीय साहित्य की सुरक्षा के बारे अथवा लिखने के सम्बन्ध में लोगों के मन में रूचि और लगाव उत्पन्न कर दी है। उनकी मूलभूत प्रेरणानुसार ही आज हिमाचल सरकार ने सारे हिमाचल प्रदेश में सर्वेक्षण-कार्य आरम्भ कराया है। इस दृष्टि से उन्होंने जो "प्रार्थी" अवट अपने लिए चुना, वह सर्वथा समीचीन ही है।" प्र उपसर्ग पूर्वक अर्थ-याञ्चायाम् धातु से णिनी प्रत्यय करके प्राथिन (प्रार्थी) शब्द निष्पन्न होता है। जिस का अर्थ विशेष रूप से मांगने या विनय करने वाला होता है। श्री प्रार्थी जी ने धन, धान्य, भूमि आदि की याचना समाज से नहीं की। अपितु विस्मृत होने वाले स्थानीय पुरातन इतिहास, साहित्य, लोकोक्ति, वाग्धारा, पशु, पक्षी तथा वनस्पति आदि के नामों को स्मृत या जीवित रखने की माँग की है। क्योंकि आजकल अंग्रेजी पढ़कर तदनुकूल साहित्य को याद रखते हैं, और व्यवहार में भी उन्हीं शब्दों का प्रयोग करते हैं। अपनी भाषा, शब्द, इतिहास व साहित्य को सर्वथा भूलते जा रहे हैं। पठित समाज में अपनी मातृ-भाषा के प्रति अश्रद्धा व लज्जा के भाव पनपते हुए दिखाई देते हैं। इसे वे अनपढ़ों की अटपटी भाषा मानते हैं। समाज की इस विपरीत बुद्धि का अथच पतनशील प्रवृत्ति का उन्होंने परिमार्जन किया है। क्षेत्रीय देवी देवताओं को महत्व दिया है।

प्रार्थी प्रार्थयते देवान् प्रार्थी प्रार्थपते जनान् ।
प्रार्थी प्रार्थयते भाषां तस्मात्प्रार्थी विशिष्यते ।।

लोकमान्य तिलक जी ने मराठी में गीता रहस्य लिखा, श्री रविन्द्रनाथ जी ने बंगला में गीतांजलि को अंकित किया था। श्री चरणतीर्थ जी महाराज ने गुजराती भाषा में साहित्य निर्माण किया था। श्री तुलसी दास जी ने भी अपनी रचनाओं में अधिकतर अवधी भाषा के शब्द प्रयुक्त किए हैं। इसी प्रकार देश के अन्यान्य विद्वानों ने भी अपनी अपनी क्षत्रीय भाषाओं व साहित्य को महत्व दिया है। तो "जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी" के आधार पर अपनी भाषा तथा इतिहास को प्रार्थी जी प्राथमिकता क्यों न देते। उन्होंने अपनी बुद्धि योग्यता और मतगणना से प्राप्त अधिकारों को जननी, जन्मभूमि के चरणों पर पूर्णरूप से न्यौछावर कर दिया है। अनेक असहायों की सहायता की। बेरोजगारों को रोजगार पर लगाया है। लेखक तथा विद्वानों का सम्मान किया है।

उदात्तचरित ग्ररू दयाभाव का,
ग्रापमें था सम्मिश्रण ऐसे।
दीन जनों के लिए चाहिए,
भूपर महापुरूष जैसे ॥

विवेकी उन उदात्त चरित महापुरुष को मेरी आत्मा कोटिशः धन्यवाद देती है। आज का तथा आगामी समाज उनका चिरऋणी रहेगा। आगामी बुद्धि जीवियों, प्रशासनाधिकारियों को भी भगवान ऐसी ही प्रज्ञा प्रदान करें।

परम श्रद्धेय श्री लालचन्द जी प्रार्थी वैसे सम्पूर्ण हिमाचल का दौरा लगाते रहे। निर्मण्ड भी कभी कभी आते रहे। एक बार पोकुधार निर्मण्ड के 'शाड़नू' मेले के उदघाटन के समय वे नाटी के धूर या आरम्भ में लगे थे। फिर उन्होंने स्थानीय पुरातन साहित्य को जीवित रखने के सम्बन्ध में भावपूर्ण व्याख्यान दिया था। अपनी रीति-रिवाज तथा मेलों का महत्व बताया था। निर्मण्ड-इतिहास के बारे में उन्हें यहां के कई व्यक्तियों से जानकारी मिली, परन्तु यहां के यज्ञ के साथ भुण्डा शब्द का क्या सम्बन्ध है अथवा इस यज्ञ का भुण्डा नाम क्यों पड़ा? के विषय में उन की जिज्ञासा कहीं शान्त नहीं हुई, फिर मेले के बाद श्री प्रार्थी जी ने मुझे अरसु बुलाया। रात को बंगले में जो हमारा शंका समाधान हुआ, उससे उन्हें पूरी सन्तुष्टि हुई-भण्डासुरं हन्तुं कृतं यज्ञ भुण्डा इति प्रसिद्धम्। पर्वतोय अनभिज्ञ ऐकान्तिक वातावरण में उत्पन्न होकर भी पंजाब जैसे चण्ट खुंखार प्रान्त के उपमन्त्री रहे। इसपे लोगों को पता लग गया कि—सर्वतोभ वेन पिछड़े हुए पहाड़ी इलाकों में भी कई गुदड़ी के लाल छिपे हुए हैं। जंगलात और स्वास्थ्य मन्त्री रह कर सब जगह कुल्लू की प्रतिष्ठा का प्रकाशन किया। अपनी जन्म भूमि की धाक सारे भारत में जमा दी है। पर्वतोय खण्ड के प्रति प्रशासकों की आंखे खोली हैं।

प्रार्थी जी एक योग भ्रष्ट पुरुष थे। "शुचिनां श्रीमतां गेहे योग भ्रष्टोऽभिजाते"। उनका आत्म बल परिपुष्ट था। वे अपने सिद्धान्त के पक्के थे। सदा अपने उद्देश्य पर आरुढ़ रहते थे। धार्मिक प्रवृति देशभक्ति, सेवा परायणता आदि गुण उन में कूट कूट कर भरे हुए थे। वे व्याख्यान में 'वक्ता वड़ जोगी' थे। उनके ओजस्वी भाषाणों को सुन कायरों को भी जोश आता रहा। तभी लोग उन्हें शेरे कुल्लू कहते रहे। १९४७ में स्वतन्त्रता प्राप्ति अवसर पर प्रार्थी जी ने बड़े धैर्य, सूझबूझ से देश समाज के काम किये थे। वे संगीत-कला के भी मर्मज्ञ रहे। इसके तीनों अंग गायन, वादन नर्तन में बड़े निपुण थे। कभी कभी यथावसर उनका प्रदर्शन देखकर दर्शकगण दंग रह जाते थे। उन्होंने स्वक्षेत्रीय वाड्मय पुनरूज्जीव रूपी जिस प्रस्ताव को समाज के सामने रखा, पहले स्वयं ही उस पर तन, मन, धन से आरूढ़ रहे। तब लोगों को उसकी प्रेरणा दी। भविष्य में भी इस विषय में लोगों के मस्तिष्क में जिज्ञासा और उत्साह के बीज बिखेर दिये हैं। भगवान राघवेंद्र जी उन की आत्मा को सुख, शन्ति प्रदान करें। कभी कभी हम पथ भ्रष्ट जनों को पुनः सन्मार्ग में लाने के लिए ऐसी दिव्य विभूतियों को परमात्मा हमारे बीच भेजते रहा करें। प्रार्थी जी यथार्थ में ऋषि थे। "ऋषि मन्त्रद्रष्टारः"। मैं उनके ऋषिरूप को सादर प्रणाम करता हूं।

उनका लम्बा डीलडौल हंसमुख चेहरा
ओजस्विनी आकृति स्मरणीय है।

दाहिन में तो छड़ी धरे हैं, बायें कुलूत देश कहानो।
काली अचकन सफेद पैजामा, धारे हैं मनमानो॥
दाढ़ी जटा अरू ऐनक सोहे, बोले मधुर जो बानी।
लाल चन्द प्रार्थी को प्रणति, लोकनाथ करता श्रद्धानी॥

– शास्त्री, निर्मण्ड

एक सुपना–एक सच्चाई

–श्री लाल चन्द प्रार्थी

प्रार्थी जी ने एक पहाड़ी प्रदेश या विशाल हिमाचल बनाने का स्वप्न लेकर पूर्व-पुनर्गठित पंजाब में आन्दोलन चलाया था। तब उन्होंने डाक्टर वाई० एस० परमार मुख्य मन्त्री की अध्यक्षता में रामपुर लवी में आयोजित एक कानफ्रेंस में निम्नलिखित कविता पढ़ी थी। इस ने लोक गीत का रूप धारण किया और तब से बहुत लोक प्रिय है :—

असाँ पहाड़ी, पहाड़ी म्हारा देस ओ।
चम्बा कुल्लू काँगड़ा, किन्नौर इक देस ओ।
ऊना, देहरादून, हिमाचल प्रदेश ओ।
इक म्हारा खाण पीण इक परवार ओ।
इक बोल चाल इक अंगण दुआर ओ।
इक म्हारे सुपणे दा छोटा संसार ओ।
इक म्हारे रसम रुआज इक भेस ओ।
लाहुल सपिति हिमाचल परदेस ओ।

साँझे देवी देऊ साँझा रेणुका रा सर ओ।
नैनां ते जुआला, चिन्ता, अम्बिका रा घर ओ।
कण कण बोले महादेव हर हर ओ।
सांझे देवटसिद्ध, बालकरूपी मनम्हेस ओ।
बिलासपुर, मण्डो, हिमाचल परदेस ओ॥

कुल्लू रा दुशहरा चम्बे मिंजरा दे मेले ओ।
कांगड़े सिरमौर छिंजा घुलदे गुरू चेले ओ।
रामपुर किट्टे हुंदे पहाड़ी अलबेले ओ॥
चिलम नरेलू हत्थे मूंढे पट्टू खेस ओ।
शिमला, कण्डाघाट हिमाचल परदेस ओ॥

सांझे पौण पंछी बण सांझे नदी नाल ओ।
टोए टिब्बे रकड़ पैली बिखड़े कुआल ओ।

चम्बे रा चुगान साँझा साँझी नैनीताल ओ।
कोई न लड़ाई इत्थु, शान्ति दा संदेस ओ।
देशा रा रखवाला मेरा पहाड़ी परदेस ओ।

माँझे म्हारे सुपणे ताँ साँझी म्हारो निंद ओ।
साँझी म्हारी राम राम साँझी जय हिन्द ओ।
सांझी परदेसियां सुकाई म्हारी जिंद ओ।
लुटटी खांदे होया काया जो कलेस ओ।
महासू, सिरमौर, हिमाचल परदेस ओ।

पापियां बछोड़ी म्हारी मितरी पराणी ओ।
अग्ग दिन्दे इक्की हत्थे दूजे हत्थे पाणी ओ।
पल्ले नहीं पौंदी करदे गल अणजाणी ओ।
बचो पहाडी लोको। सुख रक्खें महेस ओ।
पांगी भरमौर हिमाचल परदेस ओ॥

रही नी हुन्दा जित्थू दिल्ल नियों मिल्लदा।
सेही बी नी हुन्दा जूण दन्द रहे हिल्लदा।
सूने रा संगार करी फुल्ल नयों खिल्लदा।
मान तां मरियादा बाझी मरना है हमेस ओ।
राजी रहणा बणना जद पहाड़ी परदेस ओ।

जिमीं तेरो लैणी लोकां टिड बी सुआरनी।
मास तेरा खाई लैणा हडडी गंगा तारनी।
बाग उन्हां लाइ लैणे जिद तेरी मारनी।
भोलेआ माण्हुआ तिजो होणा परदेस ओ।
मोड़ बागाँ। चल्ल हिमाचल परदेस ओ॥

व्यास सतलुज दा इह नीर नहीं सुकदा।
पहाड़ीयां दा जोश ते उफान बी नी रूकदा।
पहाड़ी परदेस बाझी झगड़ा नी मुकदा।
झूठे मूठे बन्नेआँ री देणी पट्टी मेस ओ।
जिंदाबाद कुल्लू। हिमाचल परदेस ओ॥

अज मिल्ली लोहू दी सुगन्द असां खानी ओ।
लोकां बिच रही के न इज्जत गुआणी ओ।
लालचन्दा जोड़ो लैणी मित्तरी पराणी ओ।
म्हारा नारा। चल्लो हिमाचल परदेस ओ।
म्हारा देस बोलो हिमाचल परदेस ओ॥

शव-यात्रा

भूतपूर्व मुख्य मन्त्री डॉ. यशवन्त सिंह परमार
के साथ लाल चन्द प्रार्थी

१. निदेशक शिक्षा विभाग, हि. प्र. द्वारा पत्राङ्क ई. डी. ऐन.-एच. (8)-6 (3) 1/75, 24 फरवरी, 1975 के अनुसार प्रदेश के समस्त कालेजों, पाठशालाओं व जिला पुस्तकालयों के लिए स्वीकृत।

२. प्रदेश की समस्त पंचायतों के लिए निदेशक, पंचायती राज विभाग, हिमाचल प्रदेश सरकार द्वारा स्वीकृत।

हिमाचल कला-संस्कृति भाषा अकादमी, क्लिफ-एन-डो एस्टेट, शिमला द्वारा प्रकाशित तथा
हिमाचल लिथोग्राफर्स हिमलैंड होटल, शिमला-१७१००१ द्वारा मुद्रित।